प्रकाशक :

मदनगोपाल अग्रवाल
प्रमुख मंत्री, अखिल
भारतीय राष्ट्रीय कॉंग्रेसका
६४ वाँ अधिवेशन,
सीताबर्डी, नागपुर.

●

चित्रकार :
व्ही. एन्. ओके.

●

प्रथमावृत्ति १९५८

●

मुद्रक :
दा. त्र्यं. जोशी
बी. ए. (टिळक)
व्यवस्थापक चित्रशाला प्रेस,
१०२६ सदाशिव, पुणे २.

हिंदुस्थानकी आजादीके ही लिए नहीं बल्कि दुनियाके
शांततापूर्ण जीवन एवं समृद्धिपूर्ण विकासके लिये

अनत्याचारी असहयोग

के दिव्य मंत्रकी घोषणा नागपुरमें १९२० में
संपन्न हुए कॉंग्रेसके अधिवेशनमें जिन्होंने की,
और तबसे देशने जिनके सत्यनिष्ठ तथा
अहिंसामय नेतृत्वको स्वीकार किया है, उन

महात्मा गांधी

की पुण्य पावन स्मृतिमें नागपुरमें फिर १९५९ में
होनेवाले कॉंग्रेस-अधिवेशनके उपलक्ष्यमें
इस अवधिके इतिहासकी एक झलक
दिखानेवाला यह पुस्तक-पुष्प
समादर तथा कृतज्ञताभावसे

समर्पित

सुवर्णोत्सवका शिला-लेख

बंबईमें काँग्रेसका पहला अधिवेशन जिस स्थानपर हुआ, उसके उस जन्मस्थानमें १९३५ में उसके सुवर्ण-महोत्सवके अवसरपर एक शिलालेख बिठाया गया है। उसपर निम्नलिखित अंग्रेजी मजमून खुदवाया गया है।

In this Historic Hall
On the 28th December 1885
A band of gallant Patriots laid the foundation of.
The Indian National Congress, which during these fifty years
has-been built up, stone by stone, tier by tier.
By the faith and devotion, courage and sacrifice
of countless men and women, as the pledge and symbol
of their principal purpose to secure to India
Their motherland her legitimate birth-right of Swaraj.
This tablet is placed to commemorate the occasion of its
Golden Jubilee.
28th December 1935.

इस इतिहासविख्यात भवनमें
२८ दिसंबर १८८५ ई० को
कई वीर देशप्रेमियोंने मिलकर भारतीय राष्ट्रीय सभा की नींव डाली,
जो इधर ५० वर्षोंसे पत्थर पर पत्थर, ईंट पर ईंट चढ़ाकर रचित हुई,
जिस रचना में अनगिनत आत्माओंने अपनी श्रद्धा, भक्ति, धीरज,
और त्याग का मसाला भर दिया,
जो त्याग उनके प्रमुख ध्येय का प्रतीक रहा,
जो ध्येय उनकी अपनी मातृभूका जन्मसिद्ध अधिकार स्वराज्य था।
यह शिलाखंड उस राष्ट्रसभाके सुवर्ण समारोहके अवसरपर बैठाया गया है।

प्राक्कथन

नागपुरमें अगले महीनेमें होनेवाले काँग्रेसके ६४ वें अधिवेशनके उपलक्ष्यमें इस पुस्तकको प्रकाशित करते हुए मुझे खुशी होती है।

१. इस अधिवेशनके अवसरपर तरह तरहके काम किये जा रहे हैं। उनमें कुछ काम तात्कालिक है, लेकिन उनका महत्त्व अस्थायी नहीं है। मुझे इसका संतोष होता है कि हमारे नागपुर शहरके लिए इनमेंसे कई काम हमेशाके लिए फायदेमंद रहेंगे। पिछले तीन-चार महीनेमें लगभग तीस-चारसौ कार्यकर्ताओंने रातदिन अथक परिश्रम करते हुए अभ्यंकर-नगरका निर्माण किया है जिसमें सडकें, बिजलीकी रोशनी, पानीके नल आदि सभी सुविधाओंका प्रबंध सुचारू ढंगसे किया गया है। उससे नागपुरवाले सदाके लिए लाभान्वित रहेंगे। उसी प्रकारके स्थायी लाभोंकी तालिकामें स्थान पाने योग्य शब्दशिल्प प्रस्तुत पुस्तकके द्वारा प्रकट हो रहा है। इसपर मुझे खुशी है।

२. महर्षि दादाभाईसे लेकर महात्मा गांधीजीतक विभिन्न मजहबों, वर्गों और प्रांतोंकी महान् आत्माओंने कॉंग्रेसको एक बड़ी और ताकतवर संस्था बनाया, जिससे वह हिन्दुस्थानकी राजनीतिक आजादीका एक जरिया बनी। उसने इस देशके राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और नैतिक इस चतुरस्र स्वतंत्रताकी प्राप्तिका प्रण किया है। आम लोगोंकी आशाओं और आकांक्षाओंको वह प्रकट करती है। और उन्हें साकार रूप भी प्रदान करती है। आज भी कॉंग्रेस गरीबोंकी माँ है, पद-दलितोंकी वह छत्रसी है। मैं मानती हूँ कि इस एक शब्द 'कॉंग्रेस' में गीताका प्रामाण्य तथा गंगाजीकी पवित्रता भरी हुई है।

इसके तिरंगे झंडेके नीचे सैंकड़ों-हजारों भारतीयोंने कुर्बानियाँ कीं, दंडोंकी मार फूलोंकी वृष्टिकी तरह सही, अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया, तथा कई बार लाखों नर-नारियोंने जेलखानोंकी यमयातनाओंको भुगत लिया। उन सबके एकत्रित पुण्यलाभके कारण अपना देश आजाद हो गया, और करोडों लोगोंका गुलामीसे छुटकारा हुआ। अनगिनत मूक व्यक्तियोंके उद्धार और विकासके लिए प्रयत्नशील कॉंग्रेसका पिछले चालीस वर्षोंका इतिहास इस पुस्तकमें थोडेमें, लेकिन आधार-पूर्वक दिया हुआ है। मैंने तो अभीतक इतने संक्षिप्त रूपमें दूसरी किसी भी भाषामें लिखा हुआ कॉंग्रेसका इतिहास नहीं देखा।

३. इस इतिहासमें नागपुरके कार्यको मुख्य स्थान दिया जाना स्वाभाविक है। १८९१ में नागपुरमें पहली बार कॉंग्रेसका अधिवेशन हुआ। प्रारंभमें दी हुई जानकारीसे उस अधिवेशन और उस जमानेका स्मरण हो आता है। लेकिन 'नागपुर-कॉंग्रेस' कहते ही किसीको भी १९२० के अधिवेशनका स्मरण हो आता है।

४. उस अधिवेशनका चित्र इस छोटीसी पुस्तकमें विस्तारसे तथा यथार्थ रूपमें शब्दांकित किया गया है। उसे पढ़ते हुए पुराने कार्यकर्ताओंकी आँखोंके सामने उस समयका दृश्य असली रूपमें खड़ा हो जाएगा, और नये कार्यकर्ताओंके ध्यानमें आ जाएगा कि उस अवसरपर काँग्रेसके विधान, कार्यक्रम तथा सिद्धान्तोंमें कितना क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ! महात्माजी तथा जमनालालजी, मालवीयजी और मोतीलालजी, दासबाबू और पालबाबू, आदि महान् नेता, उन नेताओंकी बहस, उनकी कार्य-शीलता, उनकी लगन, उनके त्याग, ध्येयनिष्ठा, चातुर्य, सहिष्णुता, परिश्रम आदि गुणोंका तारामंडल नयी पीढ़ीके सामने दमकता रहेगा। मुझे उम्मीद है कि भविष्यमें वह मार्गदर्शक सिद्ध होगा।

५. नागपुरमें संपन्न हुए इन दो अधिवेशनोंके अतिरिक्त १९२० के बादके अधिवेशनोंकी जानकारी इस पुस्तकमें थोड़ेमें दी गयी है। इनमेंसे विशेष महत्त्वपूर्ण अधिवेशनोंके द्वारा काँग्रेसको कौनसी नयी दिशा मिली इसका भी संकेत किया गया है। १९४७ के उपरांतका स्वातंत्र्य-कालीन काँग्रेसका इतिहास ताज़ा है। इसलिए उसपर एक सरसरी निगाह डाली गयी है। फिर भी पिछले चालीस वर्षोंमें काँग्रेसके जीवनमें, विशेषकर उसके नागपुरमें बीते जीवनमें जो महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटीं और आंदोलन हुए उनका सविस्तर वृत्तान्त तथा समालोचन इसमें दिया गया है। काँग्रेस-जनों तथा औरोंको भी वह पठनीय लगेगा।

६. मूल मराठी पुस्तकके लेखनके लिए पूनाके श्री. दा. न. शिखरे जैसे लेखक मिले इसे मैं एक सुयोग मानता हूँ। लो. तिलक, म. गांधी, पं. नेहरू आदि काँग्रेस नेताओंकी जीवनियाँ उन्होंने लिखी हैं, जो मशहूर हो गयी हैं। इसके अलावा पिछले तीस वर्षोंसे

वे पत्रकारिताके क्षेत्रमें कॉंग्रेसकी सेवा करते रहे हैं, तथा गत बारह वर्षोंसे 'महात्मा' मासिक पत्रिकाका संचालन ध्येयनिष्ठासे करते रहे हैं। कॉंग्रेसके प्रति निष्ठाभाव रखनेवाले इस सिद्धहस्त लेखकने पुस्तक तैयार करना स्वीकार किया और उस कामको नियत समयमें पूरा किया, जिसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देती हूँ।

हिन्दी अनुवाद करनेमें 'महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पुणे' के कार्यकर्ताओंने लेखककी सहायता की और समयके भीतर यह काम कुशलतासे पूरा करनेमें योग दिया इसलिए वे भी धन्यवादके पात्र हैं।

७. यह प्रायः इतिहास बतलानेवाली पुस्तक है। फिर भी कहीं कहीं मत-प्रदर्शन पाया जाता है। वह लेखकका निजी मत है, उसके लिए स्वागत–समिति कतई उत्तरदायी नहीं है। पुस्तकमें जितना मज़मून दिया गया है उससे कई गुना ज्यादा मज़मून नहीं दिया जा सका। पृष्ठसंख्याकी सीमितताको ध्यानमें रखते हुए श्री. शिखरेने जरूरी मज़मून उचित ढंगसे तथा उचित मात्रामें दिया है। यह मेरी अपनी राय है और मैं मानती हूँ कि इसके बारेमें हरएक पाठककी भी यही राय होगी।

अभ्यंकर-नगर, नागपुर
ता. १० दिसंबर, १९५८

गोपिकादेवी कन्नमवार
स्वागताध्यक्ष,
कॉंग्रेसका ६४ वाँ अधिवेशन

• • •

नागपुर से नागपुर

काँग्रेसके अधिवेशनोंकी तालिका

	स्थळ	अध्यक्ष
१९२०	नागपुर	विजयराघवाचार्य
१९२१	अहमदाबाद	दास (जेलमें थे, इसलिए हकीम अजमलखांन)
१९२२	गया	चित्तरंजन दास
१९२३	कोकोनाडा	मौ. महंमदअली
१९२४	बेळगांव	म. गांधी
१९२५	कानपुर	सौ. सरोजिनी नायडू
१९२६	गौहत्ती	श्रीनिवास अय्यंगार
१९२७	मद्रास	डॉ. अन्सारी
१९२८	कलकत्ता	पं. मोतीलाल नेहरू
१९२९	लाहोर	पं. जवाहरलाल नेहरू
१९३१	कराची	सरदार वल्लभभाई पटेल
१९३४	मुंबई	डॉ. राजेंद्रप्रसाद
१९३६	लखनौ	पं. जवाहरलाल नेहरू
१९३६	फैजपूर	पं. जवाहरलाल नेहरू
१९३८	हरिपुरा	सुभाषचंद्र बोस
१९३९	त्रिपुरी	सुभाषचंद्र बोस
१९४०	रामगड	मौ. आझाद
१९४६	मीरत	आचार्य कृपलानी
१९४८	जयपूर	डॉ. पट्टाभिसीतारामय्या
१९५०	नाशिक	पं. पुरुषोत्तमदास तंडन
१९५१	दिल्ली	पं. जवाहरलाल नेहरू
१९५३	हैद्राबाद	पं. जवाहरलाल नेहरू
१९५४	कल्याणी	पं. जवाहरलाल नेहरू
१९५५	आवडी	उत्संगराय ढेबर
१९५६	अमृतसर	उत्संगराय ढेबर
१९५७	इंदूर	उत्संगराय ढेबर
१९५८	प्राग्ज्योतिषपुर	उत्संगराय ढेबर
१९५९	नागपुर	उत्संगराय ढेबर

अनुक्रम

• • •

१

प्रगतिके पाँच पर्व

" शुरू शुरू में इन सभाओंका खेल गुड़ियोंके खेल-सा होगा; लेकिन इसके विना उन्हें पार्लमेंटका स्वरूप कभी प्राप्त नहीं होगा!"

केसरी (ता. ८ दिसंबर १८८५)

नागपुर नगरी सचमुच ही भाग्यशाली है। राष्ट्र-के इतिहासके महत्त्वपूर्ण मौकोंपर काँग्रेसके अधिवेशन बुलानेका भाग्य उसे प्राप्त हुआ है। इस साल जो अधिवेशन वहाँ होने जा रहा है वह वहाँ होनेवाला तीसरा अधिवेशन है। सबसे पहला अवसर सन १८९१ में मिला। उसके बाद सन् १९२० में नागपुर में जो काँग्रेसका अधिवेशन हुआ उसे 'भारतका थर्मापिली' कहकर सम्मानित किया जाता है। उस अधिवेशनसे लेकर राष्ट्रसभामें–और समूची राष्ट्रचर्यामें—आमूलाग्र क्रांतिका सूत्रपात हुआ। अब तीसरी बार नागपुरमें काँग्रेसकी बैठक होगी, वह भी राष्ट्रीय विकासके एक महत्त्वपूर्ण अवस्थान्तर के मौके पर।

इस प्रकारके अवस्थान्तर काँग्रेसकी ७५ सालकी जीवनावधिमें कम-से कम पांच बार हो गये हैं। पराधीन भारतके अन्तस्तलमें गुप्त रूपसे दहकते हुए असंतोषको बाहर लानेके एक 'द्वार' (Safety valve) के तौरपर सन् १८८५ में बम्बईमें काँग्रेसकी प्राण-प्रतिष्ठा की गयी।

उस बैठकमें ७२ प्रतिनिधि उपस्थित थे। मि. ह्यूम एक सेवानिवृत्त आय्. सी. एस्. अधिकारी उसके जनक थे। इतनाही नहीं, उस समयके गव्हर्नर-जनरल लॉर्ड डफरिनके भी मार्गदर्शनका लाभ उसे मिला था। ह्यूम आदि चाहते थे कि काँग्रेसके अधिवेशनोंमें केवल सामाजिक विषयों-की ही चर्चा की जाय, लेकिन डफरिन महाशयने सलाह दी कि वह देश-के राजनीतिक विचारोंका मुख बने, और उसका कायाकल्प ही बना दिया। धीरे धीरे आगामी भारतीय पार्लमेंटके बीजका स्वरूप वह धारण करती गयी। कलकत्तेमें काँग्रेसका दूसरा अधिवेशन संपन्न हुआ। उस अवसरपर लॉर्ड डफरिनने अपने राजभवनमें उसके प्रतिनिधियोंको उद्यानोपाहार बड़े ठाटबाटसे प्रदान किया।

इस प्रकार जिसे अपने जातकर्मके वक्त गव्हर्नर-जनरलका वरद हस्त मिला, उसे अगर अन्यान्य प्रान्तोंके गव्हर्नरमहाशयोंके आशीर्वादोंका लाभ हुआ हो तो आश्चर्य ही क्या? तीसरे अधिवेशनके प्रतिनिधियोंका सत्कार गव्हर्नर-मद्रासने किया। प्रथम तीन अधिवेशन इस प्रकार गव्हर्नरोंकी छत्रच्छायामें—प्रत्यक्ष उनकी उपस्थितिमें—ही हुए। इस वजहसे प्रथम प्रस्ताव राजनिष्ठाविषयकही रहा। महर्षि दादाभाई नौरोजी-ने भी सन् १८८६ में कलकत्ता काँग्रेसके अध्यक्षके नाते घोषित किया कि हम भारतीयोंकी नस-नसमें राजनिष्ठा व्याप्त है (We are loyal to the back-bone)। इसके बाद काँग्रेसका तेज बढ़ता गया। अरुणोदयके समय सूरजका आरक्त बालबिंब देखनेमें जो लोग आनंद महसूस करते हैं, वेही जब वही सूरज ऊपर-ऊपर चढ़ने लगता है, और अपना प्रखर प्रकाश फैलाता है तब उसकी ओर आँख उठानेकी भी हिम्मत नहीं कर सकते, बल्कि उन्हें चिंता करना पड़ता है कि इस प्रखर तापका निवारण कैसे किया जाय। सरकारकी वही हालत हुई। वह काँग्रेसका विरोध करनेपर तुल गयी।

सन् १८८७ में मद्रासके अधिवेशनमें एक सरकारी अधिकारी उपस्थित रहे, इसलिये सरकारने उनसे २० हजार रुपयेकी जमानत माँग ली। १८९० में हिन्दुस्थान सरकारने अपने सेवकोंको प्रेक्षककी हैसियतसे भी उपस्थित रहनेके बारेमें मनाही जाहीर की। बंगालके

गव्हर्नरके नाम भेजी हुई सात निमंत्रण-पत्रिकाएँ उनके सेक्रेटरीने वैसे-ही लौटा दीं । और १८९१ में हिन्दुस्थान सरकारने एक परिपत्रक-द्वारा एतद्देशीय रियासतोंमें भी अपनी यह विरोधी नीति थुसेड़ दी ।

उस वर्ष नागपुर अधिवेशनमें इस सरकारी नीतिका कॉंग्रेसद्वारा निषेध किया गया । ना. गोखले जैसे कोमल प्रकृतिवाले राजनीति-धुरंधरने भी जिसको बादशाह औरंगजेबकी उपमा प्रदान की, उस लॉर्ड कर्झनने सन् १९०० में भारत-मंत्रीके पास अपनी दुर्वासना प्रकट की कि कॉंग्रेस अब निश्चिततासे अंतिम घडियाँ गिन रही है । उसको शांत कब्रमें स्थापित करनेकी मेरी प्रखर महत्त्वाकांक्षा है ।

(The Congress is tottering to its fall and one of my great ambitions, while in India, is to assist it into a peaceful demise.)

सभापर्व

सरकारकी हाँ में हाँ मिलानेवाले तथा उसकी भलमनसीपर विश्वास रखनेवाले नरम दलके नेता सन् १९०५ तक कॉंग्रेसका नेतृत्व बेरोकटोक करते रहे । लेकिन लॉर्ड कर्झनकी वंग-भंगकी नीतिने नरम दलवालोंके निष्कंटक नेतृत्वको डॉवाडोल बना दिया । वंग-भंगके प्रक्षोभमेंसे वीर, तेजस्वी तथा प्रतिकार-प्रवण ' राष्ट्रीय दल ' पैदा हुआ । सरकारके चरणोंकी अपेक्षा आम जनताके बाहुबलपर उसका अधिक भरोसा था । नरम दल तथा राष्ट्रीय दलमें विवाद्य विषय यह था कि सन १९०७ के कॉंग्रेस अधि-वेशनका अध्यक्ष कौन बने । नागपुरके नरम दलके नेताओंने नागपुर शहरमें अधिवेशन संपन्न करनेका निमंत्रण दिया तथा स्वागत-समितिकी भी स्थापना की । लेकिन इस समितिके अधिकतर सदस्योंकी, लो. तिलकजीको, अध्यक्षके नाते चुननेकी इच्छा थी । अतः नरमदल-वालोंने नागपुरके अधिवेशनका सूरतमें स्थलांतर किया । लेकिन इससे कॉंग्रेसकी फूट कम तो नहीं हुई बल्कि वह सूरतमें उत्कट तथा उग्र रूपमें प्रकट हुई जिससे कॉंग्रेसके टुकड़े हुए ।

सन् १९०८ में नागपुरके राष्ट्रीय दलके नेता नागपुर शहरमें कॉंग्रेस अधिवेशन संपन्न करनेके लिये फिरसे कमर कसकर तैयार हुए । अधिवेशनकी

दृष्टिसे कार्यारंभ भी हुआ। लेकिन इस समय ब्रिटिश सरकारने उसमें रोड़ा अटकानेका पाप किया। दिसम्बर मासके मध्यमें सरकारने १४४ धारा घोषित करके अधिवेशनको रोक दिया। उस समयसे नरम दलके नेता कॉंग्रेसके बड़े अधिवेशनके बदले एक छोटीसी परिषद् बनाने लगे। लेकिन वह 'नरम दलवालोंकी मजलिस' ही साबित हुई। राष्ट्रीय दल तथा सामान्य जनताकी सहायतासे वह वंचित रही।

विराटपर्व

उस समय कौन नेता था जो कॉंग्रेसको जनताभिमुख एवं सामर्थ्यसंपन्न बनाता? और जो था वह भी कोसों दूर मांडलेके कारावासमें छः वर्षोंके लिए बंदी किया गया था। हमारा यह नेता सन् १९१४ में बंधमुक्त होकर लौट आया तब समूचे राष्ट्रमें नये विचारों तथा नये चेतनाकी हवा संचारित हुई। इसका फल यह हुआ कि सन् १९१६ में लखनौमें कॉंग्रेसका अधिवेशन हुआ। सूरत अधिवेशनमें जो फूट पैदा हो गयी थी वह लखनौमें नष्ट होकर प्रागतिक तथा राष्ट्रीय दलमें एका हो गया। सन् १९१६ से चार वर्षोंका काल कॉंग्रेसपर लो. तिलकके अधिराज्यका काल था।

लो. तिलकजी मांडलेके कारावाससे बंधमुक्त होकर वापिस आनेके समय देशमें नवचेतना पैदा हुई। तथा नागपुरके राष्ट्रीय दलमें भी एक नयाही उत्साह निर्माण हुआ। इस दलके नेताओंकी, सन् १९१६ से नागपुरमें अधिवेशन संपन्न करनेकी इच्छा थी। लेकिन सन १९१८ में लोकमान्यजी इंग्लैंड गये थे। सन् १९१९ में उनके लौट आतेही उनका आशीर्वाद प्राप्त कर नागपूरकर सज्जनोंने अपने प्रांतमें अधिवेशन लेना तय किया और उसका निमंत्रण अमृतसर अधिवेशनमें दे भी दिया।

यह निश्चय पक्का करनेके पूर्व तथा अधिवेशनका निमंत्रण घोषित करनेके पहले मध्यप्रदेश के हिन्दी–मराठी भाषा-भाषियोंके नेताओंकी सम्मति ली गयी थी। लेकिन ज्यों ज्यों अधिवेशन संपन्न करनेका समय दृष्टिगोचर होने लगा त्यों त्यों मराठी तथा हिन्दी भाषियोंमें मतभिन्नता दिखाई देने लगी। विवाद बढ़ गया और खटपट भी हो गयी। कॉंग्रेस अधिवेशन नागपूर में हो या जबलपूर में? इस प्रश्नसे प्रथमग्रासे मक्षिकापात हुआ।

इस मामूली प्रश्नमें ही तैयारीका आधा वर्ष बरबाद हुआ। कोई किसी निर्णय तक पहुँच न पाया। दोनों भाषाओंके कट्टर अभिमानी अधिवेशन-स्थानको अपनी अपनी ओर खींचने लगे। इस खींचातानीको रोकनेके लिए 'अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी' को बीचमें हस्तक्षेप करना पड़ा। उसने यह निर्णय दिया कि काँग्रेसका अधिवेशन नागपुरमें ही हो।

ऊपरवाले निर्णयसे अपनी जीत समझकर मराठी भाषियोंके हौसले बढ़ गये तथा अपना मनोभंग समझकर हिन्दी भाषी काँग्रेससे दूर रहे। स्वागत-समितिके कुछ कार्यकर्ताओंने जब यह अनुभव किया कि हिन्दी भाषी निधि इकट्ठा करनेमें सहायता नहीं दे रहे हैं, तब उन्होंने १०००।५०० रु. कर्ज के तौरपर देकर निधिकी रकम १०,००० तक शुरूमें ही इकट्ठा की। इसके बाद जुलाई से अधिवेशनकी तैयारी जोरसे शुरू हुई। वरुण देवताकी अवकृपा भी इस तैयारीको रोक न सकी। लेकिन सब कार्यकर्ताओंके उत्साहपर पानी फेरनेवाली एक घटना अगस्त महीनेमें ही घटित हुई और एक महान् आपत्ति इस राष्ट्रपर आ धमकी। वह महान् आपत्ति थी—लोकमान्यजीका निर्वाण।

इस दैवी आपत्तिके कारण नागपुरके कार्यकर्ता हतबुद्ध हो गये। फिर देवमान्य बने हुए उस लोकमान्यजीके कर्मयोगी आदर्शको दृष्टिके सामने रख कर, अपराजित हृदयसे, द्विगुणित उत्साहसे वे कार्यरत हुए। सुयोग-वश हिन्दी-मराठी भाषी अपने प्रारंभिक वादको भूल कर कंधेसे कंधा मिलाकर काम करने लगे। उनके पीछे सहायतार्थ समृद्ध तथा सामर्थ्यवान विदर्भ खड़ा रहा।

लाट साहबके कृपाछत्रके नीचे तीन वर्षोंका पहला कालखंड, नरम दल-के नेतृत्वका बीस वर्षोंका दूसरा कालखंड, सन् १९०८ से १९१४ तक सुषुप्तावस्थाका तीसरा कालखंड, और लोकमान्यजीकी प्रभावी नेतृताका चार वर्षोंका चौथा कालखंड इन अवस्थाओंमेंसे मार्ग आक्रमण करनेवाली काँग्रेस सन् १९२० से म. गांधीके प्रभावमें आ गयी। इस पाँचवें काल-खंड का प्रारंभ सन १९२० की नागपुर काँग्रेससे हुआ। इस समयसे सन् १९४२ तक लगातार बाईस वर्ष म. गांधीजीकी एकतंत्र अधिसत्ता काँग्रेसमें रही। हालाँ कि सन १९३६ से पं. जवाहरलाल नेहरूकी प्रेरणा

तथा प्रयत्नोंसे काँग्रेस समाजवादके नये पथपर अग्रसर हो रही थी, फिर भी उसका सूत्र-संचालन गांधीजीके ही हाथों होता था । गांधीजीही काँग्रेसके निर्माता, नियंता तथा कर्ताधर्ता थे । यह समीकरण हो गया था कि—गांधीजी याने काँग्रेस और काँग्रेस याने गांधीजी ।

गांधीजीके दिये सत्याग्रह-मंत्रपर अमल करते हुए काँग्रेसने अपना स्वराज्य का मकसद १९४७ में हासिल कर लिया । साधना की पूर्तता हो गई । साधकको सिद्धि प्राप्त हुई । युयुत्सु काँग्रेस अब सत्ताधारी हो गई । स्वातंत्र्यके बाद गत दस वर्षोंमें काँग्रेसके ध्येय तथा मार्गमें पहलेसे परिवर्तन आ गया । १९५१ में काँग्रेसका अधिवेशन आवडीमें हुआ, जिसमें देशके सामने समाजवादी ढंगके राज्यशासनकी निर्मितिका ध्येय देशके सामने प्रस्तुत किया गया । काँग्रेसकी जीवनीकी छठी मंजिलका यह रूप अनूठा था । अब इस साल काँग्रेसका जो अधिवेशन नागपुरमें होने जा रहा है उसपर सातवी मंजिलके उद्घाटनका उत्तरदायित्व है । देशकी कृषि-समस्याको सुलझाकर तथा पंचवर्षीय योजनाको सफल बनाकर भारतको आर्थिक दृष्टिसे स्वतंत्र बनानेका कार्य उसे करना है ।

अपने साठ सहस्र पितरोंके उद्धारके लिये राजा भगीरथ गंगाजीका पवित्र प्रवाह स्वर्गसे पृथ्वीपर लाये । भगवान विष्णुसे प्रार्थना करते हुए, शिवजीको शांत करते हुए, जन्हु राजासे अनुरोध करते हुए, तथा कई पर्वतोंको तोड़कर, घाटियोंको लांघकर, बांध बनाकर उस पापताप-हारक प्रवाहको पृथ्वीपर लानेमें उन्होंने सफलता पायी । ठीक उसी प्रकार प्रार्थना-अनुरोध, तर्क और उसके साथ साथ जन-जागरण, संगठन, जागृत तथा संगठित जनगणमें शौर्यका संचार आदि विभिन्न तरीकोंसे इस देशकी स्वातंत्र-प्राप्तिके लिये काँग्रेस आजतक बराबर कोशिश करती रही, और उसने सफलता प्राप्त की । अब स्वराज्यको सुराज्यमें परिवर्तित करनेकी ज़िम्मेदारी सारे देशपर—विशेष कर काँग्रेसपर—आ पड़ी है । काँग्रेसके नेताओंके सामने अब यही एक सवाल है कि स्वतंत्र भारतको संपन्न और समृद्ध कैसे बनाया जाए । इस देशको राजनीतिक स्वातंत्र्य तो मिल गया, अब आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक स्वातंत्र्य प्राप्त करनेका काम बाकी रह गया है । इन तीन स्वातंत्र्योंकी प्राप्ति हुए बिना भारतकी सर्वांगीण

उन्नति होना असंभव है। भारतके सामने मुँह बाये यह समस्या आज खड़ी है कि किस रास्तेसे चलकर यह उन्नति की जा सके।

अनुशासन पर्व

इस समय दुनियामें दो प्रबल तथा प्रभावी विचारप्रवाह हैं। एक है इंग्लैंड-अमेरिकाका लोकतंत्रका विचार, और दूसरा रूसका साम्यवादका विचार। इनमेंसे पहले विचार-प्रवाहमें सहिष्णुता, बुद्धिवाद तथा व्यक्ति-स्वातंत्र्य आदि मानवीय मूल्योंको प्रधानता दी गयी है। लेकिन उसमें वर्गोंके बीच, या मनुष्य–मनुष्यके बीच भी समानताका उदय नहीं हो पाया है। उसमें अमीर-गरीब जैसे वर्ग विरोधके अतिरिक्त श्वेत–कृष्णकी वर्ण–भिन्नता भी मौज़ूद है। इसके विपरीत रूसमें न वर्गभेद है, न विभिन्न दल है। वहाँ श्रमिकोंके लोकतंत्रकी दुहाई दी जाती है। लेकिन वहाँ व्यक्ति स्वातंत्र्य, सहिष्णुता तथा बुद्धिवादके लिये कोई गुंजाइश नहा है। मानवताकी आत्माको ही खोकर रूस अपनी भौतिक उन्नतिके लिये प्रयत्नशील है। उसकी समृद्धि तथा सुरक्षाकी समर्थता इस कदर बढ़ गयी है कि संसार भौंचक्का हो गया है। लेकिन उसका मूल्य चुकानेमें कितनोंकी बलि दी गयी, इसका अंदाज़ा लगाना भी मुश्किल है।

इसलिये इन दोनों रास्तोंको बगलमें रखते हुए स्वतंत्र भारतको अपना आगेका मार्ग स्वतंत्र रूपसे निर्धारित करना है। भारतको समताधिष्ठित तथा हिंसा-रहित लोकतन्त्रकी नींव डालनी है। अहिंसक, शोषणरहित, समताधिष्ठित तथा भेदभाव–विहीन कल्याणकारी शासनकी हमारी कामना है। यही है गांधीजीका रामराज्य तथा विनोबाजीका सर्वोदय समाज। इन दोनों महान् द्रष्टाओंने इसके निर्माणके तौर-तरीके भी बतलाये हैं। नेताओंकी समर्थता तथा वर्तमान परिस्थिति इन दोनोंके मेल-जोलसे भारत अपनी उन्नति स्वतंत्र रीतिसे करते हुए सारे संसारके समक्ष एक नया आदर्श उपस्थित कर रहा है।

० ० ०

२ नागपुरका पहला अधिवेशन

नागपुरमें पहली बार काँग्रेसका अधिवेशन १८९१ में हुआ। वह काँग्रेसका सातवाँ अधिवेशन था। उसका आकार तथा आशय उस ज़मानेके अनुरूपही था। १८० फूट लंबाई तथा १२० फूट चौड़ाईके मंडपमें वह अधिवेशन संपन्न हुआ। रेल्वे-स्टेशनके समीपवर्ती लालबागमें यह मंडप निर्माण किया गया था। मंडप छोटासा लेकिन सुहावना था। उसमें चार हजार कुर्सियाँ रखी गयी थीं। उन सबपर प्रतिनिधि विराजमान थे। नागपुर शहर बंबई या कलकत्ते जैसा बड़ा नहीं है, फिर भी यहाँ दर्शकोंकी काफी भीड़ थी।

अधिवेशनका प्रारंभ २८ दिसंबरको हुआ। नागपुरकी नगरपालिकाके अध्यक्ष बॅरिस्टर सी. नारायणस्वामी नायडूने स्वागताध्यक्षके नाते भाषण दिया। उस ज़मानेके अनुरूपही उन्होंने प्रारंभमें ब्रिटिश साम्राज्यके बादशाहके प्रति राजनिष्ठा, ब्रिटिश जनताके लिए प्रेमभाव तथा ब्रिटिश सरकारके सद्‌हेतुके प्रति पूर्ण विश्वासकी दुहाई दी। अपने भाषणके सिल-सिलेमें उन्होंने अंग्रेजी राज्यपर श्रद्धाके फूल चढ़ाते हुए कहा कि "अंग्रेजी राज्य ईश्वरका दिया हुआ वरदान है।" भाषणके अंतमें उन्होंने कहा कि, "हम राजनिष्ठाकी भावनासे तथा वैध तरीकोंद्वारा इस बातके लिए कोशिश करते रहें कि सरकार अपने राज्यशासनमें सुधार करे।"

उसी वर्ष जनवरीमें व्हाइसरॉयने बड़ी उदारतासे घोषित किया था कि " कॉंग्रेस एक वैध संस्था है। इसलिए सरकारी नौकरोंको चाहिए कि वे उसके रास्तेमें रोड़े न अटकायें। लेकिन वे उसके काममें किसी प्रकार योग न दें। और लोग उसमें शरीक हो सकते हैं।" इतनीसी सहूलियत पानेपर भी उस समयके कॉंग्रेसके नेतागण फूले न समाये थे! ज़मानाही वैसा था। अधिवेशनकी कार्रवाई शुरू होनेसे पहले इंग्लैंडके प्रधानमंत्री ग्लैडस्टनकी आयुके बयासी वर्ष पूर्ण होनेके उपलक्ष्यमें तीन बार तालियाँ बजाकर खुशियाँ मनायी गयीं। और अधिवेशनके अंतमें फिर तीन बार तालियाँ बजाकर इंग्लैंडकी रानीकी जयध्वनि पुकारी गयी। मंडपके प्रवेश-द्वारके भीतरी तरफ सुनहले अक्षरोंमें लिखा हुआ था कि 'परमात्मा महारानीको चिरायु बनाए।'

उस अधिवेशनकी अध्यक्षता मद्रास हाईकोर्टके एक नामी-गरामी वकील रायबहादुर आनंद चार्लूने की थी। वे कॉंग्रेसके कार्यमें शुरूसे ही योग देते रहे थे। उनके भाषणमें राजनिष्ठा तथा अनुरोध-प्रार्थनाको प्रधान स्थान दिया गया था।

गुलामीके उस जमानेमें किस कदर भय, नम्रता, तथा सतर्कता नेताओंको भी बरतनी पड़ती थी इसकी साफ झलक सभापतिके भाषणमें पायी जाती है। कॉंग्रेसके संस्थापक ह्यूमके प्रति आदरांजलि समर्पित करते हुए उन्होंने कहा, " ह्यूमसाहब अपने अथक परिश्रम तथा त्यागके कारण इस देशकी जनताकी भक्ति तथा कृतज्ञताके अधिकारी हुए हैं। इस देशकी आगामी पीढ़ियाँ भी उनकी ऋणी रहेंगी।"

श्री. ह्यूम इस देशमें ४३ वर्ष रहे। कुछ वर्ष उन्होंने आई. सी. एस्. अधिकारीके नाते भी काम किया। १८५७ के स्वातंत्र्य-समरके शोलोंसे उन्हें भी झुलस जाना पड़ा था। उस किस्मके बवंडरके फिरसे उदय होनेका खतरा वे महसूस कर रहे थे। कॉंग्रेसके इस नागपूर अधिवेशनके लगभग उनके मनमें आया था कि, " इस देशमें किसानोंकी बगावतका संभव है। क्योंकि दरिद्रताही अराजकताको जन्म देती है। दिन-ब-दिन दरिद्रता बढ़ती जा रही है, और जनताको कुचल रही है। भूखमरी, अन्याय तथा निराशा–इन तीनोंके एकत्रित हो जानेसे लोगोंका क्षोभ किस कदर भभक

उठेगा, इसका अंदाजा लगाना मुश्किल है। यह सच है कि भारतकी जनता राजनिष्ठ है, सहनशील है। लेकिन फ्रांसीसी जनता भी वैसी थी। जब क्रांतिका समय आता है, भेड़-बकरे भी भेड़ियोंमें परिवर्तित हो जाते हैं। हिन्दुस्थानमें भी वही होगा। बगावत होगी, लोग रेलकी पटरियाँ उखाड़ देंगे, तारके खंभे तोड़ डालेंगे, पुल उड़ा देंगे, आमद-रफ्तको ठप कर देंगे, और सारे शासनप्रबन्धको मिट्टीमें मिला देंगे। इसलिये शासकोंको चाहिए कि वे इस देशको समय रहते संतुष्ट करें, अन्यायको मिटा दें, तथा लोगोंकी दरिद्रताको नष्ट कर दें।"

कुछ दिनों बाद इस आशयके सत्य, सुस्पष्ट तथा निर्भीक विचारोंको श्री. ह्यूमने एक वक्तव्यद्वारा प्रकट किया। यह मालूम हो जानेपर कई अँग्रेज राजनीतिज्ञोंका माथा ठनक गया। ब्रिटिश संसदके एक सदस्यने तो कॉमन्स सभागृहमें कहा कि, "ह्यूमको गद्दार ठहराकर फाँसी चढ़ाना या गोलीसे उड़ा देना चाहिए।" दूसरी तरफ समझदार भारतीय नेतागण ह्यूमको भारतीयोंके हितकर्ता, मित्र, गुरु तथा तत्वज्ञ मानते थे। श्री. चार्ल्सके भाषणमें इसी आम संमतिकी झलक पायी जाती है। अपने भाषण-में उन्होंने श्री. ह्यूमसे अनुरोध किया कि कॉंग्रेसके महामंत्रीके पदको वे स्वीकार करें।

सारा हिन्दुस्थान एक राष्ट्र है, इस बातको तर्कों द्वारा अपने भाषणमें साबित करना श्री. चार्ल्सने जरूरी समझा। उन्होंने तिलमिलाकर कहा, "हिन्दुस्थानकी प्रजा एक देशमें रहती है, एक सल्तनतके मातहत बरतती है, एक सर्वोच्च विधान सभाको मानती है, एक राज्यसत्ताके कानूनके अनुसार कर देती है, एकही राज्य-शासनकी छत्रच्छायामें सुख-दुःखोंको भुगतती है, और एकही मकसद-को हासिल करनेके समान भावसे प्रेरित है। इसलिए हम सब एक राष्ट्र हैं।"

आगे उन्होंने कहा, "यह सही है कि एक भाषा, एक धर्म, सहभोजन, सहविवाह आदि कई बातें राष्ट्रीय एकताके संवर्धनके लिए सहायक होती हैं, तो भी भावनात्मक एकताका विशेष महत्त्व होता है। गत सात वर्षोंमें उसे हमने काफी मात्रामें प्राप्त कर लिया है। आजतक हिंदू और मुसल-मान जातियोंमें अलगाव था। लेकिन अब ये जातियाँ भ्रातृभावसे अनु-

प्राणित होकर एक-दूसरेके नजदीक आयी हैं। काँग्रेसके ही कार्यका यह एक परिणाम है।"

काँग्रेसकी जिस दूसरी सफलताका श्री. चार्लूने अपने भाषणमें जिक्र किया वह थी सरकारके दृष्टिकोनमें परिवर्तन। व्हाइसरॉयने खुले आम यह कहकर काँग्रेसका प्रशस्तिपाठ पढ़ा था कि "काँग्रेस वैध मार्गसे तथा सर्व-संमत तरीकोंसे राष्ट्रहितके कार्यके लिए प्रयत्नशील, प्रतिष्ठाप्राप्त संस्था है।" श्री. चार्लूने इस बातका गौरवपूर्वक निर्देश किया। गव्हर्नर, कलेक्टर आदि अधिकारी काँग्रेसकी ओर तिरछी, शक्की निगाहसे देखते थे। लेकिन काँग्रेसकी धीमी कार्यप्रणालीके कारण उनकी दृष्टिमें अनुकूल परिवर्तन आया।

श्री. चार्लूने इस बातका भी सबूत प्रस्तुत किया कि सरकारके न केवल दृष्टिकोनमें बल्कि चाल-चलनमें भी परिवर्तन हुआ है। काँग्रेसकी माँगको स्वीकार करते हुए लॉर्ड क्रॉसने ब्रिटिश संसदमें 'इंडिया बिल' प्रस्तुत किया था, उत्तर-पश्चिमी सरहद प्रांतके लिए विधान-सभा प्रस्थापित की थी, उच्च अधिकारियोंकी उम्रकी मियाद बढ़ा दी थी। इन बातोंपर संतोष प्रकट करते हुए चार्लूने सरकारके समक्ष नये सुधारों तथा ज्यादा अधिकारोंकी माँग पेश की। उन्होंने शिकायतकी कि काँग्रेसकी प्रमुख माँगोंकी ओर सरकार कोई ध्यान नहीं देती। और इस हालतको मिटानेके लिए उन्होंने यह तरकीब सुझाई कि इंग्लैंडके आम लोगोंका मत हिन्दुस्थानके लिए अनुकूल बना लिया जाए। उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि इंग्लैंडके लोगोंको हिन्दुस्थानके बारेमें सही जानकारी देनेके लिए काफी कोशिश करनी चाहिये,—यहाँतक कि काँग्रेसका अधिवेशन लंडनमें आयोजित किया जाए। वह जमाना ही वैसा था!

हिन्दुस्थानकी जनशक्तिको जाग्रत और संगठित बनानेकी जरूरत महसूस किये जानेका समय अभी आनेको था। काँग्रेसका झंडा कंधेपर उठा लेनेको उस समयके नेतागण तैयार थे, लेकिन उस झंडेपर वे ब्रिटिशोंके युनियन जॅकको अंकित करना चाहते थे। चार्लूने कहा कि, "इंग्लैंडमें काँग्रेसका अधिवेशन आयोजित करना हो, तो हमें सागर-यात्रा करनी होगी, जो कि दकियानूसी खयालके हिन्दुओंकी नजरमें एक पाप है। संभव है कि वे लोग

हमें समाजसे बहिष्कृत ठहरा देंगे। फिर भी अपने देशके कल्याणके लिए हमें इन सारी यंत्रणाओंको बरदाश्त करना होगा।" इससे पता चलता है कि किस प्रकार उस समयके काँग्रेसी नेताओंको एक तरफ हिन्दुस्थानी जनता और दूसरी तरफ विदेशी सरकार इन दोनोंकी मुखालिफत सहन करनी पड़ती थी। चार्लूने यह उम्मीद प्रकट की कि इंग्लैंडमें काँग्रेसका अधिवेशन संपन्न किये जानेके परिणाम स्वरूप हिन्दुस्थानकी विधान--सभाओंमें निर्वाचित प्रतिनिधियोंको सदस्यके नाते स्थान प्राप्त होगा, जिससे देशकी हालतमें सुधार कराना आसान हो सके। उस जमानेमें लोगोंके हृदयके भावोंको प्रकट करनेके तौर--तरीके बहुत ही कम थे।

श्री. चार्लूने सुझाया कि काँग्रेसके विचारोंका हिन्दुस्थानकी जनतामें प्रचार करना चाहिये। लेकिन इस सुझावपर उन्होंने जोर नहीं दिया। उन्होंने जोर दिया सिर्फ इसी बातपर कि अपनी माँगकी असलियतका प्रभाव ब्रिटिश सरकार तथा ब्रिटिश लोगोंके दिलपर डाला जाये। अपने भाषणके अंतमें सभापति श्री. चार्लूने एक अनूठा सुझाव प्रस्तुत किया कि, "हिन्दुस्थानकी जनताको हमें यह सिखाना चाहिये कि वह अंग्रेजी राज्यको विदेशी राज्य न समझे। पहले अपने समाजमें क्षत्रियोंका वर्ग होता था, उसका स्थान अब अंग्रेजोंने लिया है। यहाँ अंग्रेज लोग इस देशके राज्य-शासनके एक अविभाज्य अंगके रूपमें रह रहे हैं। इंग्लैंडकी महारानीके प्रति हमारे मनमें सम्मान तथा राज्यनिष्ठाके गहरे विचारोंने स्थान पाया है।" इस तरहके विचार आजकी पीढ़ीके लोगोंको विचित्रसे लगते हैं। लेकिन उत्क्रांतिकी उस परिस्थितिमें ऐतिहासिक दृष्टिसे देखनेपर ये विचार उपयुक्त तथा उचित लगते हैं।

सभापतिने अपना भाषण अंग्रेजीमें दिया और उसका तर्जुमा उर्दूमें किया गया। अधिवेशनमें अठारह प्रस्ताव स्वीकार किये गये। जंगलके महकमेसे संबंधित अड़चनोंको हटाया जाये, नमक-कर घटाया जाये, पाँच करोड़ हिन्दुस्थानी लोग भूखमरीकी सीमापर खड़े हैं तथा लाखों लोग हरसाल भूखसे तड़प तड़पकर मर जाते हैं इसलिये सेना तथा राज्यशासनका खर्च घटाया जाये---इस प्रकारकी कई माँगें प्रस्तावोंद्वारा की गयीं। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि लोकमान्य तिलकने एक प्रस्तावपर भाषण दिया,

जिसमें कहा गया था कि शस्त्रोंपर लगाये गये निर्बंधों को शिथिल किया जाएँ तथा देशमें सैनिक विद्यालय खोले जाए।

छोटे छोटे सुधारोंकी नींव असलमें राज्यशासनके अधिकारमें होती है। इस अधिकारको पानेके लिये काँग्रेसने अपने दूसरे प्रस्तावमें यह कामना प्रकट की कि, "विधानसभामें आम लोगोंकी राय प्रतिध्वनित होनी चाहिये। ब्रिटिश जनताके सद्भावके लिये हम कृतज्ञ हैं। उस जनतासे सम्मानपूर्वक तथा सानुरोध हमारी प्रार्थना है कि न्याय्य सुधारोंके प्रदानमें अब देर न की जाए।"

उस समयकी माँग कैसी छोटी थी। और उसे पेश करनेका तरीका भी नम्रता तथा अदबसे भरा हुआ था, मानो नन्हे-मुन्नेकी तुतलाती भाषा! २९ वर्ष बाद १९२० में जो काँग्रेस नागपुरमें हुई उसमें दिये गये भाषणोंमें समझदार नौजवानके आत्मविश्वाससे परिपूर्ण उद्गार पाये गये। और अब १९५९ में होनेवाली काँग्रेसके भाषणमें अधेड़ अवस्थाके किसी अभिभावकके जिम्मेदारीसे भरे हुए खयालकी झलक पायी जाएगी।

काँग्रेसके मंचपरसे तिलमिलाकर किया हुआ आक्रोश परिणाममें अरण्य-रुदन साबित होता है, इस बातको उस समयके काँग्रेसी नेता महसूस करने लगे थे। इसलिये नागपूर काँग्रेसके पूर्ववर्ती कलकत्ता काँग्रेसमें १८९० में एक प्रस्ताव स्वीकार किया गया था कि काँग्रेसका अधिवेशन इंग्लैंडमें कराया जाये जिसमें एक सौसे अधिक प्रतिनिधि उपस्थित रहें। लेकिन उसी वर्ष इंग्लैंडमें आम चुनाव होनेवाला था, इसलिये नागपुर काँग्रेसने इंग्लैंडमें अधिवेशन करानेके प्रस्तावपर अमल करना स्थगित किया।

सातवें अधिवेशनके समक्ष यह भी एक सवाल था कि काँग्रेसका काम जारी रखा जाए या नहीं। इसका प्रमुख कारण यह था कि खर्चके लिये पर्याप्त धनराशि इकट्ठी नहीं होती थी। लेकिन काँग्रेसकी शैशव-अवस्थामें आया हुआ यह संकट श्री. सुरेंद्रनाथ बानर्जीके विचार-परिपूर्ण भाषणके कारण टल गया, जिससे काँग्रेसका अब ६४ वाँ अधिवेशन संपन्न होने जा रहा है।

काँग्रेसके भविष्यपर सोचकर उचित निश्चय कर लेनेके लिये बीस प्रतिनिधियोंकी एक समिति कायम की गयी। एक दिनभर सोच-विचार

करनेके उपरान्त समितिने निश्चय किया कि कॉंग्रेसका काम कम-से-कम तब तक जारी रखा जाये जब तक कि उसका अधिवेशन इंग्लैंडमें नहीं हो पाता है।

श्री. ह्यूमने चालीस सदस्योंके नाम पढ़ सुनाये, जिनकी विषय-नियामक समिति बनी।

कॉंग्रेसके जनक श्री. ह्यूमका बड़ा सम्मान किया गया। उनके इनकार करनेपर भी उन्हें फिरसे कॉंग्रेसका महामंत्री चुना गया। उनके छायाचित्र सभामें बाँटे गये।

१८९१ के इस अधिवेशनमें स्वदेशीके विचारका जोरोंके साथ प्रचलन हुआ। हाथकरघेके उद्योगके प्रोत्साहनके लिये 'स्वदेशी वस्तु प्रचारिणी सभा' पहलेही स्थापित की गई थी। १८९१ में नागपुरमें 'स्वदेशी मिल' खोली गयी।

२ असहयोगका शिलान्यास

अमृतसरकी कॉंग्रेसद्वारा हिन्दुस्थानकी राजनीतिको नया मोड़ मिला। १९१९ में अमृतसरके अधिवेशनके सामने सबसे अहम सवाल यह था कि मॉंटफर्ड सुधारोंको स्वीकार कर लिया जाए या नहीं। म. गांधी तथा पं. मालवीय जैसे मृदु स्वभावके नेताओंका ब्रिटिश सरकारकी नेकीपर पूरा विश्वास था। इसके विपरीत लो. तिलक, बॅ. दास आदि तीव्र स्वभावके अनुभवी नेताओंकी रायमें ये सुधार अधूरे, असंतोष-जनक तथा नैराश्यपूर्ण थे। और इसलिए वे ब्रिटिश संसद्को चेतावनी देते थे कि "विश्वयुद्धके समय स्वीकार किये गये स्वयंनिर्णयके सिद्धान्तके अनुसार हिन्दुस्थानको संपूर्ण उत्तरदायी शासनके अधिकार फौरन दिये जाने चाहिए।"

ब्रिटिश बादशाहने ऐलान किया था कि, "हिन्दुस्थानकी रिआया तथा अधिकारियोंको चाहिए कि वे समान ध्येयकी प्राप्तिके लिए समान निश्चयसे नये युगके निर्माणके कार्यमें जुट जाएँ।" बादशाहके इन शब्दोंपर भरोसा रखते तथा उनकी भावनाका सम्मान करते हुए गांधीजी आदि नेताओंने कॉंग्रेसमें एक तरमीम पेश की थी कि, "रिआया और अधिकारियोंको आपसी सहयोगसे इन सुधारोंपर अमल करना चाहिए, जिससे इस देशमें पूर्ण उत्तरदायी राज्यशासन शीघ्र स्थापित हो जाए। भारत-मंत्री श्री.मॅंटेग्यूने

इन सुधारोंके बारेमें जो परिश्रम उठाये उसके लिए कॉंग्रेस उन्हें हार्दिक धन्यवाद देती है। गांधीजीने यह भी सुझाव रखा कि प्रस्तावमें सुधारोंको नैराश्यपूर्ण कहा है, वह शब्द हटा दिया जाय।

लेकिन गांधीजीका यह सहयोगका रुख बहुसंख्यक प्रतिनिधियोंको संमत नहीं था। इसलिए अमृतसरका अधिवेशन लोकमान्य तिलककी विजयका स्थान साबित हुआ। गांधीजीकी तरमीमसे शिष्टाचारका अंश स्वीकार करते हुए बॅ. दासने नया प्रस्ताव पेश किया जो सर्व-संमतिसे स्वीकार किया गया।

पंजाबके अमृतसर शहरके जालियनवाला बागमें जनरल डायर द्वारा निःशस्त्र और बेगुनाह हिन्दुस्थानी नर-नारियोंका बे-रहमीसे और अ-कारण जो कत्ल किया गया था उसका कड़े शब्दोंमें धिक्कार करनेवाला प्रस्ताव अमृतसर कॉंग्रेसमें पारित होना स्वाभाविक था। लेकिन उसके साथ साथ पंजाब और गुजरातके कुछ लोगोंने जो अत्याचार किये उनके प्रति निषेधका प्रस्ताव पेश करनेपर गांधीजीने जोर दिया, जो उनके बताये सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तके अनुरूप था। गांधीजीका इस संबंधमें मत था कि, "मुझे और डॉ. किचलू-सत्यपालको गिरफ्तार करनेमें सरकारने पागलपनका प्रदर्शन किया, जिसके प्रतिक्रिया-स्वरूप लोग पागल हो गये। लेकिन मेरी अपनी राय है कि पागलपनका जवाब पागलपनसे न दिया जाए। पागलपनका जवाब समझदारीसे देनेसे ही परिस्थितिको मात किया जा सकता है।"

लेकिन प्रतिनिधि-गण क्रोधसे इतना प्रक्षुब्ध था कि गांधीजीके सुविचार की ओर किसीने ध्यान नहीं दिया, और विषय-नियामक समितिमें गांधीजीका प्रस्ताव ठुकरा दिया गया। गांधीजीको बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने शांत और मृदु स्वरमें अपने निश्चयकी घोषणा की कि, यदि मेरी नीति कॉंग्रेसको मंजूर न हो तो मेरे लिए कॉंग्रेसमें रहना असंभव है।" यह सुनतेही चारों ओर बिजली दौड़ गयी। दूसरेही दिन गांधीजीका प्रस्ताव संमत हो गया।

कॉंग्रेसको इस वाक्यासे एक नया मोड़ मिला। सत्य-अहिंसाके सिद्धान्तका कॉंग्रेसमें शुभ-प्रवेश हो गया। रानडे और गोखलेने राजनीतिको

धर्मप्रवण बनानेका उदात्त ध्येय प्रस्तुत किया था। उसे साकार बनानेकी अब पहली बार कोशिश हो रही थी। सरकारकी नुक्ताचीनी करने मात्रसे कोई लाभ नहीं है। लोगोंको अपने अंदर झाँककर आत्म-निरीक्षण करना चाहिए, अपनी कमियोंको हटाना चाहिए, और ठोस कार्यमें जुट जाना चाहिए। इस प्रकारके स्वायत्त और स्वावलंबी कार्यक्रमकी इस समय नींव डाली गयी। कॉंग्रेसकी व्यावहारिक नीतिपर गांधीजीकी सात्त्विक अध्यात्म-प्रवण वृत्तिका यह आद्य संस्कार था।

रेलकी दिशा बदल जानेपर आगेके सारे स्टेशन आप-ही आप बदलते हैं। इंग्लैंडके राजपुत्र हिन्दुस्थानमें आनेवाले थे, उनके स्वागतका प्रस्ताव भी विना किसी हिचकिचाहटके मंजूर हुआ। दिल्ली अधिवेशनमें उस प्रस्तावको ताकपर रखा गया था।

अमृतसरके बाद कलकत्तामें ४ सितंबरको कॉंग्रेसका विशेष अधिवेशन हुआ। इन दोनों अधिवेशनोंके बीचकी अवधिमें अंग्रेजी शासनद्वारा कुछ ऐसी घटनाएँ हुईं जिनके कारण हिन्दुस्थानियोंका गुस्सा और अधिक चढ़ गया। जिस डायरके शैतानी अत्याचारोंसे सारे देशभरमें गुस्सेकी लहर दौड़ गयी थी,उसकी इज्जत ब्रिटिश सरकार तथा वहाँकी रियायाने बढ़ा दी। इससे हिन्दुस्थानियोंको लगा कि जलेपर नमक छिड़काया जा रहा है। ठीक इसी मौकेपर खिलाफतका कांड सामने आया। विश्वयुद्धके अवसरपर जो वादे किये गये थे उनपर ब्रिटिश सरकारने पानी फेर दिया। मुस्लिमोंकी बड़ी निराशा हुई। उनके प्रति हमदर्दीके कारण हिन्दुओंका भी खून अंग्रेजोंके खिलाफ खौल उठा। हिन्दुस्थानपर रौलट कानून थोपकर सरकारने तीसरा अन्याय किया। नागरिक स्वातंत्र्यके अधिकारोंको छीन लेने तथा सारे आंदोलनोंको कुचलनेके उद्देश्यसे ये कानून बनाये गये थे।

इस त्रिविध अन्यायके कारण सारा देश संतप्त हो उठा। कलकत्ताके अधिवेशनमें यह सार्वजनिक क्रोध प्रकट हुआ। लाला लजपतराय जैसे तेजस्वी नेताको उस अधिवेशनकी अध्यक्षताकी बागडोर सुपूर्द की गयी थी। उन्हें निष्कासनतककी सजाएँ देकर सरकारने बेहद यंत्रणा पहुँचायी थी। फिर भी उन्हें विश्वास था कि परंपराप्राप्त रास्तेसे चलकर अँग्रेजोंसे स्वराज्य

प्राप्त कर लिया जा सकता है। इसलिए गांधीजीके बताये असहयोगके कार्यक्रमके वे खिलाफ थे।

प्रायः सभी पुराने नेता उस कार्यक्रमके खिलाफ थे। लेकिन ब्रिटिश सरकार अपनी स्वार्थी और क्रूर करतूतों द्वारा सहयोग के समर्थक और आशावादी नेताओंके खयालोंमें परिवर्तन ला रही थी। सरकारद्वारा अन्यायों और पापोंके पहाड़ रचे जा रहे थे। स्वाभिमानी भारतीयोंके लिए सरकारसे स्नेहका रिश्ता रखना असंभव-सा होता जा रहा था। इसी वजहसे कलकत्ता काँग्रेसमें गांधीजीद्वारा प्रस्तुत असहयोगका प्रस्ताव भारी बहुमतसे मंजूर हो गया। अमृतसर कांड, खिलाफत निर्णय और रौलट कानून—इस त्रिविध अन्यायको जब तक हटाया नहीं जाता, तब तक सारे हिन्दुस्थानी अदालतों, विधान-सभाओं तथा कॉलेजोंका बहिष्कार करें, तथा सरकारी नौकरियोंसे हट जाएँ। इस आशयका सारे देशको आवाहन करनेवाला प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। उसके पक्षमें १८८६ तथा विपक्षमें ८८४ मत मिले। इससे अधिक स्मरणीय तथा महत्वपूर्ण बात यह है कि इसी अधिवेशनमें इस प्रस्तावमें जनतासे इस बातके लिए भी आवाहन किया गया कि इन सारे अन्यायोंकी जड़में जो गुलामी है, उसे हटानेतक, यानी स्वराज्य प्राप्त होनेतक असहयोगका कार्यक्रम जारी रखा जाए।

• • •

४. क्रांतिकारी अधिवेशन

आशय एवं आविष्कारकी दृष्टिसे नागपुरका कॉंग्रेस-अधिवेशन अपूर्व रहा। उसकी अपूर्वता जिस प्रकार उसकी नयी नीति, नये प्रस्ताव, नया कार्यक्रम आदिमें दिखाई दी उसी प्रकार वह उसके अभिनव प्रबंध, अतुल्य प्रतिनिधि-संख्या तथा सब प्रकारकी सुविधाओंमें भी दृष्टिगोचर हुई। स्वागताध्यक्ष सेठ जमनालालजीका असामान्य व्यक्तित्व इस अपूर्वताका अंश मानना चाहिये। सेठ जमनालालजीका पूरा चरित्र ही परस्परविरोधी घटनाओंके तानेबानेसे बुना हुआ, तथा उदात्त तेजकी झलक दिखानेवाला था।

स्वागताध्यक्षका चरित्र

सेठ जमनालालजीका जन्म राजस्थानके काशिकाबास नामक ग्राममें ४ नवम्बर १८८९ में हुआ, लेकिन उन्होंने करीब करीब अपने पूरे जीवनको मध्यप्रदेशके वर्धा नामक शहरमें व्यतीत किया। वे वैसे तो एक गरीब परिवारमें पैदा हुए, लेकिन गोद जानेसे वे लक्ष्मीपुत्र बन गये, फिर भी उन्होंने अपना पूरा जीवन सादगी, विरक्तता तथा विश्वस्तभावसे बिताया। पाँच वर्षकी अवस्थामें आप पिताजीकी इच्छासे एक बार गोद गये ही थे, लेकिन ३० वर्षकी अवस्थामें फिरसे स्वेच्छासे गांधीजीकी

गोद गये। आपने गांधीजीसे प्रार्थना की, "महात्माजी आप मुझे अपना पाँचवाँ पुत्र मानिये।" और गांधीजी द्वारा इस प्रार्थनाको स्वीकार किये जानेपर जमनालालजीका पूरा जीवन ही गांधीवादी प्रवाहमें विलीन होकर बहने लगा। इसी दशामें जमनालालजी आचार्य विनोबाजीको अपना गुरु बनाकर वर्धा ले गये। फलस्वरूप जमनालालजीके जीवनमें अध्यात्मवृत्तिके बीज अच्छी तरह अंकुरित हुए। लाखों रुपयोंकी संपत्ति आँखोंके सामने होते हुए भी जमनालालजीने केवल १७ वर्षकी अवस्थामें एक त्यागपत्र-द्वारा पूरी जायदादपर तिलांजली दे दी। कितनी अलौकिक घटना! "न कोई किसीका बाप, न कोई किसीका पुत्र। हरेक अपने अपने सुखका साथी। आपकी जायदादपर आजसे मेरा कोई भी अधिकार नहीं रहा। द्रव्यके प्रति मेरे मनमें कतई वासना नहीं है।" विरागतासे भरे हुए १७ वर्षके बालकद्वारा लिखे ये विचार शायदही कोई सच मानेगा, लेकिन उनमें पूर्ण सत्यता है।

जो स्थिति संपत्तिकी वही कीर्तिकी। संपत्तिके पीछे दौड़ी आयी हुई कीर्तिकी ओर भी जमनालालजीने पीठ फेर दी। जमनालालजी एक लक्ष्मीपुत्र होनेके नाते सरकारने उन्हें 'ऑनररी मैजिस्ट्री' से सम्मानित किया और इसके ९ साल बाद 'रायबहादुरकी उपाधिसे भी विभूषित किया, लेकिन ये बहुमानकी पदवियाँ उनको अणुमात्र भी मोहित न कर सकीं। इन दोनोंका, क्षणमात्रका भी विचार न करते हुए, उन्होंने त्याग कर दिया।

सेठ जमनालालजी बम्बईमें रूईका व्यापार बड़ी ईमानदारीसे करते थे। व्यापारी होते हुए भी वे सत्यनिष्ठ थे। रूईपर पानी सींचकर चालाकीसे बेचना उन्होंने बंद किया। इतना ही नहीं तो दलालीके लिये अन्यान्य व्यापारियोंसे नमूनेके तौरपर आनेवाली रूईके दाम भी वे देने लगे। अक्सर कोई भी व्यापारी इतनी सचाईसे अपना धंधा नहीं चलाता था। सरकारको दी जानेवाली टैक्स की रकमके सम्बन्धमें भी सेठजीका व्यवहार बिलकुल साफ तथा ईमानदारीका था। एक बार जमनालालजी देशहितके हेतु जेल गये हुए थे। उस समय उनके मुनीमने अन्य लोगोंकी तरह सरकारको जमाखर्चके सम्बन्धमें अंधकारमें रखकर १० हजार रुपये

रिश्वत दी और अंदाजन ८० हजार रुपयोंकी आयपर टैक्स बचाया ! लेकिन जेलसे मुक्त होतेही जमनालालजीने, गांधीजीकी सलाहसे, बचे हुए टैक्सकी रकम राष्ट्रकार्यके लिए अर्पित की।

सोनेमें सुगंधकी तरह इस सत्यनिष्ठ उद्योगपतिका दिल उदारतासे ओत-प्रोत था। एक एक पाई जोडकर धन संचित करनेवाले जमनालालजी जिस प्रकार मुक्तहस्तसे राष्ट्रकार्यमें दान देते थे उसी प्रकार भिन्न संस्थाओंको भी। इस प्रकार आपने अपने जीवनमें २५ लाखसे भी अधिक रकम दानमें दी। यह दान उनकी आयकी दृष्टिसे इतना अधिक था कि बिर्ला जैसे करोड़पतिने भी आश्चर्य प्रकट किया।

नागपुर काँग्रेसके स्वागताध्यक्षके नाते जब जमनालालजीका चुनाव हुआ उस समय उनकी उम्र केवल ३० वर्षकी थी। इस उच्चपदकी दृष्टिसे अपनी आयु छोटी, शिक्षा-दीक्षा कम तथा राष्ट्रसेवाका अपना अनुभव भी कम, यह जानकर जमनालालजीने स्वागताध्यक्षका पद ग्रहण करनेकी अपनी अनिच्छा तथा अपात्रता गांधीजीको पत्र लिखकर निःसंदिग्ध शब्दोंमें प्रकट की। किन्तु केवल गांधीजीके आग्रहके कारण ही जमनालालजीने उनकी आज्ञा सिर आँखोंपर धारण की। काँग्रेसमें राष्ट्रभाषा हिंदीमें बोलनेवाले शायद जमनालालजीही पहले स्वागताध्यक्ष होंगे।

नागपुर काँग्रेससे जमनालालजी राष्ट्रके राजकाजमें बद्धमूल हो गये। अपने द्वारा सम्मति दिये गये हरेक प्रस्तावका कठोरतासे पालन करनेमें वे सदैव दक्ष रहते थे। सन् १९०६ से वे स्वदेशी मिलका कपडा उपयोगमें लाते थे। लेकिन नागपुर काँग्रेसके बाद उन्होंने सोलहों आने स्वदेशी, हाथकती हाथबुनी खादीको स्वीकार किया, और इस प्रकार धारण किया कि एकदम नखशिखान्त, घरमें तथा घरके बाहर भी। न केवल उनका पूरा परिवार ही खादीधारी बना, देवदेवताओंके वस्त्र भी पूरे खद्दरके बन गए। अपने घरके कीमती विदेशी वस्त्रोंको एक गाडीमें भरकर जमनालालजीने गाँवमेंसे उनका जुलूस निकाला। वर्धाके नागरिकोंने उसमें अपने विदेशी कपडे मिला दिये। अंतमें २०।२५ हजार रुपयोंके विदेशी कपड़ोंकी होली जलायी गयी।

खादीके व्रतका पालन जमनालालजीने एकनिष्ठतासे किया। वे 'चरखा-संघ'के अध्यक्ष थे, तब उनके साझियोंने कपड़ेकी एक मिल खरीदनेकी सोची। यह विसंगति जमनालालजीकी पत्नी जानकीदेवीके हृदयमें चुभ गयी। उन्होंने अपने पतिकी तत्त्वच्युतिके विरुद्ध गांधीजीके पास शिकायत की। लेकिन आश्चर्यकी बात यह कि स्वयं जमनालालजीका देशप्रेमी मन विद्रोह कर उठा। गांधीजीका पत्र आनेके पूर्वही अपनेही विचारोंसे जमनालालजीने मिलका सौदा रद किया और वह वृत्तान्त गांधीजीको लिख भेजा।

जमनालालजीकी खादीपर कितनी प्रगाढ श्रद्धा थी यह उनके इन उद्‌गारोंसे प्रतीत होता है—" खादीको मैं भारतका युगधर्म मानता हूँ। मिलका कपड़ा गरीबोंसे रोटी और रोजंदारी छीन लेता है और खादी उनको संजीवनी प्रदान करती है। यह बात जिस दिनसे मेरे ध्यानमें आयी उस दिनसे मैं यह मानने लगा कि—खादीका उपयोग करना पुण्यका तथा मिलके कपडे इस्तेमाल करना पापका कृत्य है। खादी अपना चारित्र्य सुधारनेवाली एक महान् उपदेशिका है, देशकी गरीबी दूर करनेवाला ईश्वरीय वरदान है तथा स्वराज्य-प्राप्तिके संग्रामका एक सेनापति है। "

इस प्रकार नित्यके विधायक कार्योंकी तरह जमनालालजी राजकाजके प्रासंगिक संग्रामोंमें भी सबके आगे रहनेकी हिम्मत दिखाते थे। सन् १९२३ में नागपुरमें ध्वज-सत्याग्रहका नेतृत्व स्वीकृत करनेके कारण उनको १॥ वर्षके कारावास तथा ३ हजार रुपये दंडकी सजा हुई। सन् १९३० में भी नमक-सत्याग्रहमें भाग लेने तथा विलेपार्ले छावनीके अध्वर्यु बननेके उपलक्ष्यमें २ वर्षोंकी सजा भुगतनी पड़ी। तीसरा कारावास सन् १९३२ में धुलिया, येरवडा तथा नाशिकके जेलखानोंमें जमनालालजीको भुगतना पड़ा। सन् १९३९ में जयपुर रियासतके सत्याग्रह-संग्राममें अध्वर्यु होनेके कारण सेठजीको छः महीनोंके लिये वहीं स्थानबद्ध किया गया। बादमें सन् १९४१ में, दूसरे महायुद्धके समय, कॉंग्रेसके आदेशानुसार उन्होंने युद्ध-विरोधी नारे लगाये। फलस्वरूप उनको कुछ महीनोंका कारावास सहना पड़ा। इस प्रकार गांधीजीके नेतृत्वमें कॉंग्रेसद्वारा चलाये गये सत्याग्रहसंग्राममें, पाँच बार हिस्सा लेकर, जमनालालजीने प्रत्यक्ष देहदंड अनुभव किया।

इसके अलावा जमनालालजीद्वारा अन्यान्य प्रकारोंसे जनताकी जो सेवा की गयी वह अमाप है। वे कई युवाओंको काँग्रेसमें खींच लाये, तथा उन्होंने कई काँग्रेसनेताओंके साथ सम्बन्ध प्रस्थापित किया। असंख्य काँग्रेस-भक्तोंको गृहस्थी चलानेके लिए गुप्त दान दिये गये तथा कई संस्थाओंको उदारतासे आर्थिक सहायता दी। 'गांधी-सेवासंघ' की कल्पना, योजना तथा स्थापना जमनालालजीने ही की। इस संघके लिए उन्होंने लक्षावधि रुपये खर्च किये—और विशेषतया बडी लगन तथा प्रेमसे गांधवादी कार्यकर्ताओंको एक सूत्रमें पिरोया।

वैसेही जमनालालजीने उस पुराने समयमें, सन १९२८ में, सनातनी विश्वस्तोंका हृदय-परिवर्तन करके वर्धामें स्थित अपना 'लक्ष्मीनारायणजीका मंदिर' पूरे देशमें सर्वप्रथम हरिजनबंधुओंके लिए खुला कर दिया। सन् १९४२ में 'गो-सेवा संघ' की स्थापना करके उन्होंने अपना जीवन गो-सेवामें अर्पित किया। जमनालालजीके जीवनमें गांधीवाद अंतर्बाह्य कूट कूट कर भरा हुआ था। उन्होंने खुद अपना शेगाँव नामक गाँव गांधीजीको दानमें दिया—यही गाँव आगे चलकर 'सेवाग्राम' के नामसे दुनियामें प्रख्यात हुआ तथा काँग्रेसकी राजनैतिक राजधानीका स्थान बना।

खादी, हिन्दी, हरिजन-सेवा, हिन्दु-मुस्लिम एकता, स्वदेशी, ग्रामोद्योग आदि विधायक कार्योंमें जमनालालजी दिल लगाकर भाग लेते थे। इस प्रवृत्तिके बीज उनके अंतःकरणमें, गांधीजीकी मुलाकात होनेके पूर्वही, अपने आप अंकुरित हुए थे। उनके इस अलौकिक व्यक्तित्वकी परख गांधीजीने आरंभमेंही की थी। और इसीलिए गांधीजीने उन्हें नागपूर काँग्रेसका स्वागताध्यक्षपद स्वीकृत करनेके संबंधमें आग्रह किया था।

श्री. जमनालालजीने स्वागताध्यक्षका कार्यभार बड़े कौशल तथा सफलतासे सम्हाला।

बादमें उनकी ओर काँग्रेसके कोषाध्यक्षका पद लगभग २० वर्षोंतक रहा। यह काम भी आपने बडी ईमानदारी, दक्षता तथा निर्लोभ वृत्तिसे किया। स्त्री और संपत्तिके सम्बन्धमें किसी बड़े व्यक्तिके बारेमें संदेह प्रकट करनेकी प्रवृत्ति कुछ कुटिल लोगोंकी होती है। जमनालालजीके बारेमें इस

प्रकारका संदेह प्रकट होतेही पं. जवाहरलालजीने उसपर जोरसे आघात किया। काँग्रेसके सेक्रेटरीके नाते पं. जवाहरलालजीने एक पत्रक प्रकाशित करके जमनालालजीपर किये गये संदेहका पूरा निराकरण किया। इस पत्रकमें पंडितजीने घोषित किया—

"हमारी आयव्ययकी रकमें हरसाल बारीकीसे जाँची जाती है तथा उन्हें जनताकी जानकारीके लिए वृत्तपत्रोंमें भी प्रकाशित किया जाता है। मैं कोषाध्यक्ष जमनालाल बजाजजीको धन्यवाद देता हूँ कि आपने काँग्रेसका हिसाब बहुत अच्छी तरह रखा है। उचित कारण होते हुए भी अदालतमें जाना काँग्रेसकी नीतिमें नहीं। किन्तु कोई दुष्ट बुद्धिसे बेइज्जती करनेवाले अभियोग लगाएगा तो काँग्रेस उसे अवश्यमेव अदालतमें खींचेगी।"

इस प्रकार शुद्ध चारित्र्यवान तथा निःस्वार्थ सेवाभावसे काम करनेवाला स्वागताध्यक्ष नागपुर काँग्रेसको मिला यह शुभशकुनही था।

अधिवेशनका श्रीगणेश

लोग नवयुगकी प्रभातके दर्शनके लिए उत्कंठित थे। इसी प्रकारके उत्साहसे नागपुर काँग्रेसका वायुमंडल भर गया था। कलकत्तेके असहयोगके प्रस्तावके कारण और उसे पूरे राष्ट्रद्वारा दिये गये जोरदार उत्तरके कारण —अब काँग्रेसका कायाकल्प होगा और अपने राष्ट्रकी राजनीति कुछ और ही मोड़ लेगी—इस प्रकारकी उत्सुकता तथा उम्मीद हरेक प्रतिनिधि तथा प्रेक्षककी मुद्रापर झलकती थी तथा आँखोंमें चमकती थी। गांधीजी एक "बड़े जादूगर हैं" और आफ्रिकाकी तरह भारतमें भी अपने सत्याग्रहरूपी जादूकी लकड़ीसे कुछ चमत्कार करके तत्काल स्वराज्य हस्तगत करेंगे, ऐसी आशा तथा आकांक्षा हरेककी गुनगुनाहट तथा हलचलमें प्रकट होती थी।

भारतके राजकीय क्षितिजपर उदीयमान इस नवीन सूर्यदेवताको अर्घ्य-प्रदान करनेके लिए हजारों नारी-नर काँग्रेसके शामियानेमें एकत्रित हुए थे। केवल प्रतिनिधियोंकी ही संख्या १४५८२ थी। इन १५ हजार प्रतिनिधियोंमें एक हजार से अधिक मुसलमान थे तथा १६९ महिलाएँ थीं। स्वागत-समितिके सदस्योंकी संख्या ३२०० थी। स्वर्गसे अवतीर्ण

होनेवाले किसी दिव्य देवदूत की ओर जिस भक्तिभावसे देखा जाएगा उसी भक्तिभावसे सब लोग बड़ी उत्सुकत तथा अभिमानसे काँग्रेसके काम-काज की ओर ध्यानसे देखते थे।

इस प्रकारके विद्युत्-संचारित वायुमंडलमें १६ दिसम्बरका दिन निकल आया। दुपहर १-३० का समय हुआ। काँग्रेसका शामियाना प्रेक्षकोंसे ठसाठस भर गया। पं. विष्णु दिगंबर पलुस्करने अपनी ऊँची आवाजमें 'वंदे मातरम्' राष्ट्रगीत गाया। उस समय सबका हृदय रोमांचित हुआ अनन्तर कुछ बालिकाओंसे राष्ट्रगीत गाये गये।

बादमें स्वागताध्यक्ष सेट जमनालाल बजाजने अपना हिन्दी भाषण एक घंटेतक पढ़ सुनाया। उस वक्त मंडपमें २०००० से अधिक श्रोता उपस्थित थे, और मंडपसे बाहर भी ५०००-६००० आदमी की भीड़ खड़ी थी। इस मंडपको बनानेका ठीका पूनेके एक बोहरीने २२७०० रुपये-में लिया था। प्रतिनिधियोंके लिए २०० कुटियाँ बनायी थीं। सभापतिकी मेजपर उसी साल दिवंगत हुए लोकमान्यजीकी संगमर्मरकी छोटीसी अर्ध-प्रतिमा रखी थी। नीचेकी तरफ हिन्दमाता, म. गांधी तथा लो. तिलककी बड़ी रंगीन तसवीरें रखी थीं। इसके अलावा व्यासपीठपर भी लोकमान्य-जीकी भव्य तसवीर विराजमान थी।

इसके पहलेके अधिवेशनोंमें भिन्न भिन्न प्रांतोंसे जो प्रतिनिधि उपस्थित रहे उनकी संख्याके आँकडे उद्बोधक है। शुरूसे प्रतिनिधि-संख्या बढ़ती ही रही, जो कि काँग्रेसकी बढ़नेवाली लोकप्रियताका चिह्न था। लेकिन सूरत के अधिवेशनके बाद नरम दलके चंगुलमें फँसी हुई काँग्रेसकी प्रति-निधि-संख्या घटती हुई दिखाई देती है। १९१२ का अधिवेशन तो मानो अमावसकी रात या न्यूनतम भाटाही था। आगे चलकर जब लोकमान्यजी मांडले जेलसे छूटकर लौट आये तब फिरसे प्रतिनिधि-संख्या का ज्वार शुरू होता दिखाई देता है। उस ज्वारकी पूर्णिमा १९२० के अधिवेशनमें हुई। उसके अनंतर प्रतिनिधियोंकी संख्या काँग्रेसद्वाराही कार्यसौकर्यके लिए मर्यादित की गयी। काँग्रेसकी जनताभिमुखताका मापदंड प्रतिनिधि-संख्या का ब्यौरा नीचे दिया जाता है।

१८८५	७२
१८८६	४३६
१८८७	६०७
१८८८	१२४८
१८८९	१८८९
१८९०	६७७
१८९१	८१२
१८९२	६२५
१८९३	८३७
१८९४	११६३
१८९५	१५८४
१८९६	७८४
१८९७	६१२
१८९८	६१४
१८९९	७३९
१९००	५६७
१९०१	८९६
१९०२	४७१
१९०३	५३८
१९०४	१०१०
१९०५	७५७
१९०६	१६६३
१९०७	१६००
१९०८	६२६
१९०९	२४३
१९१०	६३६
१९११	४४६
१९१२	२०७
१९१३	३४९
१९१४	८६६
१९१५	२२५९
१९१६	२२९८
१९१७	४९६७
१९१८	४९६८
१९१९	४८६५
१९२०	७०३१
१९२०	१४,५८२

स्वागताध्यक्षका भाषण

पूज्यवरो, निर्वाचित प्रतिनिधियो, बहनो और भाइयो,

आजके दिनको मैं अपने अब तकके जीवनका सबसे अधिक सौभाग्यका दिन समझता हूँ जब कि लेनदेन और व्यापारके मायाजालमें फँसे हुए मुझे जैसे एक अयोग्य व्यक्तिको राष्ट्रके इस पवित्रतम मन्दिरमें कोटि कोटि संततिकी जन्मदात्री अपनी इस मातृभूमिकी सेवा-अर्चनाके लिए एकत्रित आप सज्जनोंका स्वागत करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

कॉंग्रेसका लक्ष्य जितना जितना पवित्र और महान् होता जाता है उसका मार्ग भी उतना उतनाही आपत्तियों और कंटकोंसे भरता जाता है।

ऐसी स्थितिमें मैं फिर कहूँगा कि यदि कोई शक्ति आपके हृदयोंको प्रेरित कर आपको इस समय इस मंडपमें एकत्रित कर सकती थी तो वह केवल देशप्रेमके पवित्र भाव और देशके दुःखोंको दूर करनेकी प्रबल उत्कंठाही हो सकती है। भारत-पुत्रों और पुत्रियोंका यह बढ़ता हुआ देशप्रेम और उनकी यह पवित्र उत्कंठाही हमारी आसन्न राष्ट्रीय विजयका सबसे बड़ा चिह्न है। इसलिए मैं फिर एक बार आपके हृदयोंको प्रेरणा करनेवाले इन पवित्र तथा अजेय भावोंका हृदयसे स्वागत करता हूँ।

सन् १८८५ अर्थात् कॉंग्रिसके जन्मदिनसे लेकर इस समय तक मुझे दो ही कॉंग्रिस महत्त्वकी दिखाई देती हैं। एक १९०६ की कलकत्ता कॉंग्रिस जिसमें शासनके छोटे मोटे निरर्थक सुधारोंसे हटकर कॉंग्रिसने पहली बार स्वराज्यको अपना लक्ष्य निर्धारित किया और उसतक पहुंचनेके लिए पुरानी भिक्षा-प्रणालीको नाकाफी समझ स्वावलंबनके पथपर पदार्पण करना चाहा। दूसरी गत सितम्बर मासकी विशेष कॉंग्रिस जिसमें पिछले १२ वर्ष-की शिथिलतासे बाहर निकल कॉंग्रिसने असहयोगके प्रस्तावद्वारा फिरसे अपने लक्ष्यको स्पष्ट किया और उसकी प्राप्तिके लिए एक क्रियात्मक संग्राम-के श्रीगणेशका देशको आदेश दिया। कलकत्तेके असाधारण अधिवेशनमें जो प्रस्ताव पास हुआ था उसके तीन मासके आशाजनक अनुभवने यह स्पष्ट कर दिया कि अब फिर उस प्रस्तावका विशेष बलके साथ पुनः अनुमोदन उचित और आवश्यक है।

विशेष कॉंग्रिसने अपना जो लक्ष्य केवल प्रस्तावद्वारा निर्णीत किया है उसे अधिक स्पष्ट शब्दोंमें कॉंग्रिसकी व्यवस्थाके अन्दर स्थान दिया जाना भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त नये राष्ट्रीय कार्यक्रमकी सफलताके लिए कॉंग्रिसकी व्यवस्थामें समयोचित परिवर्तनोंका होना भी अनिवार्य है। यह सब महत्त्वपूर्ण कार्य इस समय आप लोगोंके सम्मुख है। इसीलिए मैं इस कॉंग्रिसको कलकत्तेकी विशेष कॉंग्रेससे भी अधिक महत्त्वकी समझता हूँ और फिर एक बार अपनेको, स्वागतकारिणी समितिके अन्य सदस्योंको तथा इस प्रान्तके रहनेवालोंको इस शुभ अवसरके लिए बधाई देता हूँ और साथही ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि हम सब लोग अन्तमें देशकी इस

महान् जिम्मेवारीको पूरा करनेके योग्य और इस विशेष आदरके लिए सुपात्र साबित हों।

स्व० लोकमान्य तिलकजीको श्रद्धांजलि

देशवासियो, अब इससे पूर्व कि मैं वर्तमान राजनैतिक परिस्थितिपर अपने संक्षिप्त विचार आपके सम्मुख उपस्थित करूँ, मैं इस दुःखित भूमिके सर्वश्रेष्ठ रत्न, आदर्श देशभक्त, धुरंधर राजनीतिज्ञ, और अपनी मृत्युपर्यंत भारतवासियोंके अनन्य नेता प्रातःस्मरणीय लोकमान्य बाल गंगाधर तिलककी स्वर्गीय आत्माको नमस्कार किए बिना नहीं रह सकता, जिनकी शोकमय अनुपस्थिति आज हम सब लोग अनुभव कर रहे हैं। मुझे विश्वास है कि उनका निर्भीक, निःस्वार्थ और एकलक्ष्य जीवन अनन्त कालतक भारतीय देशभक्तोंके लिए आदर्शका काम देगा और इस राष्ट्रीय महासभाकी समस्त कार्यवाहीमें लोकमान्यकी अदृष्ट आत्मा हमारे उत्साहको बनाए रखती हुई हमारी नायक और मार्ग-प्रदर्शक होगी।

युरोपीय महायुद्धका असर

वर्तमान राजनैतिक परिस्थितिपर दृष्टि डालते हुए मुझे युरोपीय महायुद्धसे पूर्व जानेकी कोई आवश्यकता अनुभव नहीं होती। युद्धसे पूर्वकी स्थिति, देशका बढ़ता हुआ दारिद्र्य, राष्ट्रीय महासभाकी निर्बलता, उस समय राष्ट्रीय कहलानेवाले पक्षकी तितरबितर अवस्था और व्यापक नैराश्यका चित्र हममेंसे अधिकांशके नेत्रोंके सम्मुख है। महायुद्धने भारतके राजनैतिक शरीरमें एक नई जान डाली। अनेक तरहसे और अनेक अर्थोंमें उसके देशभक्त भारतवासियोंने इंग्लैंडकी उस आपत्तिको अपने लिए एक अवसर समझा। इंग्लैंड तथा उसके साथियोंने अपनी उस आपत्तिमें सहायता प्राप्त करनेके लिए उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन, आत्म-निर्णय और छोटे निर्बल राष्ट्रोंकी स्वतंत्रताके प्रलोभन भारत तथा अन्यपीड़ित राष्ट्रोंके सम्मुख रखे। भारतके साथ साम्राज्यके अन्दर तुल्याधिकार और उत्तरदायित्व पूर्ण शासनका स्पष्ट वादा किया गया। एक नए राष्ट्रसंघ (लीग ऑफ नेशन्स) की स्थापनाकी घोषणा की गई, जिसमें भारतको भी बराबरका स्थान दिया गया, और जो भविष्यके लिए छोटे राष्ट्रोंकी स्वतन्त्रता-

की विशेष संरक्षक बननेवाली थी। टर्कीके विरुद्ध सहायता प्राप्त करने अथवा युद्धके समयमें मुसलमानोंके चित्तोंको बहलाए रखनेके लिए उनसे स्पष्ट प्रतिज्ञा की गई कि युद्धमें इंग्लैंडकी विजय होनेपर तुर्की साम्राज्यको कोई हानि न पहुँचाई जावेगी।

भारतवासियोंके भोले हृदय और भी अधिक उत्साह और आशाओंसे भर गये। इस दुःखित देशके अनेक रहनेवालोंको ब्रिटिश छत्रच्छायामें सुख, समृद्धि और स्वतन्त्रताके दिन सामने दिखाई देने लगे। भारतीय अन्न, भारतीय धन और भारतीय रक्त ब्रिटिश साम्राज्यकी सहायताके लिए पानीकी तरह बहाया गया। तथापि कतिपय दूरदर्शी लोगोंके चित्त उस समय भी शंकासे खाली न थे, क्योंकि भारतरक्षा-कानून का भयंकर दुरुपयोग बराबर जारी था, तथापि समझाया गया कि वह कानून केवल युद्धके समयके लिए था और ऐसे संकटसमय दोषी और निर्दोषमें निर्णय करना अधिक सरल नहीं होता।

असहयोग क्यों?

किन्तु जब जर्मनी और उसके साथियोंके परास्त होतेही इंग्लैंड और उसके साथियोंके समस्त वादे झूठे साबित होने लगे; जब कि छोटे राष्ट्रों-की स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेके स्थानपर विजयी शक्तियोंने उन्हें एक एक कर हड़पना शुरू किया, जब कि 'उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन' के नामसे भारतको वह नए शासन-सुधार मिले जिन्हें राष्ट्रीय दलके लगभग समस्त नेताओंने एक स्वरसे 'असन्तोष-प्रद और नैराश्य-जनक' बताया, जब कि इन नए सुधारोंके रहे संहे गुणोंको भी छलयुक्त नियमों और उपनियमोंके इन्द्रजालमें फँसाकर मटियामेट कर दिया गया, जब कि भारत-रक्षा कानूनके अत्याचारको बढ़ाने और स्थायी कर देनेके लिए और इस चिरपीड़ित देशकी समस्त राजनैतिक आकांक्षाओं और चेष्टाओंको सदाके लिए कुचल डालनेके उद्देश्य से पुलीस और वैयक्तिक शासकोंकी सत्ताको अनियमित कर देनेवाले 'रौलट' कानूनोंकी तजवीज हुई, जब कि नया राष्ट्रसंघ (लीग ऑफ नेशन्स छोटे राष्ट्रोंकी स्वतन्त्रताका संरक्षक होनेके स्थानपर केवल आन्तरराष्ट्रीय लुटेरों और हत्यारोंका एक समूह साबित हुआ और जब कि इंग्लैंडके प्रधान-मन्त्री तथा मंत्रिमंडलकी प्रतिज्ञाओंके स्पष्ट विरुद्ध तुर्की साम्राज्यके टुकड़े

टुकड़े कर दिये गये और खलीफतुल मुसलमीन सुलतान टर्कीको क्रियात्मक दृष्टिसे मित्र सेनाओंके (किन्तु टर्की या भारतके मित्र नहीं वरना एक दूसरेके) हाथका कैदी बना डाला गया तो भारतके हिन्दुओं, मुसलमानों तथा अन्य धर्मावलम्बियोंकी आँखे खुल गयीं।

ऐसे संकटके समय महात्मा गांधीने राष्ट्रीय जीवनपर रौलट कानूनके भयंकर भावी परिणामोंको सामने देखते हुए सत्याग्रह जैसे निर्दोष निरुपद्रव आन्दोलनको प्रारम्भ किया, किन्तु इस पवित्र आन्दोलनको कलंकित करने और उसे कुचलनेका बहाना ढूँढ़नेके लिए जिस प्रकार अनेक स्थानोंपर जनताको भड़काया गया और जनतामें ब्रिटिश सत्ताका भय और त्रास उत्पन्न करनेके लिए पंजाबमें जिस प्रकारके अनसुने और अमानुषिक अत्याचार किये गये उन्हें बराबर दोहरा कर मैं आप सज्जनोंके हृदयोंमें सोये हुए दुःख और क्रोधको फिरसे जगाना नहीं चाहता। मेरी तुच्छ बुद्धिके अनुसार भारतको सर माइकल ओडवायर, जनरल डायर, कर्नल वास्वर्थ,स्मिथ इत्यादिपर और उनसे भी बढ़कर लॉर्ड चेम्सफोर्ड, मि. मॉंटेग्यु और पार्लमेंटके उन मेम्बरोंपर, जिन्होंने सर माइकल ओडवायर आदि के कृत्योंका अनुमोदन किया, क्रुद्ध होनेके स्थानपर उनका कृतज्ञ होना चाहिए। क्योंकि इन लोगोंने ब्रिटिश साम्राज्य और ब्रिटिश शासकोंकी ओरसे हमारे डेढ़सौ वर्षके भ्रमोंको सदाके लिए दूर कर दिया। मोह और अज्ञानका पर्दा भारत-संतान की आखोंपरसे हट गया और उन्हें स्पष्ट दिखाई दे गया कि इस विस्तृत साम्राज्यके अन्दर उनकी वास्तविक स्थिति क्या है और क्या हो सकती है।

जब कि तुर्की साम्राज्यके अंगभंगने हमपर यह बात अच्छी तरह रोशन कर दी कि ब्रिटिश नीतिज्ञों या ब्रिटिश शासकोंके वचनों, उनके वादों और प्रतिज्ञाओंपर अणुमात्र भी विश्वास नहीं किया जा सकता। पंजाब के अत्याचारों और उनके अनुमोदनने हमें इस सत्यता का पाठ पढ़ाया कि इन नीतिज्ञों और शासकोंके हृदयोंमें भारतवासियोंकी जान,उनके माल, उनके रक्त और उनकी स्त्रियोंके मानतकका कोई भी मूल्य नहीं है। हमारी स्थिति हमपर साफ जाहीर हो गयी। इसके बाद देशके कर्मवीर नेताओंके हृदय और भी अधिक काँप उठे, जब उन्होंने इस बातपर विचार

किया कि भविष्यमें इन सब घटनाओंके हो चुकने पर और महायुद्धके परिणामरूप इंग्लैंडके गर्व और उसकी शक्तिके बढ़ जानेपर भारतके लिए अपने राष्ट्रीय मान अथवा राष्ट्रीय अस्तित्वको बनाए रखना और भी अधिक दुष्कर हो जावेगा। मुझे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि ऐसी परिस्थितिमें भारतको अपमान-युक्त जीवन और अपमानयुक्त मृत्युसे बचानेके केवल दो-ही उपाय हो सकते थे। सशस्त्र विद्रोह अथवा सार्वांगिक असहयोग। और पश्चिमी सभ्यताके दोषोंको पहचाननेवाले तथा पूर्वीय सभ्यताके गुणोंको जाननेवाले किस भारतवासीको यह देखकर हर्ष न होगा कि इस कठिन समयमें भारतने अपनी प्राचीन सभ्यताके अनुरूप दूसरे उपायकेही प्रयोग का निश्चय किया। जो लोग धार्मिक दृष्टिसे दोनों उपायोंमें कोई अन्तर नहीं देखते वह भी क्रियात्मक राजनीतिकी दृष्टिसे इस दूसरे उपायकोही सम्भव तथा समयोचित स्वीकार करते हैं।

सज्जनो, इस समय जब कि असहयोगका सूर्य इतना चढ़ चुका है मेरे लिए उसके सिद्धान्त या उसकी नीतिपर बहस करना केवल धृष्टता करना होगा। इंडियन नॅशनल कॉंग्रेस असहयोगके सिद्धान्त, उसकी नीति और उसके प्रथम चरणके कार्यक्रम तीनोंको स्वीकार कर चुकी है। मुस्लिम लीग, सिक्ख लीग आदि अन्य जातीय संस्थाएँ भी उसे अंगीकार कर चुकी हैं। भारतीय जनता चारों ओर उत्साहके साथ उसे अपनाती जा रही है। किसी कारणवश मध्यप्रान्त तथा बरारका मत कलकत्तेमें असहयोग प्रस्तावके विरुद्ध रहा किन्तु जिन लोगोंको इस विषयमें कोई संदेह हो उन्हें मैं विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि इस प्रान्तकी जनता भी असहयोग आन्दोलनके पूरी तरह और हृदयसे साथ है। कौंसिलोंके बहिष्कारमें शायद किसी प्रान्तने भी इतना अच्छा नतीजा न दिखाया हो जितना मध्यप्रान्तने। पहले चुनावमें यहाँ ९ सीट बिलकुल खाली पडी रही और १५ अन्य सीटोंके लिए केवल एक एक उम्मीदवार था जिसके कारण वोट लेने ही की कोई आवश्यकता नहीं हुई। शेष सीटोंके लिए भी वोट देने-वालोंकी संख्या बहुतही कम रही। इसके अतिरिक्त पिछले दिनों जब कॉंग्रेसके प्रचारके लिए मुझे प्रान्तके अनेक नगरों और स्थानोंमें जानेका अवसर मिला तो मैंने अच्छी तरह देख लिया कि प्रान्तकी जनता सर्वथा असहयोगके पक्षमें है।

असहयोगका अर्थ

ऐसी दशामें मैं असहयोगके सिद्धान्त आदि पर आपका अधिक समय नष्ट करना नहीं चाहता। किन्तु दो शब्दोंमें यह बता देना चाहता हूँ कि मेरी समझमें असहयोग आन्दोलन भारतके रहनेवालों और वर्तमान शासकोंके बीच एक रक्तपात-शून्य और निरुपद्रव किन्तु व्यवस्थित तथा गम्भीर युद्ध है, जिसमें शासकोंसे हर प्रकारकी सहायता तथा सम्बन्ध खींच कर भारत यह देखना चाहता है कि वह बिना इन शासकोंकी सहायताके अपने राष्ट्रीय जीवनकी समस्त आवश्यक क्रियाएँ चला सकता है या नहीं और वह शासक भी बिना भारतकी सहायताके अपने ब्रिटिश भारतीय शासकको कायम रख सकते हैं या नहीं। अन्तिम लक्ष्य, जितने शीघ्र हो सके, भारतमें इस प्रकारकी स्वावलम्बी और स्वतन्त्र संस्थाएँ स्थापित कर देना है जिनके द्वारा हमारे राष्ट्रीय जीवनके समस्त व्यवहार आसानीसे चल सकें और जिनके कारण विदेशियोंके देशमें होते हुए भी हम स्वतन्त्र हो जावें अर्थात् बिना उनके पूछे गिनेही हमें वास्तविक और पूर्ण स्वराज्य प्राप्त हो जावे। यही संक्षेपमें असहयोगका वास्तविक अर्थ और उसका अभिप्राय है। असहयोग कार्यक्रमके प्रथम चरणके अन्तर्गत पृथक् पृथक् अंगों अर्थात्, खिताबों, अवैतनिक पदवियों, सरकारी दरबारों इत्यादिके त्याग, सरकारके अधीन स्कूलों, कालेजों, न्यायालयों और नई कौंसिलोंके बहिष्कार, मेसोपोटिमियामें सेनाके लिए भरती होनेसे इन्कार, और विदेशीय वस्तुओंके परित्यागके विषयमें भी मुझे आपसे अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है। हाँ, इतना मैं अवश्य कहूँगा कि मेरी रायमें हमारी गति नए सालके साथ अब अधिक तेज होनी चाहिए।

इस कार्यक्रम पर मुख्य एतराज यह किया जाता है कि यह नाशात्मक अर्थात् डिस्ट्रक्टिव अधिक है, रचनात्मक अर्थात् कन्स्ट्रक्टिव नहीं। मैं रचनाकी आवश्यकता और उसकी उपयोगितासे इन्कार नहीं करता। किन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा कि वास्तवमें हमारा मुख्य काम अभी इस समय नाश करना है, रचना करना नहीं। हमें इस समय वर्तमान शासकोंके मान, देशवासियोंके ऊपर उनकी मानसिक तथा नैतिक पकड़, और उनके प्रेस्टीजका नाश करना है क्योंकि वास्तवमें यही उनके भारतीय शासनकी

जड़ें हैं। इस नाशमें से ही हमें विश्वास है कि हम अति शीघ्र अपने लिए आवश्यक रचना भी अवश्य कर लेंगे, किन्तु पहले नाश अर्थात् डिस्ट्रक्शन और पीछे रचना अर्थात् कन्स्ट्रक्शन।

इसके अतिरिक्त जो सज्जन रचनाके इतने विश्वासी हैं उनसे मैं पूछता हूँ कि हमारे एक कामके करते हुए दूसरे कामको जिसके महत्त्वको वह इतनी अच्छी तरह समझते हैं वे अपने हाथोंमें क्यों नहीं लेते और यदि अभी तक उनकी रचनाका, राष्ट्रीय विद्यालयोंके स्थापन करनेका समय नहीं आया तो वह कब आवेगा? यदि कलकत्ता-कॉंग्रेससे अब तक अहमदाबाद और अलिगढ़में राष्ट्रीय विश्वविद्यालयोंकी नींव रखी गई तो वह सरकारी शिक्षाके नाशकी चिन्तामें लगे हुए महात्मा गांधी और अलीभाई द्वाराही रखी गई। समय मैदानमें आकर काम करनेका है, एतराज करनेका नहीं।

स्कूलों और कालेजोंके सम्बन्धमें मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। वह यह कि यदि वह शिक्षा बुरीके स्थान पर अच्छी और विषके स्थानपर अमृत भी होती तो भी उसका परित्याग ही इस समय हमारा राष्ट्रीय धर्म होता। असहयोगके मूल सिद्धान्त और उसके वास्तविक रूपके अनुसार जिसका ऊपर वर्णन कर चुका हूँ हमें शासकोंकी ओरसे मिलनेवाली अच्छी और बुरी दोनों तरहकी वस्तुओंका परित्याग कर देना चाहिए और एक एक कर हर बातमें स्वतन्त्रताके साथ अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए। इस पवित्र संग्राममें पंजाबके अत्याचारोंसे रंगे हुए हाथों और टर्की तथा मुसलमानोंके साथ विश्वासघात करनेवाले हृदयोंसे विष और अमृत दोनों-ही हमारे लिए एक समान है।

वकीलोंसे वकालत छुड़वाने पर जो एतराज किये जाते हैं उनमेंसे एक यह भी सुना जाता है कि पहले मुकद्दमेवालोंसे अदालतोंका बायकाट कराया जावे। पीछे वकीलोंसे रोजी छीननी चाहिए। मुझे इस एतराज पर आश्चर्य होता है। कलकत्तेका प्रस्ताव वकील और मवक्किल दोनोंहीसे अदालतोंके बायकाटकी प्रार्थना करता है। प्रश्न यह नहीं है कि पहले किसकी रोज़ी छीनी जावे या किसको हानि पहुंचाई जावे। प्रश्न यह है कि दुःखित तथा अपमानित देशके नामपर पहले कौन स्वार्थत्यागका

नमूना बनें। और कोई आश्चर्य नहीं यदि देश पहले उन लोगोंसे स्वार्थ-त्यागकी आशा करता हो जिनके हाथोंमें अभी तक देशके राजनैतिक जीवनकी बाग रही है। हमें इस पवित्र संग्राममें विजय प्राप्त करनेके लिए उन अनेक एकनिष्ठ सच्चे स्वार्थत्यागी नेताओंकी आवश्यकता है जो कालेज और विश्वविद्यालयोंसे निकलनेवाले तथा अन्य सहस्रों युवकोंकी सेनाएँ संगठित कर उनके द्वारा देशमें चारों ओर स्वतन्त्र संस्थाएँ कायम कर दें। और इस कार्यमें देशभक्त वकीलोंके लिए वकालत छोड़ कर सेवाका बहुत बड़ा क्षेत्र है।

इसके अतिरिक्त कई तरहके एतराज असहयोग कार्यक्रमके ऊपर किए जाते हैं, किन्तु सच यह है कि मुझे इनमेंसे अनेकमें अर्जुनका-सा मोह,उसकी झिझक, और उसका कार्पण्यदोषही दिखाई देता है। ऐसी सूरतमें मेरी ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि वह हमारे तथा हमारे नेताओंके हृदयोंसे इस मोह, कार्पण्य इत्यादिको शीघ्र दूर कर हमें इस राष्ट्रीय धर्मयुद्धके लिए तत्पर करें।

अन्तमें मैं उन सब सज्जनोंसे जो भारतीय जनताके प्रतिनिधिके रूप इस राष्ट्रीय मन्दिरके पवित्र मंडपमें एकत्रित हुए हैं और जो वास्तवमें नवीन भारतके विचारों, उसके आदर्शों और उसकी आकांक्षाओंके रच-यिता हैं, और विशेष कर उन पूज्य नेताओंसे जिनका यह देश उनकी अनेक अमूल्य सेवाओंके लिए ऋणी है, अत्यन्त विनीत किन्तु दुःखित हृदयके साथ अपील करता हूँ कि वह इस कठिन समयमें देशकी ओर अपनी जिम्मेवारी और उनसे देशकी आशाओं तथा प्रतीक्षाओं पर गम्भीरताके साथ विचार करें। यह विचार कर देखें कि देशके अन्दर तथा बाहरकी दोनों परिस्थितियोंकी दृष्टिसे इस प्रकारके अवसर बार बार नहीं आते। बाहरकी स्थितिके विस्तृत वर्णनमें मैं आपका समय लेना नहीं चाहता। उसे आपके अनुमानके लिए छोड़ कर, देशकी भीतरकी केवल दो बातोंकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। एक वर्त-मान समयकी हिन्दु-मुस्लिम एकता और दूसरी जनताकी असाधारण जागृति।

कौमी एकता तथा जनजागरण

आपको यह स्वीकार करना होगा कि हिन्दु-मुस्लिम एकता इस चिर दलित देशके दुःखोंको दूर करनेके लिए सबसे पहली और आवश्यक शर्त

है। यह एकता इस समय दिल्लीके घंटाघरके नीचे और जालियनवाला बागमें हिन्दु-मुस्लिम भाइयोंके मिले हुए रक्तसे सींची जा चुकी है। टर्कीके अंगभंग और खलीफतुल मुसलमीनकी क्रियात्मक कैदने हमारे मुसलमान भाइयोंके नेत्रोंके सम्मुख ब्रिटिश शासकोंकी नीयत और अपनी जन्मभूमि भारतवर्षकी ओर उनके अपने कर्तव्यका सच्चा चित्र खींच दिया है। ऐसे अपूर्व अवसरपर देशके दुःखोंको दूर करनेके एक मात्र उपाय असहयोग आन्दोलनमें पूरे उत्साहके साथ अग्रसर न होते दिल्ली और जालियानवाला के शहीदोंका निरादर करने, मुसलमानोंके बढ़ते हुए हृदयों और हाथोंका तिरस्कार करने, भविष्यके लिए हिन्दु-मुस्लिम एकताकी जड़को खोखला कर देने और देशकी ओर विश्वासघातके पापके भागी होनेके तुल्य होगा। देशबन्धुओ, आपको अपने हृदयोंपर यह बात अच्छी तरह अंकित कर लेनी चाहिये कि पिछड़े हुए राष्ट्रोंके जीवनमें इस प्रकारके अवसर बार बार नहीं आते। और ऐसे अपूर्व अवसरके सामने होते हुए एक बार चूक जानेका परिणाम फिर सदियोंके लिए अथवा सदाके लिए हाथ मलते रह जाना होता है।

दूसरी बात जिसका मैंने ऊपर संकेत किया है, इस समयकी जनता-की असाधारण जागृति है। मुझे सन्देह है कि आपमेंसे अनेकोंको शायद इस जागृति का अभी पूरा अनुमान नहीं हुआ, किन्तु मैं भारतीय शिक्षित समाजके नेताओंको अत्यन्त नम्रताके साथ सावधान कर देना चाहता हूँ कि यदि उन्होंने इस सार्वजनिक जाग्रतिसे पूरा पूरा फायदा न उठाया और देशके निस्तारके लिए वर्तमान आन्दोलनमें अग्रसर हो अपनी निःस्वार्थता तथा सत्यता का परिचय न दिया, तो आन्दोलन-के लिए परिणाम चाहे कुछ भी हो या न हो, किन्तु जनताका विश्वास सदाके लिए उनके ऊपरसे ऊठ जावेगा। मैं यह बता देना चाहता हूँ कि कलकत्ता काँग्रेसद्वारा स्वीकृत कार्यक्रममें किसी प्रकारकी ढिलाई करने या पीछे हटनेकी चेष्टा-मात्रका परिणाम भी उनके नेतृत्व और उनके राज-नैतिक जीवनके लिये अत्यन्त अहितकर होगा। इसलिए फिर एकबार आप सज्जनोंसे अपील करता हूँ कि आप इस मंडपमें गम्भीरता तथा साहस के साथ अपने कर्तव्य और अपनी जिम्मेवारीका निर्णय कर अपनी शक्ति भर उसके पालनमें अग्रसर हों।

व्यापारी भाइयोंसे

इसके बाद मैं अपने उन व्यापारी भाइयोंसे जो अभी तक राष्ट्रकी आवश्यकताओं और देशके राजनैतिक जीवनकी ओरसे अधिकतर उदासीन रहे हैं, निवेदन करना चाहता हूँ कि उनकी भी इस भूमिकी ओर जिसमें वह उत्पन्न हुए हैं, कुछ विशेष जिम्मेवारी है वह भी इस राष्ट्रीय संकटके समय अपनी जिम्मेवारीको सोचें और शान्ति-पूर्वक विचार करें कि यदि ब्रिटिश राज्यके नीचे अभी तक उन्होंने धन एकत्रित किया है तो वह देशको सुखी करके नहीं वरन् उसे अधिकाधिक निर्धन और दरिद्र बना कर। विदेशीय व्यापार अथवा सट्टे द्वारा अपनी लाखों और करोड़ोंकी आमदनीपर गर्व करते समय उन्हें याद कर लेना चाहिए कि देशकी बढ़ती हुई दरिद्रताके परिणामरूप इस समय कमसे कम तीन करोड़ मर्द, औरतें और बच्चे इस देशमें ऐसे हैं जिन्हें २४ घंटोंमें एक समय पेटभर अन्न मिलना गनीमत है। मेरे व्यापारी भाइयो, आपके लिए भी परीक्षाका और अपने जीवनको सफल करनेका यह सबसे अच्छा समय है। यदि आप सोचें तो आपको मालूम होगा कि आपका और आपके भावी व्यापारका सच्चा हित भी इसीमें है कि अपनी वर्षोंकी उपेक्षा तथा कायरताको त्याग कर इस राष्ट्रीय यज्ञमें आप पूरा पूरा भाग लें। यदि आप इस समय चूक गये तो आप न केवल अपनी भावी सन्तानके लिए सच्चे व्यापारका द्वार ही सदाके लिए बन्द कर देंगे; वरन् देश तथा राष्ट्रकी और कर्तव्यहीनताके पापके भागी होकर अपनी आत्माओंको भी कलंकित करेंगे। और यदि आप अपने धनकी आहुतियाँ हाथमें लेकर इस राष्ट्रीय यज्ञकी ज्वालाको बढ़ानेके लिए आगे बढ़ेंगे तो इस पवित्र यज्ञकी पूर्ति और उसकी सफलताके कारण बनकर आप अपने तथा अपनी जातिके यशको सदाके लिए उज्ज्वल करेंगे। मुझे विश्वास है कि भारतके व्यापारी इस परीक्षामें अवश्य उत्तीर्ण होंगे।

भारतके युवकों युवतियोंसे मैं केवल इतना कहना चाहता हूँ कि यदि वह इस राष्ट्रीय आन्दोलनकी ओर अपनी जिम्मेवारी को समझना चाहते हैं तो वह इस प्रकारके संग्रामों अथवा अन्य राष्ट्रीय संग्रामोंके समयके अन्य देशोंके

इतिहासोंको पढ़ लें। अपने इस निरुपद्रव आन्दोलनमें भारत उनसे वैसेही अनन्य और व्यवस्थित सेवाकी आशा करता है जैसी रूस, आयर्लेंड, मिश्र चीन इत्यादिकी क्रांतियोंके समय वहां के युवकों और युवतियोंने अपने अपने देशोंकी की। मैं इस विषयको अधिक विस्तार देना नहीं चाहता। किन्तु यह अवश्य कहना चाहता हूँ कि देशको सबसे अधिक स्वार्थत्यागकी आशा युवकों और युवतियोंके पवित्र हृदयोंसे है।

साधारण जन-समाजसे कुछ कहना मैं अपने लिये केवल धृष्टता समझता हूँ। क्योंकि वर्तमान राष्ट्रीय अधोगतिका सबसे अधिक भार और हमारे पापोंका फल अधिकतर उन्हींको सहना पड़ रहा है और आजतक किसी भी क्रियात्मक राष्ट्रीय चेष्टामें वह न देशके शिक्षित समुदायसे पीछे रहे और न भविष्यमें रह सकते हैं।

सच यह है कि इस महान् यज्ञमें महान् आहुति की आवश्यकता है। बिना स्वार्थत्याग और कुर्बानीके कोई राष्ट्रीय चेष्टा सफल नहीं हो सकती; और एक इतनी बड़ी चेष्टाको सफल करनेके लिए, इस प्राचीन देशको दासता और अपमानके बंधनोंसे मुक्त करानेके लिए, हममें किसी व्यक्तिको किसी कुर्बानीसे भी पीछे नहीं हटना चाहिए। आवश्यकता केवल हमारे हृदयोंमें सत्यता, श्रद्धा और प्रेमके बलकी है। सज्जनो, इस समस्त स्थितिको ध्यानसे देखते हुए मेरा अपना हृदय आशासे भरा हुआ है। मुझे इस आन्दोलनकी अन्तिम विजयमें कुछ भी सन्देह दिखाई नहीं देता। विशेष कर जब कि मैं इस बातको देखता हूँ कि इस आन्दोलन में हमारा मार्गप्रदर्शक एक इस प्रकारका व्यक्ति है जिसने अपने बढ़े हुए आत्मबल, अपनी दीर्घ तपस्या, अपनी अनन्य सत्यनिष्ठा, अपने स्पष्ट तथा सरल जीवन, अपनी आश्चर्यजनक निर्भीकता और अपनी अनुपम निःस्वार्थता द्वारा देशके बच्चे बच्चेके हृदयमें स्थान पा लिया है, जिसे अनेक क्रियात्मक राजनैतिक संग्रामोंका अनुभव है और जिसके हाथोंमें दुःखित भारतीय जनताने अपने राष्ट्रीय जीवनकी बाग सौंप दी है। हमें इस समय अपने छोटे छोटे अथवा संकीर्ण विचारोंको छोड़कर केवल आन्दोलनकी सफलता की ओर दृष्टि रखनी चाहिए।

इतने बड़े संगठनके लिए धनकी भी आवश्यकता होगी। और मेरी राय है कि ऑल इंडिया कॉंग्रेस कमिटीमें इस कामके लिए काफी धन दिया जाना चाहिये। आप सज्जन इसके लिये जो व्यवस्था उचित समझें कर सकते हैं। उदाहरणके लिए १००० रु. या इससे अधिक वार्षिक आयके प्रत्येक कॉंग्रेसमैन-से उसके इनकम टैक्सके बराबर या उससे कुछ कम राष्ट्रीय टैक्स कॉंग्रेसकी ओरसे लिया जा सकता है और प्रत्येक वर्ष कॉंग्रेस-के अन्तिम दिन राष्ट्रीय फंडके लिए अपील की जा सकती है।

दो शब्द मैं कॉंग्रेसकी व्यवस्था अर्थात् कॉन्स्टिटयूशनके विषयमें और कहना चाहता हूँ। आप इस व्यवस्थामें परिवर्तन करनेवाले हैं। मेरा जन्म राजपुतानेकी एक रियासतमें हुआ है। मेरी और मेरेसे विचार रखनेवाले और भी अनेक लोगोंकी यह इच्छा है कि आप देशी राजाओं और उनकी प्रजाको अब अपनी नई व्यवस्थासे बाहर न रखिये। देशी रियासतोंके रहनेवाले भी भारतीय राष्ट्रका एक प्रधान अंग है और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अनेक देशी राजाओंकी हार्दिक सहानुभूति आपके साथ है और यदि किसीकी सहानुभूति आपके साथ न भी हो तो वहाँकी प्रजाकी सहानुभूतिमें तो आपको कोई भी शंका न होनी चाहिए। ऐसी अवस्थामें राजाओंका हित भी इसीमें होगा कि वह आपके साथ रहें इसलिए मेरी और अनेक लोगोंकी यह उत्कंठा है कि आप देशी राजाओं और उनकी प्रजा दोनोंको अपनी नई व्यवस्थामें स्थान दें।

दूसरी बात इस व्यवस्थाके विषयमें मुझे आपसे यह कहनी है कि यथासम्भव आप अधिकांश भारतवासियोंकी मातृभाषा और समस्त भारत-की भावी आन्तरप्रान्तीय भाषा हिन्दुस्तानीको भी अपनी व्यवस्थामें उचित स्थान दें ताकि शीघ्र इस राष्ट्रीय महासभाकी कार्यवाहीमें हम एक विदेशीय भाषाके प्रयोगको कम कर सकें और अधिकाधिक भारतवासियोंको कॉंग्रेसके काममें भाग लेना या उससे लाभ उठानेका अवसर दे सकें।"

इस भाषणका असर श्रोतृवर्गपर जादूका सा हुआ। नागपुरके साप्ताहिक पत्र 'महाराष्ट्र' ने लिखा था—"सेठ जमनालालजीका भाषण

कट्टर असहयोगीको फबनें लायकही हुआ। आप अपने काममें उत्कृष्टतया सफल हुए।"

सभापतिके चरित्रकी रेखाएँ

स्वागताध्यक्षके भाषणके बाद पं. बिसनदत्त शुक्लने सभापतिका सुझाव हिन्दीमें पेश किया। महात्माजीने उसकी ताईद हिन्दीमें ही की। लेकिन लाला लजपतराय तथा बॅ. दासने अपनी अनुमति अंग्रेजी भाषणद्वारा प्रगट की। मौलाना महंमदअलीका वक्तव्य उर्दूमें हुआ। यह प्रस्ताव तालियोंकी बौछारमें सम्मत हुआ, और सभापतिजीको पुष्पहार पहनाया गया। मंडपके बाहर जो लोग थे वे शोर मचाकर अंदर घुसने लगे! उन्हें गांधीजी और शौकतअलीने बाहर जाकर शांत किया।

अध्यक्षजी अपना अभिभाषण पढ़ सुनाने लगे, लेकिन इतने विशाल जनसमुदायको वह सुनाई नहीं दे रहा था। उस वक्त दूरध्वनिक्षेपकोंका अभावही था। लेकिन ध्वनिक्षेपका कार्य कर सकनेवाले बंगाली वक्ता वहाँ मौजूद थे। उनमेंसे श्री. बिपिनचंद पालने टेबलपर खड़े होकर वह भाषण पढ़ सुनाया। भाषण एक प्रदीर्घ प्रबंध ही था। इस पुस्तकके पचास साठ पृष्ठोंतक उसका विस्तार था। इसलिए उसके अंतिम हिस्सेका सार खुद सभापतिमहाशयने निवेदित किया।

सभापति श्री. विजयराघवाचार्य ७० सालके मशहूर वकील थे। यों तो इस महत्त्वपूर्ण अधिवेशनका अध्यक्षपद लोकमान्य तिलकजीके सुपूर्द करनेका इरादा था। लेकिन वे तो स्वर्ग सिधार गये थे। अरविंद बाबू और म. गांधीजीने उसे अस्वीकार किया था, और लालाजी चार-ही महीने पहले कलकत्ता काँग्रेसके सभापति बन चुके थे। नौ प्रान्तोंमेंसे छह प्रान्तोंने श्री. विजयराघवाचार्यका नाम सुझाया था। शेष प्रान्तोंने अपनी राय नहीं भेजी थी।

श्री. विजयराघवाचार्यको हिन्दुमुसलमानोंके दंगेके सिलसिलेमें आजीवन काले पानीकी सजा दी गयी थी। लेकिन हाईकोर्टमें वे निर्दोष साबित हुए और बरी हो गये। मद्रासके विधिमंडलमें तथा वरिष्ठ विधानसभामें लोकपक्षके प्रतिनिधिके नाते अपने भरसक उन्होंने बड़ा तेजस्वी कार्य

किया। व्हाइसराय लॉर्ड हार्डिजपर दिल्लीमें बम छोड दिया था। उसके बाद सरकारने दिल्लीकी विधानसभामें 'कॉन्स्पिरेटर्स बिल' पेश किया, उसका विरोध करनेवाले अकेले 'विकर्ण' थे श्री. विजयराघवाचार्य। सरकारकी बहाल की हुई दीवानबहादुरी तो उन्होंने लीलया ठुकरा दी थी। मॉटफर्ड सुधारोंका उन्होंने खुले आम विरोध किया था। इन सब कारणोंसे लोगोंके दिलमें उनके बारेमें समादरकी भावना थी। उन्होंने कहा—"हमारे सामने जो कार्य है वह जितना बडा है उतनाही कठिन भी है। हमारे बादशाह और संसारके श्रेष्ठ पुरुषोंको एक संदेश भेजना हमें आवश्यक मालूम होता है। वह यह कि ब्रिटिश सरकारने हिन्दुस्थानकी रिआयाकी बडी दुर्दशा कर डाली है। इसके आगे उसे बरदाश्त करना असंभव है। हिन्दुस्थानियोंने अपने देशको समृद्ध तथा सुरक्षित बनानेका बीडा उठाया है। अगर इस निश्चयको कार्यान्वित करनेमें विलंब हो जाय, तो उनका सर्वनाश दुर्निवार है। इतनाही क्यों? ब्रिटिश साम्राज्य भी उसके कारण खतरेमें आ जाएगा, और जागतिक शांतिपर आँच आएगी। हमारी कॉंग्रेसका जन्मही हिन्दी राष्ट्रके उद्धारके लिए हुआ है। उसके परिश्रमोंसे राष्ट्रमें राजनीतिक नवजागरण पैदा हुआ है। यह अनिवार्य है कि इस राष्ट्रमें स्वायत्त शासनकी स्थापना अविलंब हो जाय। इंग्लैंड और स्वायत्त उपनिवेशोंके संविधानकी भाँति हिन्दुस्थानको भी शासनविधान प्रदान करके प्रजाके मूलभूत अधिकारोंकी सुरक्षा करनी चाहिये।"

अध्यक्षमहोदयने संकल्पित शासनविधानका मसविदा अपने अभिभाषणके साथ जोड दिया था। उसकी धाराओंका विवरण उन्होंने पांडित्यप्रचुरतासे किया, और उसे बल देनेके लिए दुनियाके नाना देशोंके इतिहासका आधार भी प्रस्तुत किया। राज्यसत्ताके विषयमें हिन्दुओं और मुसलमानोंमें जो परंपरा-प्राप्त विभिन्न विचारप्रवाह मौजूद थे उनका परामर्श भी उन्होंने विद्वत्तापूर्ण रीतिसे किया। प्रथम महायुद्धमें हिन्दुस्थानने इंग्लैंडकी कितनी मदद की और इस उपकारका बदला इंग्लैंडने पंजाब हत्याकांड, खिलाफत, तथा रौलट ॲक्ट आदि अन्यायोंके रूपमें कैसे चुकाया इसका ज्वलंत चित्र उन्होंने अपने भाषणमें खींचा। उन्होंने कहा—"भारतपर किये गये इन अन्यायोंका यथार्थ चित्रण करनेके लिए बर्क जैसा प्रतिभासंपन्न उदात्त-

मनस्क वक्ताही चाहिए।" उन्होंने एक एक करके सरकारके अत्याचारों-पर मर्मांतक आघात कर दिये और कहा,—"इन सारे अत्याचारोंका पुरजोर असरकार इलाज है उत्तरदायी राज्यशासन। उसे हम किस रास्तेसे पाएँगे? क्या बगावतको छोड़ और कोई रास्ता है? इसका जवाब म. गांधी दे चुके हैं। महात्मा गांधीप्रणीत असहयोग आन्दोलनको गैरकानूनी कहना सरासर गलत होगा। क्योंकि इस आन्दोलनके प्रधान तत्त्व है त्याग, कुर्बानी और अहिंसा। लेकिन स्वार्थांध बनकर सरकारने हिन्दुस्थानियोंके साथ आक्रमक असहयोगकी नीति अख्तियार की है।"

कलकत्ता काँग्रेस द्वारा स्वीकृत असहयोगके प्रस्तावका जिक्र करते हुए सभापतिने विधान-सभाओंके बहिष्कारके कार्यक्रमका समर्थन किया। और शिक्षण-संस्थाओं तथा अदालतोंका बहिष्कार करनेके कार्यक्रमकी नुक्ताचीनी भी की। सारी जनताके लिए निःशुल्क प्राथमिक शिक्षाके प्रबंधकी आवश्यकतापर उन्होंने जोर दिया। उन्होंने इस बातकी चेतावनी दी कि समझदार और सचेत लोकमत मौजूद न हो तो लोकतंत्रकी सफलता असंभव है। उन्होंने यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि लोकतंत्रका अधिष्ठान है आम शिक्षा और आम मताधिकार। देशके निर्माणके लिए शिक्षाका प्रसार, श्रमिकोंकी हड़ताल, विदेशी वस्तुओंका बहिष्कार, और इंग्लैंडके श्रमिक दलसे मित्रता—इस आशयका कार्यक्रम उन्होंने सुझाया।

अंतमें उन्होंने कहा, "पिछले दो वर्षमें हिन्दुस्थानकी राजनैतिक तथा आर्थिक जिंदगी बड़ी हो गयी है। इस समय अपनी मुसीबतें बेहद बढ़ गयी हैं। इसलिए मेरी रायमें नागपुरका यह अधिवेशन काँग्रेसके और हिंन्दुस्थानके इतिहासमें थर्मापिली साबित होगा। अपने देशके नये इतिहासके निर्माणका मौका आज हमारे हाथमें है। हमारा भवितव्य अब दो सज्जनोंके हाथमें है और वे हैं एक मॉंटेग्यू और दूसरे म. गांधी। इन दोनोंको हम दो संदेश भेजें। मॉंटेग्यूके लिए संदेश भेजें कि 'यह कीजिए।' गांधीजीके लिए संदेश भेजें कि 'यह न कीजिए।' ये दोनों व्यक्ति अगर इन संदेशोंपर अमल करें तो इस देशका इसी क्षण उद्धार हो सकता है। सरकार अगर हिन्दुस्थानको आर्थिक स्वायत्तता फौरन न देगी तो हिन्दुस्थानियोंके लिए एक सालभर भी ज़िंदा रहना मुश्किल हो जाएगा। इंग्लैंड हिन्दुस्थानको या तो समान साझेदार बनाए या यहाँसे चले जाए।

सभापतिकी भविष्यवाणी सही सावित हुई। नागपुरकी कॉंग्रेस सही मानेमें थर्मापिली सिद्ध हुई। राना प्रतापकी हल्दी घाटी या बाजी प्रभुकी पावनखिंडकी भाँति इतिहासमें वह महत्त्वपूर्ण ठहरी। और अंतमें कॉंग्रेसने अँग्रेजोंको हिन्दुस्थानसे चले जानेके लिए मजबूर किया।

सभापतिके भाषणके बाद श्री. विठ्ठलभाई पटेलने अधिवेशनके लिए प्राप्त शुभसंदेश पढ़ सुनाये। बादमें प्रतिनिधियोंने विषयनियामक समितिके सदस्योंका चुनाव किया। ता. २७ को विषयनियामक समितिकी बैठक हुई।

दूसरे दिन २८ दिसम्बरको दोपहर १२ बजकर २० मिनिट होतेही अधिवेशनका काम शुरू हुआ। प्रारंभमें लड़कियोंने स्वागत-गीत गाया। नागपुरके सुप्रसिद्ध कवि श्री. आनंदराव टेकाड़ेने एक मराठी राष्ट्रगीत गाया। उसमेंसे निम्नलिखित पंक्तियाँ दर्शकोंके कानोंमें गूँजती रही, तथा दिलों में भी।

हे राष्ट्ररूपिणी गंगे, घेई नमस्कार माझा।
स्वतंत्रतेची मूर्ति त्रिभुवनीं म्हणुनि तुझी कीर्ति।
स्वातंत्र्याचें दान कुणा कधि मागुनि कुणिं दिधलें।
याचक वृत्ति सोड सोड ही-कुणीं तुला हें कथिलें॥
ध्यानिं आण सामर्थ्य आपुलें स्वयंप्रकाशी गंगे।
स्वतंत्रता मिळविण्या समर्था तुझी तूंच अभंग॥

[भाव-ओ राष्ट्ररूपिणी गंगे, मेरा नमस्कार स्वीकार करो।
त्रिभुवनमें तुम्हारी कीर्ति स्वतंत्रताकी मूर्तिके रूपमें है।
स्वातंत्र्य का दान कभी किसीको माँगनेपर मिला है?
इस याचकवृत्तिको छोड़ दो-किसने तुम्हें यह नसीहत दी? अपनी सामर्थ्यका खयाल करो; जो कि स्वयंप्रकाशी है, ओ गंगे अपनी आजादी हासिल करनेमें तुम्हीं समर्थ हो।]

इसके बाद उद्दिष्ट-संबंधी पहला प्रस्ताव पेश करनेके लिए सभापतिने म. गांधीका नाम पुकारा। करतल-ध्वनिकी कड़कड़ाहटके बीच गांधीजीने खड़े होकर सबको प्रणाम किया। उन्होंने पहले हिंदीमें और उसके बाद अँग्रेजीमें अपना भाषण दिया।

उद्दिष्टसंबंधी प्रस्ताव

"सभी वैध तथा शांततापूर्ण तरीकोंसे हिन्दुस्थानकी जनताके लिए स्वराज्य प्राप्त कर लेना हिन्दुस्थानकी इस राष्ट्रीय काँग्रेसका ध्येय है।"

इस अभिप्रायका प्रस्ताव गांधीजीने प्रस्तुत किया और उसके समर्थनमें निम्न आशयका भाषण दिया:—

"काँग्रेस अगर इस प्रस्तावको सर्वसम्मतिसे स्वीकार कर लेगी तो मैं मानूँगा कि उसने एक बढ़िया काम किया। मैं समझता हूँ कि इस प्रस्तावपर दो ही आपत्तियाँ उठायी जा सकेंगी। पहली यह कि अँग्रेजोंसे अपना रिश्ता तोड़ देनेका विचार अपने मनमें आज हम क्यों आने देते हैं? लेकिन यह सोचना कि किसी भी हालतमें अंग्रेजोंसे हमारा आजका-सा रिश्ता बना रहने देना चाहिए, अपने देशकी इज्जतके लिहाजसे एक घटिया चीज होगी। यह मेरी अपनी राय है। हम सभी एक गलत खयालको अपने मनमें रखे हुए हैं। उसे हटाना हम सबका फर्ज है।

"हमारे ऊपर जो अन्याय होते रहे हैं उन्हें हटाना तो दूरही रहा, अपनी गलतियोंको कबूल करना तक ब्रिटिश सरकार नहीं चाहती है। सरकारका यह रुख जबतक बना रहेगा तबतक हमारे लिए जरूरी बातोंकी माँग प्रस्तुत करना तक मुश्किल हो रहा है। सारे हिन्दुस्थानको और संसारके भी सामने हमें साफ साफ ऐलान करना चाहिए कि अंग्रेज जनता अगर यह मामूली-सा इन्साफ भी हमारे बारेमें न कर देगी, तो हमारे लिए इंग्लैंडसे अपने रिश्तेको बनाये रखना नामुमकिन होगा।

"क्षणभरके लिए भी मैं यह कहना नहीं चाहूँगा कि किसी भी हालतमें अंग्रेजोंसे हमारा रिश्ता मिटा ही दिया जाए। अंग्रेजोंसे मित्रताके नातेको बनाए रखना अगर हिन्दुस्थानकी उन्नतिके लिए सहायक होता हो, तो इस नातेको मिटाना हम बिलकुल ही नहीं चाहेंगे। लेकिन इस राष्ट्रकी अस्मिताके लिए वह नाता हानिकर होता हो, तो उसे तोड़ डालना हमारा फर्ज हो जाता है।

"यह प्रस्ताव दोनों पृथक् विचार रखनेवाले लोगोंके लिए सुविधा-जनक है। जो लोग मानते हैं कि अंग्रेजोंसे मित्रता बनाए रखनेसे हिन्दुस्थानियों और अंग्रेजोंके दिलोंमें खालिसपन आ जाएगा तथा दोनोंकी

उन्नति होगी, उनके लिए तो इस प्रस्तावमें गुंजाइश है ही। और जिनका ऐसा विश्वास नहीं है उनका भी इसमें शुमार है। उदाहरणके तौरपर श्री. अँड्रयूजकोही ले लें। उनकी रायमें अंग्रेजोंसे हिन्दुस्थानियोंकी मित्रता बनी रहनेकी सारी उम्मीद मिट्टीमें मिल गयी है। उनका कहना है कि हिंदुस्थानको इंग्लैंडसे सब प्रकार अलग और स्वाधीन हो जाना चाहिए। इस विचारके लोगोंके लिए भी इस प्रस्तावमें समाविष्ट ध्येयमें गुंजाइश है।

"दूसरी मिसाल मुझ जैसे व्यक्तिकी या मेरे भाई शौकतअलीकी दी जा सकती है। हमारी निश्चल राय अगर यह होती कि हमें अपनी उन्नति ब्रिटिश सलतनतके मातहत रहते हुए ही कर लेनी चाहिए, चाहे ब्रिटिश सरकार हमारे ऊपर किये जा रहे अन्यायोंको न भी हटाये, तो काँग्रेसके इस नये ध्येयमें हमारे लिए गुंजाइश नहीं रहती। लेकिन यह नया ध्येय लचीला है। इसलिए दोनों विचारोंके लोगोंका उसमें समावेश हो जाता हैं। अब अंग्रेजोंको यह समझ लेना चाहिए कि अगर वे हमारे बारेमें इनसाफ न करें, तो उनके साम्राज्यको तोड़ डालना हरएक हिन्दुस्थानी नागरिकका फर्ज़ हो जाता है।

"अंतमें कलके एक वाक्यका यहाँ जिक्र करना मैं ज़रूरी समझता हूँ। हम जिस स्वराज्यको चाहते हैं उसे कैसे प्राप्त कर लिया जाए इसका एक प्रात्यक्षिक कल बंगालके प्रतिनिधियोंके शिबिरमें दिखाई दिया। उन प्रतिनिधियोंमें थोडी कुछ मतभिन्नता निर्माण हुई जिससे कुछ बहस हुई और अल्प मात्रामें झगडा भी हुआ। जबतक यह दुनिया है तबतक मत-भिन्नता बनी रहेगी। पति और पत्नीके बीच भी मतभिन्नता हो जाती है, एक पति होनेके नाते इस तथ्यको मैं जानता हूँ। माँ-बाप और उनकी संतानके बीच भी मतभिन्नता हो जाती है। चूँ कि मैं चार बच्चोंका बाप हूँ मैं इस बातको भी खूब जानता हूँ। मेरे चारों लड़के इस कदर हट्टेकट्टे हैं कि वे चाहें तो अपने पिताको खतम कर सकेंगे। पति और पिताके नाते मुझे अनुभव हुआ है और मैं मानता हूँ कि आपसमें मतभिन्नता तथा बहस हमेशा बनी रहेगी।

लेकिन मैं आपका ध्यान कलकी बंगाली शिबिरकी घटनाकी ओर दिलाना चाहता हूँ। उस शिबिरमें विभिन्न राय रखनेवाले दोनों दलोंके

लोगोंके समक्ष भाषण देनेका मौका मुझे मिला था। उन्होंने मेरा भाषण ध्यानसे सुना और मेरी दी हुई सलाह बंधुत्व, स्नेह तथा भावुकतासे मान ली। मैंने उन्हें सलाह दी थी कि—

मैं यहाँ न्याय करने नहीं आया हूँ। वह अध्यक्ष महोदयका काम है, लेकिन उनको तकलीफ क्यों दी जाय? आप उनकी ओर न जाइये। यदि आप वीर होंगे, सामर्थ्यवान् होंगे, स्वराज्य-संपादनार्थ उत्सुक होंगे, और उसके लिए आपको काँग्रेसका ध्येय बदलनेकी इच्छा हो तो आप अपना क्रोध म्यान कीजिए, आपके अंतःकरणमें अन्यायकी भावना यदि उफनती हो तो उसे नष्ट कीजिए तथा यहाँकी बातोंको यहीं भूल जाइये।"

बंगाल शिबिरके सारे किस्सेकी जानकारी मैं आपको नहीं देने जा रहा हूँ। आपमेंसे कई उसको जानते भी होंगे। एक ही बातकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। ऐसा नहीं हुआ है कि बंगाली भाइयोंके मतभेद मिट गये हैं। लेकिन उन्होंने यह तय किया है कि वे अध्यक्षमहोदय की ओर जाकर उन्हें कष्ट नहीं देंगे। इन्होंने यह भी तय किया है कि वे विषय-नियामक समिति या इस खुले अधिवेशनमें किसी भी प्रकारके निदर्शन नहीं करेंगे। उनके इस निश्चयके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

इस महासभामें जो बंगाली भाई दृढ़ निश्चयसे आये हैं—या दूसरे जो भाई कुछ निश्चय बनाकर आये हैं—उन सबको मैं इतना ही कहूँगा कि अपने राष्ट्रकी उन्नति किस प्रकार होगी, अपने अधिकारोंकी प्रगति कैसे होगी, तथा अपने राष्ट्रकी इज्जत किस प्रकार कायम रहेगी, इसी एक बातका वे विचार करें। जो बंगाली भाई यह समझते थे कि उनपर अन्याय हुआ है, उनके मस्तकपर आघात हुए हैं, उन्होंने कितनी शांति तथा मिलनसारीसे बर्ताव करनेका निश्चय किया है यह आपमेंसे हरेकको ध्यानमें लेना चाहिये।

काँग्रेसके इस अधिवेशनमें हम जिस महान् संग्रामका आरंभ कर रहे हैं, वह समाप्त होनेके पूर्व हमें शायद, नहीं निश्चयही, खूनकी नहरोंमेंसे जाना पड़ेगा। लेकिन किसीको ऐसा कहनेका मौका देना नहीं चाहिये कि रक्तपातका पाप हममेंसे किसीने किया हो। भविष्यमें पैदा होनेवाली

पीढ़ियोंको यह कहना चाहिये कि हमारे पूर्वजोंनें स्वातंत्र्यप्राप्तिके लिये स्वार्थत्याग किया, अपना खून बहाया, लेकिन औरोंका कभी भी नहीं।

मैं विना दिक्कत कहता हूँ कि, मेरे जिन देशबंधुओंके सिर फूटे होंगे-या फूटनेका संभव था उनके प्रति सहानुभूति दर्शानेकी आवश्यकता मुझे महसूस नहीं होती है। उसमें क्या बिगड़ गया? अपने देशबांधवोंके हाथसे मृत्यु पाना अच्छा ही है। हम किसका और क्यों बदला लें? इसलिए आपमेंसे हरेकसे मैं प्रार्थना करता हूँ कि, अपने किसी देशबंधुके विरुद्ध-चाहे वह सरकारी कर्मचारी हो, खुफिया महकमेमें हो या खुफिया पुलिस में हो—आप उसके विरुद्ध किसी प्रकारका क्रोध या कटुता मनमें न रखिये और 'घूँसेके बदले घूँसा' का व्यवहार न कीजिए। पुलिस द्वारा घूँसा लगाये जानेपर आपने बदलेमें घूँसा लगाया कि आपका कार्य खतमही समझिए।

अहिंसासे एक वर्षमें स्वराज्य

हमारा यह संग्राम अहिंसक है। इसलिये मैं आपमेंसे हरेकको जताता हूँ। आप बदला लेनेकी बुद्धिसे किसीके साथ व्यवहार न करें। क्रोध का त्याग करनेसे आप अधिक वीर बनेंगे। जिन बंगाली भाइयोंने अध्यक्षकी ओर जाकर अपना झगड़ा उनके सामने बयान करनेका इरादा छोड़ दिया उनका मैं अभिनंदन करता हूँ। उनका उदाहरण आँखोंके सामने रखकर अन्य भाइयोंको भी अपने ऊपर किये गये अन्यायको भूल जाना चाहिये।

मेरी तो यह इच्छा है ही कि आप तालियाँ बजाकर इस प्रस्तावको सम्मति देंगे। लेकिन केवल तालियाँ बजाकर आपकी जिम्मेवारी समाप्त नहीं होगी। यह प्रस्ताव अमलमें लानेके लिए आपको श्रद्धा तथा निश्चयको अपनाना चाहिये। आपकी यह श्रद्धा तथा यह निश्चय इतना दृढ़ होना चाहिये कि इस दुनियाकी कोई भी शक्ति उन्हें विचलित नहीं कर सकेगी। श्रद्धाके साथ आपको यह निश्चय करना चाहिये कि हमें जल्दीसे जल्दी स्वतंत्रता प्राप्त करनी है और उसके लिए जिस साधनका हम उपयोग करेंगे वह बाकायदा—याने—सन्मान्य—याने अहिंसापूर्ण—याने शांतियुक्त होना चाहिये।

"इस प्रस्तावसे आप यह निश्चय कर रहे हैं कि भविष्यमें जहाँ तक हमारी नजर पहुँच पाती है, इस सरकारका मुकाबला हम शस्त्रोंसे नहीं कर सकते। जिसको मैं 'आत्मबल' कहता हूँ उसीसे यह प्रतिकार होगा। आत्मबल किसी साधु या संन्यासीका ही मौरूसी हक नहीं। वह प्रत्येक मनुष्यका—स्त्रीपुरुषका साधन है, जिसपर वह काबू रख सकता है। इस लिए मैं अपने देशबंधुओंसे प्रार्थना करता हूँ कि यदि आप यह प्रस्ताव स्वीकृत करना चाहते हों, तो इसका स्वीकार पक्के निश्चयके साथही कीजिए। अतीव मंगल तथा अनुकूल परिस्थितिमें यह प्रस्ताव हमारे सामने आया है। वह एकमतसे सम्मत करनेकी बुद्धि ईश्वर आपको दें तथा इस प्रस्तावका उद्दिष्ट एक वर्षके भीतर साध्य कर लेनेका धैर्य और सामर्थ्य भी ईश्वर आपको प्रदान करें।"

लालाजीकी सिंह-गर्जना

श्रद्धा, निश्चय तथा आत्मबल इन तेजस्वी गुणोंसे आलोकित गांधीजीका यह भाषण समाप्त होतेही श्रोताओंने तालियोंकी प्रदीर्घ तथा प्रचंड ध्वनि की। उसी आनंदके निनादमें लाला लाजपतराय उस प्रस्तावको पुष्टि देनेके लिए खडे रहे। उनका भाषण ऊर्जस्वी तथा उद्दीपक रहा। वे पंजाबके नेता! ब्रिटिश सरकारकी आम नीतिपर तो उन्होंने प्रखर आलोचना की ही, लेकिन पंजाबमें घटित अत्याचारपर तो वे शेरके आवेशसे टूट पडे।

ब्रिटिश पार्लमेंटमें लॉर्ड मेलबोर्नने हिन्दी नेताओंपर कडी आलोचना की थी। उसका उत्तर देते हुए लालाजी सिंहकी भाँति गरज कर बोले, "कॉंग्रेसके इस खुले अधिवेशनमें—मेरे २०,००० भाइयोंके इस समूहमें—राष्ट्रके सद्गुणोंका निचोड होनेवाली इस सभामें—खडा होकर उस लॉर्ड मेलबोर्नसे मैं यह कहना चाहूँगा, "ब्रिटिशोंके अभिवचनों तथा शब्दोंपर हमारा लेशमात्र विश्वास नहीं। ब्रिटिशोंका हमारे देशका शासन मानो केवल वचनभंगका एक बृहत्तर इतिहासही है।"

लॉर्ड डलहौसी, लॉर्ड कर्झन आदि बडे लाटोंसे तथा लॉइड जॉर्ज जैसे ब्रिटिश पंतप्रधानद्वारा किये गये वचन-भंगोंका साधार विवेचन करते हुए लालाजी बोले, "यह प्रस्ताव मानो ब्रिटिश राष्ट्र तथा ब्रिटिश सरकारको दी गयी नोटिस है। मैं मानता हूँ कि जुलमी राजसत्ताके विरुद्ध सशस्त्र

विद्रोह करनेका किसी भी राष्ट्रको जन्मसिद्ध अधिकार है। लेकिन हमारे पास न तो वैसे साधन हैं और न वैसी इच्छा भी।

आगे क्या होगा इसकी चर्चा मैं नहीं करूँगा। लेकिन आज हम हिंसा अत्याचार की नफरत करते हैं और उसका त्याग कर देते हैं।"

लालाजीके इस स्पष्टोक्तिपूर्ण तथा भावपरिप्लुत भाषणके समाप्त होतेही 'वंदे मातरम्' की गर्जनाओंसे सारा मंडप हिल उठा। उनकी ताईदके बाद बॅ. जिना प्रस्तावके विरोधमें भाषण देने खड़े हो गये। अपने भाषणमें महात्माजीका निर्देश उन्होंने 'मिस्टर' के साथ किया। उनका यह सहेतुक उपमर्द श्रोतागण कैसे बरदाश्त करते? उन्होंने होहल्ला मचाकर 'महात्मा' कहनेके लिए श्री. जिनाको मजबूर किया।

विरोधमें उनकी पहली दलील यह रही कि प्रस्तावमें जो 'स्वराज्य' शब्द है उसका मतलब 'मुकम्मिल आज़ादी' या 'संपूर्ण स्वातंत्र्य' निकल आता है, और इस कारण ब्रिटिशोंसे संबंध-विच्छेदका खतरा संभव है। साधनोंके बारेमें उन्होंने कहा—"बिना खून खच्चरके आप स्वराज्य नहीं पा सकेंगे। कानूनी और बाअमन तरकीबोंसे आजादी हासिल करना बिलकुल नामुमकिन है। लालाजीके कहनेके मुताबिक अगर आप सरकारको नोटिस दरियाफ्त कराना चाहते हों, तो वैसा प्रस्ताव मंजूर कीजिये। 'ध्येय' को ज्यों का त्यों रहने दीजिये। म. गांधी चाहते हैं ब्रिटिश साम्राज्यका विनाश! लेकिन वह ताकद हममें कहाँ? आज वह निरा ख्वाब साबित होगा। गुस्सा, नाउम्मीद जैसी भावनाओंके काबूमें न होकर आप खुद विचार कीजिये।"

लेकिन श्री. जिनाके इस विरोधका असर श्री. विपिनचंद्र पालके प्रखर वक्तव्यने बिलकुल मिटा दिया। वे चाहते थे कि 'स्वराज्य' शब्दके साथ 'जनतंत्रात्मक' विशेषण जोड़ा जाय। लेकिन उन्होंने संशोधन नहीं पेश किया। अपनी इच्छा सिर्फ प्रकट की।

'स्वराज्य' शब्दसे ब्रिटिश साम्राज्यके साथ संबंध-विच्छेदकी ध्वनि निकल आती है, यह हौवा श्री. जिनाने खड़ा किया था। उसका खंडन करते हुए पालबाबू बोले—"ब्रिटिश साम्राज्य क्या चीज़ है? वह दुरंगा है। एक उसका पहलू खास गोरे लोगोंके लिए है, और दूसरा काले

आदमियोंके लिए। ऐसे साम्राज्यमें रहनेसे और गुलामोंकी भांति काम करने-पर मजबूर किये जानेसे हिन्दुस्थान इनकार करता है। अब समय आ चुका है कि समूची दुनियाको इसकी खबर दी जाय, और यही इस प्रस्तावने किया है। अगर यह कहना कि संपूर्ण राजनैतिक स्वाधीनता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है गुनाह है, तो ऐसा गुनहगार बनकर उसके लिए सजा भुगतनेको मैं तैयार हूँ। हमें आजादी चाहिये और उसे हासिल करनेके लिए कोई भी कुर्बानी करनेको हमने कमर कस ली है।

इसके अनन्तर ब्रिटिश पार्लमेंटके सदस्य कर्नल वेजवुडने अपने भाषणमें मॉंटेग्यू साहबका गुणगान करते हुए कहा कि "हिन्दुस्थान स्वराज्य पा ही चुका है। पर उद्दिष्टके इस परिवर्तनके कारण हम जैसोंका काम अधिक कठिन हो जाएगा।" इस प्रकार अपना विरोध प्रकट करके वह बिदा हुए। बादमें श्री. सत्यमूर्ति, श्री. भार्गव आदिके संशोधन पेश किये गये। प्रान्तवार मत आजमानेका निश्चय अध्यक्षके द्वारा जाहिर हुआ और उस दिनकी कारवाई खतम हुई।

ब्रिटिश श्रमिक दलका सख्य

तीसरे दिन, ता. ३० डिसेंबर सवेरे ८–१० बजे राष्ट्रगीत गायनके बाद कार्यवाही प्रारंभ हुई। शुरूमें अध्यक्षमहाशयने ब्रिटिश पार्लमेंटके एक सदस्य तथा ब्रिटिश कॉंग्रेस कमिटीके प्रतिनिधि श्री. ब्रेन स्पूरका स्वागत किया। उनके स्वागतकी असली वजह यह थी कि वे इंग्लैंडके 'श्रमिक दल'की ओरसे अधिकृत प्रतिनिधिके नाते उपस्थित थे।

जब ब्रेनस्पूर भाषण देने खड़े हो गये, लोगोंने करतल-ध्वनिसे उनका गौरव किया। इस गौरवके लिए धन्यवाद देकर वे बोले—"मैं यहाँ आ गया हूँ यह निवेदन करने कि ब्रिटिश श्रमिक दल आपके स्वाधीनतासंग्रामसे हार्दिक सहानुभूति रखता है। हमारा 'दल' स्वयंनिर्णयके तत्त्वको मानता है, और हमारी राय है कि यह सिद्धान्त संसारके सब देशोंके लिए लागू हो। हमारे 'दल' के पिछले वार्षिक अधिवेशनमें इसी आशयका प्रस्ताव मंजूर किया गया, जिसमें हिन्दुस्थानका खास निर्देश किया गया है। किसी भी सरकारको यह अधिकार कतई नहीं है कि वह बहुसंख्य जनताकी इच्छा के खिलाफ उस राष्ट्रका शासन करे। हमारी यही इच्छा है कि हिन्दुस्थान

सही मानेमें स्वाधीन हो। उस स्वाधीनताकी प्राप्ति आप किन साधनोंसे करें यह कहना मेरे यहाँ आनेका मकसद बिलकुल नहीं। उस काममें आपके नेता पूर्णतया समर्थ हैं। आपका एका और उत्साह अलौकिक और आश्चर्यजनक है। आपके राष्ट्रवादमें राजनैतिक तथा आर्थिक उभय-विध स्वातंत्र्य संमिलित है देखकर मुझे खुशी हुई। समूची दुनिया की पूँजीशाही नष्ट करने हम और आप दोनों कटिबद्ध हुए हैं। बिना पूरबके सहयोगके अकेली पाश्चिम क्या कर सकती है? मुझे पूरा भरोसा है कि हमसे आपका संपूर्ण सहयोग हमेशाके लिए बना रहेगा।"

अपने भाषणके अन्तमें म. गांधीजीका गौरव प्रकट करते हुए वे बोले—"मैंने महात्माजीके कई भाषण सुने। उनके बलपर मैं परमेश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि महात्माजी जैसी आध्यात्मिक प्रवृत्ति और दृष्टि रखने-वाला नेता वह हमें प्रदान करें। हमें इस बात का बड़ा दुःख है कि पाश्चिमात्य राष्ट्र जड़वादी बनते जा रहे हैं। बिना इस भयानक आपत्तिसे छुटकारा पाये हमारी असली प्रगति नहीं होगी। इस विषयमें आप हिन्दुस्थानी लोग हमारी बहुत मदत कर सकते हैं। जब आप आज़ाद हो जायँगे, तब आध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करनेमें आपसे हमें सहायता ज़रूर मिलेगी। तब 'इंग्लैंड अंग्रेज़ोंके लिए,' 'हिन्दुस्थान हिन्दुस्थानियोंके लिए' आदि संकीर्ण घोषणाएँ हवामें विलीन हो जाएँगी और "अखिल जगत् स्वतंत्र मानवताके लिए" यही एकमेव एकता और समताका महान् मंत्र सर्वत्र, सदैव गूँजता रहेगा।"

इस चमकदार आशावादसे सारा श्रोतृवृंद संतुष्ट हो गया। स्वागता-ध्यक्ष सेठ जमनालालजीने श्री. बेनसूरके आभारका भाषण हिन्दीमें किया और आभार-प्रस्ताव पेश किया। पंडित मोतीलाल नेहरूने उसे पुष्टि दी और प्रस्ताव सर्वसंमतिसे मंजूर हुआ।

असहयोगका प्रस्ताव संमत

काँग्रेसके उद्दिष्टका प्रस्ताव जितना क्रांतिकारी, उतनाही क्रांतिकारी दूसरा प्रस्ताव असहयोगका था। विषयनियामक समितिमें बॅ. दासजीका विरोधी मत बदल गया—वह यहाँ तक कि खुले अधिवेशनमें प्रस्ताव पेश

करनेके लिए वे खुद तैयार हुए। उसे पेश करते हुए उन्होंने बड़ा प्रभावी भाषण दिया। वे बोले—"कलकत्तेमें जो असहयोगका प्रस्ताव मंजूर हुआ उसकी अपेक्षा प्रस्तुत प्रस्ताव कमज़ोर है, ऐसा आक्षेप किया जाता है, लेकिन वह व्यर्थ है। पंजाब, खिलाफत आदि इतने अत्याचार सरकारद्वारा किये गये हैं कि उनकी पुनरावृत्ति न हो इसलिये हमें स्वराज्य तुरंत प्राप्त करना चाहिये। अबतक हमसे किये गये स्वराज्य-प्राप्तिके इलाज असफल साबित हुए। अब हमारे पास 'अहिंसक असहयोग'का एकमेव इलाज बाकी है। कलकत्ता प्रस्तावकी अपेक्षा यह प्रस्ताव अधिक व्यापक तथा सामर्थ्यशाली है। आवश्यकताके अनुसार लगान-बंदी का इलाज भी उसमें समाविष्ट किया गया है। काँग्रेसकी पुकार सुनते ही वकील, विद्यार्थी, व्यापारी, किसान आदि वर्गोंको सरकारी यंत्रणासे स्थित अपने संबंधका तुरंत विच्छेद कर देना चाहिये।"

म० गांधीजीने इस प्रस्तावकी पुष्टि हिन्दी भाषण द्वारा की। बादमें श्री. पाल, श्री. लाला लाजपतराय, बाबू श्यामसुंदर चक्रवर्ती, डॉ. किचलू, शारदापीठके महंत श्रीशंकराचार्य, हकीम अजमलखान, मौलाना महंमद अली आदि नेताओंके पुष्टिपर भाषण हुए। लालाजीने कहा– "कौन्सिल-बहिष्कार की बाबतमें पूरे राष्ट्रने काँग्रेसकी आज्ञाका इतनी निष्ठासे पालन किया कि इस उदाहरणका सानी समूची दुनियामें नहीं मिलेगा। इस प्रस्तावसे लो. तिलकजीकी आत्माको आनंद प्राप्त होगा।"

मौ० हजरत मोहानीकी उपसूचनाका उत्तर गांधीजीने प्रथम हिन्दीमें और बादमें अंग्रेजीमें दिया। गांधीजीने यह घोषित किया कि 'ध्येय तथा असहयोगके दोनों प्रस्ताव मुझे असम्मत हैं,' इस आशयका पं. मालवीयजीका तार आया है। गांधीजीने अंतमें कहा– "प्रत्येकको अपनी सदसद्-विवेक-बुद्धिके अनुसार चलना चाहिये। जालियनवाला बागमें जनरल डायरके अधिकारमें जो पुलिस–दल था, उसमेंसे एक यदि मैं होता तो अपने अधिकारीके गोली चलानेके हुक्मको मानना पाप समझकर मैं उसका भंग करता—फिर उसके लिए उसी स्थानपर गोली दागकर भलेही मेरा काम तमाम कर दिया होता! सैनिकके अनुशासनको मैं जानता हूँ।

किन्तु धर्मनिष्ठा राष्ट्रनिष्ठा, या विवेकनिष्ठा आदिका विरोध करनेवाला हुक्म न मानना और उसके लिए बलिदान करना हरेक सैनिकका कर्तव्य है। ”

असहयोगका प्रस्ताव सम्मत होनेपर उसे अमलमें लानेका आदेश देते समय गांधीजीने अंतमें कहा— “ क्या सरकारके साथ, क्या आपसमें व्यवहार करतेसमय, हमें अपने विचार, उच्चार तथा आचारमें हिंसाको स्थान नहीं देना चाहिये। पूर्ण अहिंसाका पालन करते हुए यदि हम इस असहयोगके कार्यक्रमको कार्यान्वित करेंगे तो मैं दुबारा वादा करता हूँ कि एक सालमें ही क्यों नौ महीनोंमें ही हमें स्वातंत्र्य प्राप्त होगा। ” इन उद्‌गारोंको सुनकर श्रोतागण इतना उत्तेजित हुआ कि उसने मुक्त कंठसे गांधीजीकी जयजयकार की। प्रस्ताव मतप्रदर्शनके लिए सभाके सामने रखा गया और वह मंजूर हुआ। ध्येयके सम्बन्धका प्रस्ताव भी सम्मत हुआ। दोनों प्रस्तावोंके विरोधमें दो दो मत थे।

असहयोगके दो विरोधक

असहयोगका प्रस्ताव यद्यपि कलकत्ता कॉंग्रेसमें सम्मत हुआ था, उसको कुछ अनुभवी नेताओंका विरोध था। विशेषतया बंगाल और महाराष्ट्र का तो कट्टर विरोध था। वंगभूमि क्रांतिवादियोंकी कर्मभूमि ठहरी, वहाँके लोगोंको गांधीजीका अहिंसात्मक असहकार जँचे भी कैसे! वैसेही महाराष्ट्र बुद्धिवादका आगर। वहाँ लो. तिलकजीकी राज-नीतिकी परंपरा निर्माण हुई थी। तिलकजीके प्रमुख अनुयायियोंकी यह धारणा थी कि इस परंपरासे गांधीजीका असहयोग विसंगत है, इसलिये उनका विरोध था।

नागपुरमें गांधीजीका विरोध करनेके लिए तथा कलकत्ता कॉंग्रेसमें अंकुरित असहयोगके प्रस्तावको जड़से उखाड़नेके लिए बॅ. दास पूरी तैयारी के साथ नागपुरमें दाखिल हो गये थे। वे खास बंगालसे अपने २५० अनुयायियोंका दल नागपुर ले आये थे। और उसके लिए उन्होंने अपनी जेबसे उन प्रतिनिधियोंके यात्रा-व्ययके लिए ३६००० रु. खर्च किये थे। नागपुर पहुँचतेही बंगालके गांधीवादी प्रतिनिधियोंके दलके साथ दास-बाबूके अनुयायियोंकी मुठ-भेड़ हुई। किन्तु गांधीजीका मनोजयी वक्तव्य, उनकी उदार सहिष्णुता, तथा जनसमूहमें उफननेवाली नवचेतना देखकर दासबाबूके प्रांजल चित्तका विरोध पिघल गया और असहकारिताका

प्रस्ताव स्वयं उन्होंने पेश किया। इसमें गांधीजीकी जय थी। नागपुरके साप्ताहिक वृत्तपत्र 'महाराष्ट्र' ने इसके सम्बन्धमें इस प्रकार मीमांसा की— "दास-लालाजी का मतभेद टालनेके लिए असहयोगके प्रस्तावकी पुनर्रचना करनेमें महात्माजीने बड़ी चतुराई तथा नीतिज्ञतासे काम लिया है।" अधिवेशनके आरंभका पूरा हफ्ता असहयोगके साधक-बाधक भाषणोंसे निनादित हो गया था। इधर दास-लालाजी-केलकर-अणे आदि विरोधक तोपें घहराती थीं, तो उधर गांधी-शौकतअली,-गंगाधरराव प्रभृति नेता अपना 'संमोहनास्त्र' छोड़कर यश पा रहे थे।

महाराष्ट्रके विरोधको मुखरित करनेका काम विदर्भके श्री. दादासाहब खापर्डेने किया। दिनांक १० दिसम्बर १९२० के दिन उनके द्वारा एक पत्रक प्रकाशित हुआ जिसपर, मालूम होता है कि श्री. बापूजी अणेके भी हस्ताक्षर थे। उस पत्रकमें कलकत्ता अधिवेशनमें सम्मत असहयोगके प्रस्तावपर ये आक्षेप उठाये गये थे—(१) इस प्रस्तावसे कॉंग्रेसका ध्यान राजनीतिसे उठ रहा है और नीति तथा आत्मबलके मार्गमें उसकी शक्ति खर्च हो रही है। (२) यह प्रस्ताव सरकारसे संबंध-विच्छेद करनेको कह रहा है, अतः वह सरकारसे संघर्ष तथा संग्राम करनेकी मनोवृत्तिको मारक सिद्ध होगा। (३) असहयोगके कार्यक्रमसे कष्टोंको सहनेकी शक्ति बढ़ेगी, किन्तु राजनीतिक विद्रोहमें आवश्यक, व्यावहारिक चतुरता, उत्साह तथा बुद्धिमत्ता आदि गुणोंकी वृद्धि नहीं होगी। (४) कोर्ट-कौन्सिल, कॉलेज आदिका त्रिविध बहिष्कार असफल सिद्ध होगा। क्योंकि उसका राजनीतिके साथ सुदूरका भी रिश्ता नहीं। (५) संक्षेपमें इस प्रस्तावका रुख एकही व्यक्तिके हाथमें सब सूत्र देनेका है। यह एकतंत्री नीति समाजवादी विद्यमान युगसे विसंगत होनेके कारण आक्षेपार्ह है। म. गांधी कितने भी थोर व्यक्ति तथा नीतिमत्ताके पुतले क्यों न हों उन अकेलेके हाथों पूरी सत्ताको सौंप देना ठीक नहीं होगा। उन्होंने 'होमरूल लीग' का ध्येय बदलकर उसे 'स्वराज्य-सभा' का जो स्वरूप दिया है उससे कल्पना की जा सकती है कि उनकी कॉंग्रेस-कार्यकी भावी नीति क्या होगी।

प्रत्यक्ष नागपुरमें भी इस विरोधका तूफान गरज रहा था। किन्तु कलकत्ताकी अपेक्षा नागपुरमें गांधीजीके इस नये रुखको अधिक अनुकूलता

प्राप्त थी। कलकत्तामें गांधीजीकी नीतिको पुष्टि देनेवाले एकही सज्जन थे पं. मोतीलाल नेहरू। वे भी उस समय गांधीजीके पुरस्कर्ता बने, जब कि उनकी यह सूचना कि कोर्ट-कॉलेजोंपर बहिष्कार धीरे धीरे डाला जाए, गांधीजी द्वारा स्वीकृत की गयी। नागपुर काँग्रेसमें भी विरोधकी आँधी उठी हुई थी। किन्तु गांधीजीके शांत स्वभावसे तथा अमोघ युक्तिवादसे उसका जोर बहुत कम हुआ, और दास-लालाजीकी पुष्टिसे असहयोगका प्रस्ताव कई अधिक मतोंसे सम्मत हुआ। इस प्रस्तावमें नीचे लिखे अनुसार कार्य करनेका आदेश राष्ट्रको दिया गया।

(अ) उपाधियों तथा सम्माननीय पदोंका त्याग किया जाय। स्थानीय संस्थाओंमें सरकारसे मनोनीत पदोंका त्यागपत्र दिया जाय। (ब) सरकारी या सरकारसे अनुदान प्राप्त करनेवाली पाठशालाओं तथा कॉलेजोंमेंसे धीरे धीरे अपने बच्चोंको निकाल लिया जाय तथा उनके स्थानपर अन्यान्य प्रांतोंमें राष्ट्रीय स्कूल या कॉलेज प्रस्तापित किये जाएँ। (क) सरकारी दरबारोंमें, सरकारी अधिकारियोंसे आयोजित सभाओंमें, उनके सम्मानार्थ मनाये गये सरकारी या अर्ध-सरकारी समारोहोंमें उपस्थित रहनेसे इन्कार किया जाय। (ड) ब्रिटिश अदालतोंपर वकीलों तथा उनके मुवक्किलों द्वारा बहिष्कार डाला जाय और पंचायतें स्थापन कर, उनके द्वारा आपसके झगड़ोंका निबटारा किया जाय। (इ) मेसोपोटेमियामें सैनिकी कार्रवाईके लिए सैनिक, कर्मचारी तथा मजदूर भर्ती होनेसे इन्कार करें। (फ) सुधार कानूनके अनुसार शुरू होनेवाले कौन्सिलोंके लिए जो उम्मीदवार खड़े होंगे वे अपने नाम वापस ले लें और काँग्रेसकी इस प्रार्थनाको न मानते हुए जो उम्मीदवार कौन्सिलोंके चुनावके लिए खड़े होंगे उनको मतदाता अपने मत न दें। (ग) विदेशी वस्तुओंपर बहिष्कार डाला जाय।

इस प्रस्तावके सरनामेमें राष्ट्रकी आकांक्षा प्रकट की गयी थी कि, हिन्दी जनताने अब स्वातंत्र्य प्रस्थापित करनेका पूरा निश्चय किया है, क्योंकि विद्यमान सरकारपर अब जनताका विश्वास नहीं रहा। पंजाब, खिलाफत आदि मामलोंका अन्याय दूर करनेके काँग्रेसके सब प्रयास असफल रहे। इसलिए सरकारसे—असहयोगसे लेकर लगान-बंदी—तकका कार्यक्रम अमलमें लानेके लिए संपूर्ण असहयोग अहिंसात्मक रीतिसे,

अंशतः या पूर्णतः अमलमें लानेका इस राष्ट्रका निर्धार है। उसकी पूर्वतैयारी के लिए ही उपरिलिखित सात–कलमी कार्यक्रम आयोजित किया गया है।

इस प्रस्तावके अंतर्में कलकत्ता कॉंग्रेसके पश्चात् राष्ट्रद्वारा कौन्सिल–बहिष्कारका कार्यक्रम पूरा किये जानेके कारण जनताका अभिनंदन किया गया। जो उम्मीदवार द्रव्य तथा श्रम खर्च करके कौन्सिलके चुनावमें खड़े हुए थे उन्होंने कॉंग्रेसके आदेशानुसार तत्काल अपने नाम वापस लिए। और मतदाताओंने तो चुनावको करीब करीब पूर्णरूपेण बहिष्कृतही रखा। ८० प्रतिशत मतदाताओंने मतदानही नहीं किया। कई केंद्रोंमें मतदान के बक्स खाली ही लौटाने पड़े। प्रत्यक्ष सरकारद्वारा अपने अहवालमें यह मान्य किया गया कि, " इस बहिष्कारका भावी इतिहासपर असर हुए बिना नहीं रहेगा। इस बहिष्कारके कारण सार्वजनिक क्षेत्रोंमें काम करनेवाले प्रमुख विचारवंत विधिमंडलमें निर्वाचित न हो सके।" इस प्रकारके ये परित्यक्त विधिमंडल लोकमत के निदर्शक नहीं हैं यह बात स्पष्ट हो गयी।

पुलिस तथा सेनाके सिपाही अपने अफसरोंकी आज्ञाका पालन करते समय राष्ट्रकी इज्जत का भी खयाल करें। अन्य सरकारी कर्मचारी भी राष्ट्रकी सभा-सम्मेलनोंमें निर्भयतासे शरीक हों, तथा राष्ट्रीय आंदोलनको निडरतासे खुल्लमखुल्ला आर्थिक सहायता करें। इस प्रकारकी भी सूचनाएँ इस प्रस्तावमें समाविष्ट हैं। वैसेही सब सार्वजनिक संस्थाओंको भी इस प्रस्तावसे नीचे लिखे अनुसार आवाहन किया गया है।

" पंजाब तथा खिलाफतके अन्यायको नष्ट करनेके लिए और एक वर्षके भीतर स्वराज्य स्थापित हो इसलिए जो संस्थाएँ कॉंग्रेससे संबद्ध हैं और जो संबद्ध नहीं हैं वे सब संस्थाएँ सरकारसे अहिंसात्मक असहयोगसे पेश आएँ और उसे सफल बनानेके लिए हिन्दु–मुस्लिम ब्राह्मण–अब्राह्मण आदिकी एकता पर ध्यान केन्द्रित करें, वैसेही अस्पृश्यता नष्ट करनेके लिए खास प्रयत्न किये जायँ।"

महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव

ता. ३१ दिसम्बर के दिन, दोपहर तीन बजे, पद्यगायनके बाद बैठक का कामकाज आगे शुरू हुआ। तीसरा प्रस्ताव विदेशोंमें आंदोलन चला

नेके सम्बन्धमें यों था। "इंग्लैंडमें जो 'ब्रिटिश कॉंग्रेस कमेटी' तथा 'इंडिया' समाचारपत्र हैं दोनों बंद किए जायँ।" लेकिन इसके साथही साथ इस प्रस्तावके अनुसार यह नीतिभी मान्य की गयी कि विदेशोंमें कॉंग्रेसके कार्यकी सही-सही जानकारी प्रस्तृत करना आवश्यक है। इस प्रस्तावका यही हेतु था कि अपने राष्ट्रकी सामर्थ्य बढ़ानेपर ही पूरा जोर दिया जाय। और एक बार हमारे देशकी शक्ति बढ़नेपर, सूर्य उदित होतेही उसकी प्रभा जिस प्रकार सब दिशाओंमें फैलती है, वैसेही हमारे देशका प्रभाव पूरी दुनियापर पड़ेगा। उसके लिए अन्य प्रयत्न करनेकी आवश्यकता नहीं। यह प्रस्ताव गांधीजीके स्वायत्त तथा स्वावलंबी नीतिका निदर्शकही है।

चौथे प्रस्तावमें स्वर्गीय आयरिश देशभक्त मि. मॅक्स्विनीकी स्मृतिको अभिवादन किया गया और आयरिश जनताको उनके स्वातंत्र्य-संग्राममें सहानुभूतिका संदेश भेजा गया।

ब्रिटिश व्यापारियों तथा कारखानदारोंका लाभ हो इस हेतु सरकारने विनिमयकी दरमें जो परिवर्तन किया उससे हिन्दी व्यापारियोंके व्यवसायमें रुकावटें पैदा हुई। अतः पाँचवें प्रस्तावमें व्यापारियोंको यह सलाह दी गयी कि वे अपने पुराने सौदोंको नई दरके अनुसार पूरा न करें।

सन १९२१ में बादशाहके चाचा कनॉटके ड्यूक हिन्दुस्थानमें आयेंगे, उस समय असहयोगकी अंगीकृत नीतिके अनुसार, भारतीय जनताको उनके समारोहोंसे अलग रहना चाहिये, इस प्रकारका आदेश छठे प्रस्तावके अनुसार दिया गया।

सातवें प्रस्तावमें, मजदूर वर्गके प्रति सहानुभूति दर्शायी गयी। और 'कानून तथा शांति'के नामपर सरकार मजदूरोंके जीवितको कःपदार्थ समझती है, उस पाशवी नीतिका धिक्कार किया गया।

मजदूरोंका संगठन करनेके हेतु एक समिति नियुक्त करनेका काम आठवें प्रस्तावमें किया गया।

नौवें प्रस्तावमें किसानोंकी खेती छीन लेनेकी सरकारकी नीतिका निषेध किया गया। विदेशी पूंजी-पतियोंके लाभके लिए यहाँकी जनताकी घर-

गृहस्थीको धूलमें मिलानेवाली इस अविचारी तथा अन्यायी नीतिको देख-कर जनताको चाहिये कि वह सरकारसे असहयोग करनेके लिए प्रस्तुत हो। इस प्रकारका आवाहन इस प्रस्तावद्वारा किया गया। वैसेही हिन्दी पूंजी-पतियोंको यह प्रार्थना की गयी कि वे अपने देशके किसानोंकी दुरवस्थाको रोकनेके लिए कटिबद्ध हों।

दसवाँ प्रस्ताव श्री. न. चिं. केलकरद्वारा पेश किया गया। " पूंजी-पतियों, विशेष कर विदेशी पूंजीपतियोंके लाभके लिए सरकार 'लँड ऍक्वि-झिशन' कानूनका दुरुपयोग कर, किसानोंकी ज़मीनें छीन रही है तथा उनके घरबारको बरबाद कर रही है। इस वजहसे असहयोगकी नीति अपनाने के लिए हमारे पास यह सबल कारण है।" इस आशयका प्रस्ताव प्रस्तुत कर श्री. केलकरजीने मराठीमें भाषण दिया। पूरे अधिवेशनमें यह एकमेव मराठी भाषण था। श्री. केलकरजीने अपने भाषणमें कहा—

" इस प्रस्तावोंके द्वारा हम यह दिखाना चाहते हैं कि राष्ट्रीय सभा हीन-दीनोंका सहारा है। सरकारसे असहकार करनेके हमारे पास सैंकडों कारण हैं, उनमेंसे यह एक है। कुछ लोग यह कहना चाहेंगे कि ऐसे मामलेमें सरकारसे असहयोग क्यों किया जाय? प्रार्थना-पत्र भेजे जायँ। लेकिन अर्जियाँ या प्रार्थनापत्र भेजनेपर सरकार कहती है कि "लँड ॲक्विझिशन ॲक्ट' के अनुसार ज़मीन ली गयी है, या सार्वजनिक कार्यके लिए ली गयी है। इसपर अपील नहीं हो सकती और इसलिए ऐसे मामलोंमें सरकारकी ओर प्रार्थना पत्र आदि भेजनेमें कुछ लाभ नहीं है।" इस प्रस्तावका प्रासंगिक कारण यह था कि महाराष्ट्रके मुलशी नामक तह-सील की बहुतसी ज़मीन टाटा बाँध योजनामें ली जानेवाली थी।

ग्यारहवें प्रस्तावके द्वारा आयुर्वेद तथा युनानी उपचार-प्रणालीका प्रसार करनेके लिए जनताको प्रेरणा दी गयी थी।

बारहवें प्रस्तावमें रियासतोंके प्रमुखोंको यह विनती की गयी थी कि वे अपनी अपनी रियासतमें लोकतंत्र शासनप्रणाली शुरू करें।

पंजाब, देहली आदि स्थानोंमें सरकारने फिरसे दमननीतिका अवलंब किया था। अतः उस जनताको तेरहवें प्रस्तावमें ऐसा आदेश दिया गया कि वह दुगुने उत्साहसे असहयोगका आचरण करे।

चौदहवें प्रस्तावद्वारा यह सूचित किया गया कि, राष्ट्रीय हितकी दृष्टिसे, कॉंग्रेसको निःशुल्क प्राथमिक शिक्षाका प्रसार करना चाहिये।

हिन्दुस्थानकी सेवा करनेके उपलक्ष्यमें ब्रिटिश सरकारने मि. हॉर्निमनको निर्वासन दंड दिया था।

पंद्रहवें प्रस्तावमें मि. हॉर्निमनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की गयी।

सोलहवें प्रस्तावमें गोहत्या-बंदीका प्रस्ताव सम्मत करनेके उपलक्ष्यमें मुस्लिम संस्थाओंके आभार माने गये हैं। और उसमें यह मत दर्ज किया गया है कि दूध देनेवाले जानवरोंकी रक्षा करना राष्ट्रकी आर्थिक प्रगतिके लिए आवश्यक है। इसलिए हिन्दी जनता दूध देनेवाले जानवर तथा उनकी खाल विदेश न भेजे और अन्य मार्गोंसे दूध देनेवाले जानवरोंकी सुरक्षा करे।

सत्रहवें प्रस्तावसे ईशर-समितिके निवेदनकी बुराइयोंको दुनियाके सामने रखा गया।

अठारहवाँ प्रस्ताव कॉंग्रेसकी घटनाके बारेमें है।

उन्नीसवें प्रस्तावके अनुसार सिक्खोंको यह आश्वासन दिया गया कि भारत स्वतंत्र होनेपर मुस्लिमादि अल्पसंख्यक जमातोंके अनुसार उनकी भी सुरक्षा होगी।

देशमें अकालकी स्थिति है तो भी गेहूँ, चावल आदि अनाज, सरकार बाहर भेज रही है। बीसवें प्रस्तावद्वारा इस नीतिका निषेध किया गया और जनता तथा व्यापारियोंको यह सलाह दी गयी कि वे ऐसे व्यापारमें सहभागी न हों।

आफ्रिका—निवासी हिन्दी बंधुओंद्वारा उदात्त युद्ध वीरताके साथ हो रहा था और उसमें शांतिपूर्ण असहयोग का अवलंब किया जा रहा था। उसकी पुष्टि इक्कीसवें प्रस्तावमें की गयी। इस प्रस्तावमें इस बातकी आवश्यकता प्रकट की गयी कि फिजी-द्वीप-निवासी हिंदी बांधवोंकी गुलामीका खयाल करके तथा उनके ऊपर किये जानेवाले अमानुषीय अत्याचारोंको नष्ट करनेके लिए असहयोग-मार्गका अवलंब करके स्वाधीनता प्राप्त करनीही होगी। इसी प्रस्तावमें दीनबंधु ॲंड्रयूजके कार्यके प्रति कृतज्ञता प्रकट की गयी।

अगले दो प्रस्तावोंमें काँग्रेसके नये-पुराने सेक्रेटारियोंके नाम दिये हैं और २४ वें प्रस्तावमें अगले वर्षका अहमदाबादका निमंत्रण स्वीकृत किया गया है।

अगले वर्षके लिए पं. मोतीलाल नेहरू, डॉ. अन्सारी तथा श्री. राजगोपालाचारी की सेक्रेटरीके नाते नियुक्ति की गयी और यह तय किया गया कि अ. भा. काँग्रेस कमेटीका कार्यालय इलाहाबादमें रहे।

लो. तिलक स्वराज्यनिधिमें ज्वार

"तिलक स्वराज्यफंड" का प्रस्ताव प्रस्तुत करते समय गांधीजीने हृदयस्पर्शी भाषण दिया। प्रथम वे हिन्दीमें बोले। उन्होंने कहा, "स्वराज्य प्राप्तिके लिए कोशिश करनाही लोकमान्यजीकी स्मृति चिरजीवी करनेका सच्चा मार्ग है। स्वराज्यके लिए सब बंधुभगिनियोंको स्वार्थत्याग करना आवश्यक है। लोकमान्यजीके स्मारकके लिए जो लोग त्याग करना नहीं चाहते, समझना चाहिये कि वे लोग स्वराज्यके लिए लायक नहीं हैं। मारवाड़में कोई स्त्री अपनेको गांधीकी कन्या बतलाकर पैसा इकट्ठा कर रही है। इस धोखेबाजीसे धोखा मत खाइये। मेरे पास या पं. मोतीलालजीके नाम आप चंदा भेज दीजिये।"

इसी वक्तव्यमें गांधीजीने अगले सालके लिए गुजरातकी तरफसे अहमदाबादका निमंत्रण काँग्रेसको दिया। उस समय वे बोले—"अहमदाबादमें कुर्सियोंकी कमी है। इस मंडपके समान भव्य मंडपभी आपको वहाँ नहीं नजर आएगा। नयी नियमावलीके अनुसार वहाँ सिर्फ ६००० प्रतिनिधि आ सकेंगे।"

स्वागताध्यक्षजीका एक लाखका दान

इसके बाद गांधीजीने अंग्रेजीमें भाषण दिया और सब लोगोंको आवाहन किया कि 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है" यह लोकमान्यजीका महामंत्र अपनी कृतिद्वारा वे अमलमें लाएँ। इस आवाहनका फल भी तुरंत मिला। भारतीय सॅन्डो प्रो. राममूर्तिने रु. १००१ की देन घोषित की, वैसेही दो सदस्योंने अपनी सोनेकी अंगूठियाँ निधिके लिए समर्पित कीं। स्वागताध्यक्षजीने अपने उदार दानसे सब लोगोंको चकित और आनंदित

किया। अधिवेशनकी तकलीफके कारण वे बीमार होकर रुग्णशय्यापर पड़े हुए थे। वहाँसे ही उन्होंने गांधीजीकी तरफ खबर भेजी कि "एक लाख की देन मैं घोषित करना चाहता हूँ। उसका विनियोग असहयोगमें योग देकर जो वकालत छोड़ देंगे उनके परिवारको अल्पस्वल्प मदत देनेमें किया जाय।" इसके अलावा और निधि इकठ्ठा करनेका वादा भी उन्होंने किया। यह सब जाहिर करके गांधीजीने समाधानपूर्वक कहा—'इस निधिके यश का यह शुभारंभ हो गया है।'

कॉंग्रेसके नये विधानका प्रस्ताव म. गांधीजीने पेश किया और मोतीलालजीने उसका अनुमोदन किया। कॉंग्रेसकी सदस्यताका चंदा चार आने तय हुआ।

इसके बाद कई प्रस्ताव, जिनमें विवादकी गुंजाइश नहीं थी, अध्यक्ष महाशयने पेश किये और मंजूर हो गये। प्रस्तावोंके विषय ये थेः—आयुर्वेद और युनानी औषध पद्धतियाँ, रियासतोंमें लोकतंत्रात्मक शासन, पंजाबमेंकी नयी जुल्मज़बरदस्ती, प्राथमिक शिक्षाका प्रसार, श्री. हॉर्निमन का निर्वासन, दूध देनेवाले जानवरोंकी सुरक्षा, सिक्ख समाजका भावी स्थान, अनाजके निर्यातपर पाबंदी, आफ्रिका-फिजीमें रहनेवाले हिन्दी बान्धव, कॉंग्रेसके नये मंत्रियोंकी नियुक्ति और पुराने मंत्रियोंका आभार आदि।

अंतमें सभापति महोदयके आभारका प्रस्ताव डॉ. मुंजेने पेश किया। उस वक्त उन्होंने स्वागताध्यक्षजीके बारेमें धन्योद्गार कहे—"आभार-प्रदानका काम असलमें स्वागताध्यक्षका है। लेकिन आप बीमार हैं। इसमें आश्चर्य नहीं कि वे बीमार पड़ गये। क्योंकि कॉंग्रेसका यह अधिवेशन 'न भूतो न भविष्यति' प्रचंड स्वरूप धारण किये हुए है। उसका प्रबंध करनेमें आपने अपने शरीरस्वास्थ्यकी तरफ बिलकुल ध्यान नहीं दिया।"

"युगप्रवर्तक कॉंग्रेस"

आभार-प्रदानके प्रस्तावका अनुमोदन करते हुए मि. बेन स्पूरने कॉंग्रेस और हिन्दी राष्ट्रका गौरव अपने भाषणमें प्रकट किया। "कॉंग्रेसका यह अधिवेशन युगप्रवर्तक है। इस अधिवेशनमें शामिल हुए३००००

लोगोंका प्रबन्ध और अनुशासन-प्रियता देखकर मैं आश्चर्यस्तिमित हो गया हूँ। अपने देशवासियोंको मैं यह संदेश सुनाऊँगा कि हिन्दुस्थानके सब राष्ट्रीय प्रवृत्तिके लोगोंमें संपूर्ण एकता है। यह सच है कि आपके मार्गमें विघ्न-बाधाएँ आएँगी। तो भी आप अपने आन्दोलन को उच्च स्तर पर रखें! हर एकको कोशिश करनी चाहिये कि वह अपनेको म. गांधीजीके समान दिव्य ध्येयवाद तथा अचल कार्यनिष्ठासे संपन्न बनाए। गये महायुद्धके कारण यह डर था कि दुनिया हिंसाकी ओर झुकेगी। लेकिन मुझे हर्ष है कि आपने यह निर्धार किया है कि मानवकी प्रगतिके लिए आवश्यक त्याग और शांतिके ही मार्गका अनुसरण आप करेंगे। हम पाश्चिमात्योंके लिए आपकी आध्यात्मिकताकी नितान्त आवश्यकता है।

"आप अपने देशको जरूर आजाद करेंगे, इस बारेमें मुझे रंच-मात्र भी संदेह नहीं है। मैं उम्मीद करता हूँ कि आप दुनियाके अन्य देशोंको भी सिखा सकेंगे कि सच्ची स्वाधीनता क्या चीज़ है।"

मौ. महंमदअलीने इसे अनुमोदन दिया। प्रस्ताव सर्व सम्मतिसे स्वीकृत किया गया। बादमें मौ. शौकतअलीने स्वयंसेवकों तथा स्वागत-समितिके सदस्योंके आभारका प्रस्ताव पेश किया। डॉ.किचलूके अनुमोदनके बाद वह मंजूर हुआ। सरदार वल्लभभाई पटेलने अगले अधिवेशनके लिए अहमदाबादकी तरफसे बाकायदा निमंत्रण दिया, जिसे स्वीकार किया गया।

अंतमें सभापति महोदयका समारोपभाषण हुआ। सब प्रतिनिधियोंके उत्साह तथा एकताकी आपने बड़ी प्रशंसा की। श्री. आनंदराव टेकाडेने अपनी सुरीली आवाज़में अपना बनाया हुआ राष्ट्रीय गीत 'जय हिन्द देवीकी बोलो। हर हर महादेव बोलो।' गाया, और यह अभूतपूर्व, क्रांतिकारी तथा ऐतिहासिक महत्त्वका अधिवेशन समाप्त हो गया।

इस महान् अधिवेशनके साथ छोटी छोटी अनेकों परिषदें भी संपन्न हुईं। कॉंग्रेसके मंडपमें अखिल भारतीय सामाजिक परिषद श्री. विठ्ठलभाई पटेलजीकी अध्यक्षतामें १ जनवरीको संपन्न हुई। वैसे ही 'मुस्लिम लीग' का अधिवेशन इसी मंडपमें हुआ। अध्यक्ष थे डॉ. अन्सारी और लीगका ध्येय भी कॉंग्रेसकी भाँति 'स्वराज्य' ही था। खिलाफत परिषदने भी

असहयोगको धार्मिक आवश्यकताकी बात बताकर काँग्रेसकी आवाज़में अपनी भी आवाज़ मिला दी।

अलावा इसके अखिल भारतीय रियासत परिषद, अ. भा. वकील परिषद, अ. भा. मेडिकल परिषद, अ. भा. बुनकर परिषद, अ. भा. गोरक्षण परिषद आदि कई परिषदोंकी बैठकें हुईं। उनमें अ. भा. कालेज-स्टूडंट्स परिषदने विशेष सनसनी पैदा की। यह परिषद बादशाही थिएटरमें लाला लाजपतरायकी अध्यक्षतामें संपन्न हुई। सब सूबोंसे विद्यार्थी आये थे। लालाजीने अपनी स्पष्ट राय बुलंद की कि विद्यार्थियोंको राजनीतिमें हिस्सा लेना चाहिये। यह चेतावनी भी दी कि मेडिकल और एंजिनियरिंग कॉलेजके विद्यार्थी कॉलेज न छोडें, क्योंकि वे सेनामें भर्ती हो सकते हैं। गरमागरम बहसों और खटपटके साथ और बीचबीचमें प्रश्नोत्तरके बाद असहयोगका प्रस्ताव युवकहृदयोंने उत्साहके साथ स्वीकृत किया, और सरकारसे संग्रामके लिए युवकगण ताल ठोककर खड़ा हो गया।

पं. जवाहरलालकी अध्यक्षतामें अ. भा. स्वयंसेवक परिषद भी संपन्न हुई। इसमें भी खूब सरगर्मी पैदा हुई। गांधीजीने उत्साहपूर्ण संदेश दिया कि "कँग्रेस अधिवेशनमें एक करोड़ लोग इकट्ठा हों तो भी अच्छा प्रबंध करना होगा।"

कँग्रेस अधिवेशनसे बाहर भी अनेक जाहिर सभाएँ हुआ करती थीं। जमनालालजीकी सदारतमें एक प्रचंड सभा हुई, जिसमें म. गांधीजीने असहयोगका रहस्य सरलतासे विशद किया। उन्होंने कहा—"श्री. दादा-साहब खापर्डे असहयोगका विरोध कर रहे हैं। मैंने सुना है कि इसलिए कई असहयोगवादियोंने पानी मिलना भी उनके लिए असंभव कर दिया। यह ठीक नहीं। विरोधकोंको इस प्रकार बहिष्कृत करना सरासर गलत है। उल्टे जब हम उनके लिए अपने हृदयका पानी बनाकर आत्मबलिदान करेंगे तभी उन जैसे लोग हमसे घुलमिल जायँगे।" कितनी सात्त्विकता! कैसा आत्मविश्वास!!

● ● ●

५ गांधीयुगीन काँग्रेस

काँग्रेसके प्रस्तावोंको कार्यान्वितिके पैर जोड़ देनेकी दक्षता नागपुर अधिवेशनमें की गयी। तबतक ३४ अधिवेशन संपन्न हुए थे, और उनमें पाँचसौ जादा प्रस्ताव पारित भी हुए थे। लेकिन इस अधिवेशन तक काँग्रेसका स्वरूप ही अक्सर ऐसा था कि जो विद्वान् सालभर सरकारी दफ्तरों तथा अदालतोंमें कष्ट उठाकर थक जाते थे वे सालके आखिरमें कहीं किसी सुखसुविधासंपन्न शहरमें इकठ्ठा हो जायँ, अपनी फर्राटेकी अंग्रेजीमें और बुलंद आवाज़में सालभरकी राजनैतिक घटनाओंपर अपनी वक्तृता झाड़ दें। और शासनविषयक सुधारकी कई माँगोंके बारेमें प्रस्ताव करतलध्वनिके साथ मंजूर करें। इन चार दिनोंकी आतिशबाजीके बाद अगले सालके आखिरतक वे भाषण तथा वे प्रस्ताव गहरी नींदमें सोये रहते थे।

इस निष्क्रियताको मिटानेके लिए काँग्रेसकी कार्यवाहीमें भी एक नयी सुसंबद्ध, कार्यक्षम यंत्रणा निर्माण की। इसके कारण सालके बारहों महीने काँग्रेसका यह कार्यचक्र हमेशा फिरता ही रहा। नागपुर काँग्रेसने केवल अपना ध्येय ही नहीं बदला, अपना कर्तृत्व भी विकसित किया। अ. भा. काँग्रेस समितिके सदस्योंकी संख्या ३५० मुकर्रर की गयी। उन्हींमेंसे १५ लोगोंकी वर्किंग कमिटी चुनी गयी। अध्यक्षके अलावा मंत्री तथा

कोशाध्यक्षके दो अधिकार-पद कायम किये गये। यह भी तय हुआ कि काँग्रेस अधिवेशनसे दो तीन दिन पहले वर्किंग कमिटीकी बैठक बुलायी जाय और वह अधिवेशनमें पेश करनेके लिए प्रस्तावके प्रारूप बनाकर रखे।

काँग्रेस कार्य सुचारूरूपसे अखंड चलता रहे इस उद्देश्यसे गाँव, शहर, तहसील, जिला, तथा प्रांत इन सबके लिए अलग अलग समितियाँ कायम की गयीं। उनके चुनाव तथा अधिकारोंके बारेमें नियम बनाये गये। काँग्रेसने कार्यवाहीकी सुविधाके लिए भाषावार प्रान्तरचना भी कर दी।

नागपुर काँग्रेसमें ध्येय निश्चित हुआ, मार्ग स्पष्ट दिखाया गया और त्वरित कार्यान्वितिकी व्यवस्था की गयी। इन तीन बातोंके मेलसे इस अधिवेशनके प्रस्ताव तुरंत कार्यान्वित किये गये। असहयोगका प्रस्ताव प्रकाशित होते ही राष्ट्रके युवकोंमें नया चैतन्य उमड़ पड़ा। लेकिन सरकार-ने सोचा कि यह सब निरे हवाई तीर हैं। जब कलकत्ता अधिवेशनमें असहयोगका बीज बोया गया तब सरकारने अपने अधिकारियोंको यह भविष्य-कथन लिख भेजा था—"यह कार्यक्रम शेखचिल्लीका मनोराज्य है—आभास-रूप है। उसके पीछे बुद्धिमान वर्ग या उच्च श्रेणीवाले लोगोंका बल नहीं रहेगा। अगर असहयोग सफल हो जाय, तो सर्वत्र अंधाधुंध मच जायगी। राजानीतिमें अराजकता फैलेगी और यहाँके स्थापित स्वार्थ तहसनहस हो जाएँगे। असहयोगकी इमारत अज्ञान और द्वेषकी बुनियादपर खड़ी है। उसके ध्येयमें रचनात्मक कार्यका बीज कतई विद्यमान नहीं।"

इसमें आश्चर्यकी बातही क्या है कि पराई सरकार स्वार्थांधताके मार ऐसा सोचे? लेकिन हिन्दुस्थानकी आकांक्षाओंसे समरस बने हुए ब्रिटिश राजकार्यधुरंधर भी असहयोगके अभिनव प्रयोगकी सामर्थ्य जान नहीं पाये। नागपुर अधिवेशनकी विषय-निर्वाचन-समितिमें कर्नल वेजवुडने असहयोगके प्रस्तावका विरोध करते हुए आपत्तियाँ उठायीं कि "असहयोगका प्रस्ताव मंजूर करके आप इंग्लैंडके अपने पृष्ठपोषक मित्रोंकी स्थिति दूभर कर देंगे। आपके आन्दोलनमें रुकावटें निर्माण होंगी। पुलीस आपका पीछा करेगी। वकीलोंको प्रतिज्ञापत्रपर दस्तखत करते वक्त राजाके प्रति निष्ठाकी शपथ लेनी पड़ती है। वे असहयोगमें कैसे शरीक हो सकते हैं? आप जंगलमें घुस रहे हैं। आपको चाहिये कि आप रचनात्मक कार्यका सूत्रपात करें।"

लेकिन इन आपत्तियोंका कुहरा महात्माजीके ज्वलंत आत्मतेजके सामने कैसे टिक पाता ? हमारे ब्रिटिश मित्रोंके इन आक्षेपोंका निराकरण उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें किया। उन्होंने वहीं इनका जवाब इस प्रकार तलब किया—हमारे देशके बाहर कोई हमारा मित्र नहीं। इस विषयमें कोई गलतफहमी न कर बैठे। हमारा उद्धार हमारेही हाथ है। पुलीसका डर हमारे लिए कोई नयी बात नहीं। दूध शहदकी नालियोंसे समृद्ध संपन्न देशको पहुँचनेके लिए पहले जंगलमेंसे ही गुज़रना पड़ता है। इस तथ्यको. हम ठीक ठीक जानते हैं। आज़ादीकी भूमिको पहुँचना हो, तो जुलमजबरदस्ती, दमननीति, अन्याय, अत्याचारके जंगलमेंसे गुज़रना होगा यह हमें मालूम है। मोझेस या आरोंगके नेतृत्वपर हमें पूरा भरोसा है। हम उम्मीद करते हैं वे हमें असत्यमेंसे सत्य, अंधेरेमेंसे प्रकाश, तथा मृत्युमेंसे जीवनके प्रति पहुँचा देंगे।

इस निर्भीकताके साथ दृढ़ निश्चयको लेकर समूचा देश नागपुर अधिवेशनके बताये मार्गपर बड़े वेगसे चलने लगा। मतदाताओंने चुनावोंसे मुँह मोड़ लिया, उम्मीदवारोंने अपने नाम वापस हटा लिये। अदालतोंसे वकील तथा कॉलेजोंसे विद्यार्थी सैंकड़ोंकी तादादमें बाहर निकल आये। राष्ट्रीय शिक्षा प्रदान करनेवाले विद्यालय स्थान स्थानपर पनपने लगे। महाराष्ट्रमें प्रो. अण्णासाहब विजापुरकरजी राष्ट्रीय शिक्षाका शिलान्यास बहुत पहले कर चुके थे। अब तिलक-विद्यापीठका निर्माण हुआ। उसकी शाखाएँ स्थान-स्थानपर बड़े जोशके साथ काममें जुट गयीं। वैसेही गुजरात विद्यापीठने भी अपने कार्यको फैलाना शुरू किया।

राष्ट्रीय पाठशालाएँ, राष्ट्रीय महाविद्यालय, राष्ट्रीय विद्यापीठ आदिकी लहलहाती फसलें समूचे देशमें दृग्गोचर होने लगीं। देशबंधु दासकी पुकार सुनकर हजारों बंगाली विद्यार्थी सरकारी कॉलेजोंसे बाहर निकल पड़े। उनके लिए कलकत्तेमें राष्ट्रीय महाविद्यालयकी प्राणप्रतिष्ठा महात्माजीके हाथों की गयी। पटनामें भी बिहार विद्यापीठ कायम किया गया। केवल चार महीनेके अंदर अंदर अलीगढ़, अहमदाबाद, पटना, काशी, कलकत्ता पूना आदि शहरोंमें राष्ट्रीय विद्यापीठोंने जन्म लिया, जिनकी छत्रच्छायामें हजारों विद्यार्थी स्वतंत्र रूपसे स्वाधीनताकी शिक्षा पाने लगे। इन राष्ट्रीय विद्यालयोंमेंसे ही आगामी राष्ट्रीय संग्रामोंके सैनिक निर्माण हुए, मानो ये आगामी स्वतंत्रतासंग्रामके शिबिर ही थे।

विद्यार्थियोंकी भाँति वकील भी बाहर आये। उनपर परिवारके पोषण की जिम्मेदारी थी। कॉंग्रेस उसे कैसे उठाए। यह चिंता नागपुर अधिवेशनके स्वागताध्यक्ष जमनालालजीने महसूस की और लो. तिलक-स्वराज्यनिधिको एक लाखका दान दिया। इस दानमेंसे हर वकीलको महीना १०० रुपये तक मानधन दिया जाता था। इसका नतीजा यह हुआ कि यह बुद्धिमान वर्ग निश्चिततया कॉंग्रेसके कार्यमें कुछ समयके लिए अपनेको जुटा सका।

कॉंग्रेसके कार्यमें ज्वार आ रहा था, उत्साहकी लहरें उछल रही थीं। नेता सोचने लगे कि इस उफानसे ठोस कार्य निकल आना चाहिये। यह काम अखिल भारतीय कॉंग्रेस समितिने बेझवाडाकी बैठकमें सन् १९२१ के अप्रैलमें ठीक संपन्न किया। उसने राष्ट्रको यह संदेश दिया कि एक सालमें वह तीन कार्य पूर्ण कर दे। ये तीन कार्य थेः—

(१) तिलक स्वराज्य निधिमें एक करोड़ रुपये जमा करना,

(२) कॉंग्रेसकी सदस्यसंख्या एक करोड़ तक बढ़ाना तथा,

(३) देशभरमें २० लाख चर्खे चलाना। इन कार्योंका हर सूबेका अनुपात ठहराया गया।

इस योजनासे राष्ट्रमें मानो बिजली दौड़ गयी। केवल चार महीनेकी अवधिमें तिलकस्वराज्यनिधिमें संकल्पसे अधिक पंद्रह लाख जमा हुए। सदस्य-संख्या पचास लाख तक पहुँच गयी। संकल्पित संख्या पूरी नहीं हो पायी, तो भी वह पहले कभी इस मात्रातक नहीं पहुँच गयी थी। लगभग बीस लाख चर्खे देहातोंमें अपना संगीत अलापने लगे। खद्दर की टोपी लगभग हर सिरपर दिखाई देने लगी।

नागपुर कॉंग्रेसने सारे राष्ट्रमें नवचैतन्यका संचार कराया। किसी प्रचंड बाँधके सारे दरवाज़े खोल देनेपर जैसे पानी अनेकों रास्तोंसे उफनता चलने लगता है, वैसेही राष्ट्रका दबा हुआ कर्तृत्व असहयोग आन्दोलनके कारण सर्वत्र जोरशोरसे उछलने लगा। महात्माजीकी घोषणा थी कि एक वर्षमें स्वराज्य मिलेगा इस घोषणासे तो राष्ट्रपुरुषका अंगप्रत्यंग थर्रा उठा। गांधीजीने अंतिम प्रतिज्ञा की थी कि, "या तो ३१ दिसंबर १९२१ से पहले स्वराज्य प्राप्त कर लूँगा, या कुरबान हो जाऊँगा, या सरकारकी कैदमें रखा हुआ पाया जाऊँगा।"

इस कसमकी चिनगारियाँ हरएक व्यक्तिके दिलमें चटक रही थीं। नागपुर अधिवेशनके स्वागताध्यक्ष श्री. जमनालाल बजाजने अपना रायबहादुरीका खिताब फौरन सरकारके पास लौटा दिया और हथियारोंके लाइसेंस भी वापस किये। अदालतोंमें उनके जो मुकद्दमे जारी थे उन्हें भी उन्होंने लौटा लिया। इससे उन्हें हजारों-लाखों रुपयेका घाटा पहुँचा। लेकिन उन्हें इसमें बड़ी खुशी महसूस हुई। समर्थ रामदास स्वामीके 'कथनीसे पहले करनी' इस उपदेशपर अमल करते हुए उन्होंने गाँव-गाँवका दौरा किया और अदालतोंका बहिष्कार करनेकी सलाह देते रहे। उन्होंने कई जगह इन्साफके कामके लिए पंचायतें कायम कीं। कॉंग्रेसको वे एक लाख रुपयेका दान पहले ही इस हेतुसे दे चुके थे कि अदालतोंका बहिष्कार करनेवाले वकीलोंकी उस निधिमेंसे जीविकाके लिए सहायता की जाए। उसके अतिरिक्त उन्होंने और एक लाख रुपयेका दान दिया।

नागपुरमें जिन हज़ारों विद्यार्थियोंने सरकारी पाठशालाओं और कॉलेजोंका बहिष्कार किया था उनकी शिक्षासंबंधी सुविधाके लिए १ जनवरी १९२१ को असहयोगाश्रम खोला गया, जिसमें लगभग दो-तीन हज़ार विद्यार्थियोंने प्रवेश पाया। तिलक विद्यालयमें दो हजार विद्यार्थी राष्ट्रीय शिक्षाका पाठ पढ़ने लगे। उसमें बहुसंख्यक विद्यार्थी गैर-महाराष्ट्री लेकिन बहुसंख्य शिक्षक महाराष्ट्री थे।

मार्च महीनेमें मद्य-निरोध आंदोलन शुरू हुआ जिसके सिलसिलेमें डॉ. चोलकरको गिरफ्तार किया गया। उनके मुकदमेकी सुनवाईके वक्त अदालतमें राष्ट्रीय पाठशालाके डेढ़ हज़ार छात्र मौजूद थे। राष्ट्रीयताके खयाल पराकाष्ठा तक पहुँच चुके थे। उसकी यह एक मिसाल थी।

उस वर्ष देशभरमें इसी प्रकारसे स्वार्थत्याग तथा देशभक्तिकी घटनाओंका सिलसिला बराबर जारी रहा। मानो लोगोंमें इसके लिए होड़ लगी थी। 'एक वर्षमें स्वराज्य' प्राप्त करनेके नारेके कारण देशभरके लोगोंके अंदर ध्येयभावका जागरण हुआ था, कल्पना चेत गयी थी और स्वराज्यकी लड़ाईमें कूद पड़नेकी जिद नौजवानोंके दिलोंमें पैदा हुई थी। हर एकके दिलमें इस चेतनाका प्रकाश जगमगा रहा था कि देशके लिए कोई दिव्य, भव्य, नेत्रदीपक कार्य करनेपर ही हम लोग स्वराज्यके अधिकारी बन सकेंगे।

अहमदाबाद अधिवेशन

अगले साल १९२१ में कॉंग्रेसका अधिवेशन अहमदाबादमें हुआ। उसमें अभिप्राय प्रकट किया गया कि "दिलेरी, कुरबानी और स्वाभिमान इन तीनोंमें हिन्दुस्थानकी कौम कदम आगे बढ़ाती जा रही है।" एक वर्ष पूरा हो गया लेकिन स्वराज्य नहीं मिला। फिर भी देशमें निराशाके बादल छा जानेके बजाय नया जागरण आया। अहमदाबाद कॉंग्रेसमें इसपर संतोष और गर्वका भाव प्रतिनिधियोंके चेहरोंपर झलकता था। और ज़्यादा जोशसे काम करनेकी चाह सबके मनमें पैदा हुई थी।

इस अधिवेशनकी अध्यक्षता करनेके लिए बॅ. चित्तरंजन दास जैसे तेजस्वी नेताको चुना गया था। लेकिन कॉंग्रेसके ऐन मौकेपर सरकारने उन्हें गिरफ्तार किया। उनका भाषण श्रीमती सरोजिनी देवीने पढ़ सुनाया, और सभापतिका पद हकीम अजमलखॅनि सँभाला। हिंदु और मुस्लिम कौमोंकी एकताके प्रतीकके रूपमें हकीम साहबकी ओर देखा जाता था। उन्होंने एक बार हिंदु महासभाकी भी अध्यक्षता की थी।

गांधीजीके दायें हाथ सरदार वल्लभभाई पटेल अहमदाबाद अधिवेशनके स्वागताध्यक्ष रहे। उनकी संगठन-कुशलता इस समय कसौटीपर थी। मंत्रीके नाते श्री. दादासाहेब मावळंकरने उनकी सहायता की। अपने काममें बड़ी सतर्कता और खालिसपन बरतनेकी दादासाहबकी आदत थी। इन दोनोंके अथक परिश्रमके कारण अधिवेशनमें सादगीके साथ सौंदर्य और मितव्ययके साथ कार्यक्षमता झलकती रहीं।

गांधीजीके शहरमें होनेवाले इस अधिवेशनमें सादगी, समयकी पाबंदी तथा सुव्यवस्था रखनेकी जी-तोड़ मेहनत की गयी थी। कुर्सियाँ नहीं रखी गयी थीं। उनके स्थानपर खादीके कपडेकी चादरें फैलायी गयी थीं। प्रतिनिधियोंके कमरे भी खादीके कपड़ेसे बनाये गये थे। खादी-नगर खड़ा किया था जिसका मूल्य साढेतीन लक्ष रु. था। नागपुर अधिवेशनमें दस हजार कुर्सियाँ और दो हजार बेंचें रखी गयी थीं, जिनपर सत्रह हजार रु. खर्च करना पड़ा था। अहम बाद अधिवेशनने नया ही रूप लिया। नये ढंगके छः सौ संडास बनाये गये। मंडपमें जूते ले जाना मना किया गया था; बाहर जूते उतारनेपर नंबर लगाये टिकट देनेका इंतजाम रखा अ।

था। जो लोग अपने जूते बाहर नहीं उतारना चाहते थे ये चार आनेवाला थैला खरीदकर उसमें जूते डाल, थैलेको अपने साथ रख सकते थे। चारों ओर बिजलीकी रोशनी जगमगाती थी। प्रतिनिधियोंको अहमदाबाद शहरका परिचय दिलानेके लिए हिंदी और अंग्रेजी पथप्रदर्शिका प्रकाशित की गयी थी। आठ-आठ घंटेकी पारी स्वयंसेवकोंके लिए निश्चित की गयी थी। स्वयंसेवकोंको रात-दिन काम करना पड़ता था। केवल हिसाब किताब रखनेके काममें ही १०५ स्वयंसेवक लगे हुए थे। इंडियन नॅशनल सर्विस नामका स्वयंसेवक दल खड़ा किया गया था।

इस सारे कारोबारमें घाटा न सहना पड़े इस लिहाजसे दर्शकोंके टिकटोंकी दरें बढ़ायी गयी थीं। इसके पहलेके अधिवेशनोंमें ये दरें दससे बीस रु. तक होती थी। अहमदाबाद अधिवेशनमें दरें एकसौ, पाँचसौ, एक हजार तथा पाँच हजारकी रखी गयी थीं। कॅांग्रेसके नामज़द सभापति देशबंधु चित्तरंजन दासके बैठनके लिए चाँदीका तख्त बनाया गया था। अधिवेशनके साथ साथ स्वदेशी प्रदर्शनका भी आयोजन किया गया था। प्रतिनिधियों तथा दर्शकोंके दिलबहलावके लिए संगीत परिषद लगायी गयी थी।

नागपुर कॅांग्रेसने प्रतिनिधियोंकी संख्यापर रोक लगायी थी जिसके कारण उसमें सिर्फ ६२३४ प्रतिनिधि मौजूद थे। लेकिन दर्शकोंकी मौजूदगी लाखोंकी संख्यामें थी। अहमदाबाद अधिवेशनमें स्वागताध्यक्षके नाते लंबे लंबे भाषणोंकी पुरानी परिपाटीके विपरीत श्री. वल्लभभाईने बिल्कुल छोटा-सा भाषण दिया। प्रस्तावोंकी संख्या भी काफी घटायी गयी। १९१९ के अमृतसर कॅांग्रेसमें ४१ प्रस्ताव मंजूर किये गये थे। लेकिन अब गांधी-युगमें कॅांग्रेसका ध्यान सरकारका धिक्कार या आरज़ू-मिन्नत करनेपर नहीं, बल्कि खुद ठोस-काम करनेपर था। इसलिए अहमदाबाद अधिवेशनमें कामके निर्देशात्मक सिर्फ नौ प्रस्ताव स्वीकार हुए।

प्रस्तावोंके नव-रत्नोंकी इस मालाका कौस्तुभ-मणि था असहयोगका प्रस्ताव। कलकत्ता और नागपुरके अधिवेशनोंमें असहयोगके कार्यक्रमपर काफी बहस हो चुकी थी। उसपर अब फिर बहसकी क्या ज़रूरत?

लेकिन नागपुर अधिवेशनके बाद लोगोंने प्रत्यक्ष कृति की थी जिसके परिणाम स्वरूप सरकारने अपना दमनचक्र ज़ादा तेज़ किया था। इसका

नतीजा यह निकला कि पं० मालवीय, बॅ. जिना आदि जो नेता नागपुर कॅांग्रेसके समय असहयोगके खिलाफ थे, वे अब उसके समर्थक बने हुए थे। सरकारके दमनका मुकाबिला करनेको सारा देश खड़ा हुआ। अहमदाबाद कॅांग्रेसमें स्वयं म. गांधीने असहयोगका प्रस्ताव पेश किया। वह इतना लंबा था कि उसे हिन्दी और अंग्रेजीमें पढ़नेके लिए उन्हें पैंतीस मिनिट लगे। इस प्रस्तावद्वारा पहलेकी बातोंमें जो बदल हुए वे इस प्रकार थे; स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए एक वर्षकी शर्त हटायी गयी; सरकारद्वारा पाबंदी लगाये हुए स्वयंसेवक दलका संगठन बढ़ानेका जनताको आदेश दिया गया; जिस प्रांतने अहिंसाके व्रतको पूर्ण रूपसे अंगीकार किया हो उसे उचित तरीकेसे कानून तोड़नेका आन्दोलन छेड़नेका अधिकार दिया गया।

खादी, नशाबंदी, सांप्रदायिक एकता तथा अस्पृश्यता-निवारण आदि रचनात्मक कार्यक्रमपर एक प्रस्तावद्वारा जोर दिया गया। मलाबारकी मोपला कौमके फिसादके बारेमें एक प्रस्ताव हुआ। कॅांग्रेसका विधान, सिक्खोंको बधाई आदि संबंधी भी प्रस्ताव हुए। बहसमें कई मुस्लिम उलेमाओंने महत्त्वपूर्ण भाग लिया।

इस सारी बहसमें सबसे अहम सवाल था असहयोगका। कॅांग्रेसद्वारा कानून तोड़ने तकका आदेश दिया जा चुका था। इससे प्रतिनिधियोंका ध्यान उसपर केन्द्रित हुआ था। अधिवेशनके समाप्त हो जानेपर भी कइ प्रतिनिधि अपने अपने निवासोंमें उसपर बहस करते रहे। यह मालूम होनेपर गांधीजी हर एक प्रांतके शिबिरमें गये और उन्होंने कानूनके भंगका सिद्धान्त और कार्यक्रम विस्तारपूर्वक समझा दिया। कलकत्ता कॅांग्रेसके प्रस्तावमें कहा गया था कि, "उच्चार और आचारमें अहिंसा बरती जाए।" अहमदाबादके प्रस्तावमें अहिंसाके आचरणका विस्तार और भी बढ़ा दिया गया। और कहा गया कि, "मनसे भी अहिंसा न बरती जाए।" गांधीजी इस बातपर जोर देते रहे कि उच्चार-आचार-विचारसे संपूर्ण अहिंसाका पालन करनेवाले व्यक्ति ही कानून तोड़नेके अधिकारी हो सकते हैं। विपक्षीके बारेमें अपने मनमें भी हिंसा तथा द्वेष-भावके लिए स्थान नहीं देना चाहिए। विचार, उच्चार और आचारमें

सत्याग्रहीको अहिंसा बरतनी चाहिए। उनके उस सिद्धान्तको व्यवहारमें कैसे क्रियान्वित किया जाए इस संबंधमें काफी सोच-विचार हुआ।

अहमदाबाद अधिवेशनका प्रबंध इतना कार्यक्षम था कि अधिवेशनकी कारवाई २९ दिसंबरकी शामको समाप्त हुआी, और उसके दूसरे ही दिन ३० दिसंबरकी दोपहरको १२ बजे कोषाध्यक्ष श्री. जमनालाल बजाजके हाथोंमें मंत्री श्री. मावळंकरने लाखों रुपयेका हिसाब तथा चवालीस हजार रु. की बचत निधि सुपूर्द कर दी। अधिवेशनका प्रतिवेदन ब्योरेवार, थोड़ेही समयमें, देशी कागजपर छापा गया।

अहमदाबादके लोगोंने यह चाहा कि कॉंग्रेस जैसे देशरूपी देवताके आगमनका उचित स्मारक बनाया जाए। अधिवेशन जिस स्थानपर संपन्न हुआ वह इक्कीस एकडकी भूमि १९२८ में डेढ लक्ष रु. में खरीद ली गयी। लगभग छः सात लक्ष रु. निधि इकठ्ठा किया गया, और उसमेंसे उस भूमिपर गरीबोंके लिए रुग्णालय तथा प्रसूतिगृहका निर्माण किया गया। उसके अहातेमें एक बढ़िया फौवारा बनाया गया जिसकी शिलापर खोदा गया है कि, "१९२१ में इसी स्थानपर संपन्न हुए कॉंग्रेस अधिवेशनकी स्मृतिके उपलक्ष्यमें।"

लड़ाई जो होनेसे रही

शुरूमें सीमित क्षेत्रमें ही कानून तोड़ना मुकर्रर हुआ था। स्वातंत्र्यकी इस लड़ाईका मैदान कहाँ हो? यह सम्मान गुजरातके बार्डोली तहसीलको प्राप्त हुआ। अँग्रेज़ पहले-पहल गुजरातके सूरत ज़िलेमें आये। उन्हें यहाँसे निकाल देनेके कामका प्रारंभ गुजरातमें हो जाए, यह उचित था। लेकिन बार्डोलीको वहाँके संगठनकी दृढ़ताके कारण चुना गया। वल्लभभाईने दिनरात अथक परिश्रम उठाते हुए उस तहसीलकी अहिंसक संग्रामके लिए सब प्रकारसे तैयारी की थी।

कानून तोड़नेका आंदोलन छेड़नेसे पहले सत्याग्रहके सिद्धान्त-विधानके अनुसार म. गांधीने विपक्षी सरकारको १ फरवरीको एक अंतिम-पत्र भेजा उसमें उन्होंने लिखा था, "पंजाब, खिलाफत तथा स्वराज्यके बारेमें अन्यायोंके अलावा और भी अन्याय, सभाओं, स्वयंसेवक-संगठनों तथा मुद्रणपर रोक लगाकर लोगोंपर लगायी गयी पाबंदियाँ और अधिक कड़ी कर दी गयी हैं। इन सारी पाबंदियोंको अगर सात दिनमें हटाया जाए तथा

सभी राजबंदियोंको रिहा किया जाए तो मैं कानून अवज्ञाके आक्रमणकारी कार्यक्रमको मुल्तवी रखूँगा । " लेकिन इसे माननेके बजाय सरकारने नफरतसे भरा जवाब भेजा । बार्डोलीके किसानोंने अहिंसाका जिरह बख्तर पहना, एक हाथमें सत्यकी ढाल और दूसरेमें अहिंसाकी शमशेर उठायी । कानून तोड़नेके संग्रामका प्रारंभ होनेही था । लेकिन——

युक्त प्रांतके चौरीचुरा गाँवके लोगोंके जुलूसपर पुलिसवालोंने गोलियाँ दागीं, जिससे चिढ़कर लोगोंने पुलिसके थानेमें आग लगा दी और पुलिसके इक्कीस आदमियोंको जिंदा जला दिया ! इस अत्याचारका समाचार पाते ही अहिंसाके पुजारी गांधीजीने बार्डोलीका कानून अवज्ञाआंदोलन रद कर दिया और अनशन शुरू किया ।

पुरज़ोर गतिसे दौड़ती हुई रेलमें अकस्मात् ब्रेक लगानेसे उसमें सवार मुसाफिरोंको जिस प्रकार धक्के लगते हैं, ठीक उसी प्रकार इस समय कॉंग्रेसियोंको धक्का लगा । बार्डोलीका आंदोलन चौरीचुराके हिंसक अत्याचारके कारण एकाएक स्थगित हुआ, इससे देशभरमें निराशा छा गयी तथा लोगोंका आत्मविश्वास भी डगमगा गया । सरकारने सोचा कि अब जनता कॉंग्रेसके पीछे नहीं रही, तथा कॉंग्रेस गांधीजीके पीछे नहीं रही । यह देख कि गांधीजी अब अकेले रह गये हैं सरकारने उन्हें अपनी दमननीतिका शिकार बनाया । १० मार्च १९२२ को गांधीजीको गिरफ्तार किया गया और दूसरे ही दिन, तिरपन वर्षकी अवस्थामें उन्हें छः सालकी सज़ा दी गयी ।

गांधीजी येरवडाके जेलखानेमें अटक गये और कॉंग्रेस अकर्मण्यताके गढ्ढेमें गिर पड़ी । गांधीजीकी गैर-मौजूदगीमें कॉंग्रेसी नेताओंकी कार्यशीलता कसौटीपर रही । सभीको स्वीकार करना पड़ा कि गांधीजीका बताया सत्याग्रहकी लड़ाईका कार्यक्रम नहीं निभ सकता । संग्रामके अभावमें अब क्या किया जाए ? एक कार्यक्रम था विधान-सभामें जानेका । चि. दास, मोतीलाल नेहरू तथा लाला लाजपतराय पहलेसे ही उसके समर्थक थे । इस शांत और ठंडे कार्यक्रममें कोई खतरा नहीं था । उसे लोगोंद्वारा समर्थन मिलता रहा । कॉंग्रेसके कार्यक्रममें यह परिवर्तन लानेके इच्छुक कॉंग्रेसी 'फेरवाले' कहलाने लगे ।

इसके विपरीत, गांधीजीके शब्दोंको प्रमाण मानकर चलनेवाले काँग्रेसी 'नाफेरवाले' कहलाये। इन लोगोंमें भी सत्याग्रहकी आगसे भभकती भूमिपर खड़े होनेका हादस नहीं था। अपने पीछे काँग्रेसको खींच लानेका बल भी उनमें नहीं था। उन्होंने गांधजीके बताए रचनात्मक कार्यपर डटे रहनेकी ठान ली। राजेंद्रप्रसाद, राजगोपालाचार्य, जमनालाल बजाज तथा देवदास गांधी—इन चार सदस्योंकी समितिने विधायक कार्यक्रमका प्रचार करते हुए १९२३ में देशभरकी यात्रा की। अ. भा. खादी मंडल, सत्याग्रह समिति, कानून—अवज्ञा समिति, हिन्दुस्थानी सेवादल आदि कई संस्थाओंके द्वारा काँग्रेसने अपने कार्यका चिराग रोशन रखा।

गया काँग्रेसका कार्य

गयामें १९२२ में बॅ. दासकी अध्यक्षतामें काँग्रेसका अधिवेशन हुआ। उसमें विधान सभा—प्रवेशकी समस्याका निपटारा करनेके लिए पाँच दिन लगे। और आखिरमें विधान—सभाका बहिष्कार बनाये रखनेका प्रस्ताव स्वीकार किया गया। इससे 'फेरवाले' नरम दलका असंतोष स्वाभाविक था। उनके असंतोषका विस्फोट दिल्लीमें काँग्रेसके ज्यादा अधिवेशनके अवसरपर हुआ। मौ. आजादने इस अधिवेशनकी अध्यक्षता की। फेरवाले नरम दलने बाज़ी मार ली। काँग्रेसियोंके लिए विधान—सभाके दरवाज़े खुल गये। विधान-सभा-प्रवेशके खिलाफ प्रचार करना भी मना किया गया। प्रस्तावमें साफ साफ कहा गया कि, "जिन काँग्रेसियोंके सद्विवेकको उचित लगता हो उन्हें विधान—सभाओंके होनेवाले चुनावमें उम्मीदवार होकर खड़े रहनेकी इजाजत होगी। विधान-सभामें जानेके विरोधी प्रचार स्थगित रखा जाए।

कोकोनाड़ा और कौन्सिल-प्रवेश

कोकोनाड़ामें १९२३ में मौ. महंमदअलीके सभापतित्वमें काँग्रेसका अधिवेशन हुआ। उसके कुछ दिन पहले येरवडा जेलखानेसे देवीदास गांधीके मार्फत मौ. महंमदअलीके पास म. गांधीका एक संदेश आया था उसमें उन्होंने कहा था, "मेरी राय पहले जैसी ही है, उसमें कोई फर्क नहीं हुआ है। लेकिन मेरा अपना मत आपको पसंद न हो तो भी मेरे आपसे स्नेहभावमें कोई कमी नहीं आएगी।"

इस छोटेसे धागेको पकडकर महंमदअली कौन्सिल-प्रवेशके स्वर्गमें घुस गये। उन्होंने कौन्सिल—प्रवेशका समर्थन करते हुए काव्यमयी शैलीमें कहा "मेरे कानोंमें एक पंछी यह दिव्य संदेश गुनगुना रहा है कि गांधीजी

कौन्सिल-प्रवेशके खिलाफ कोई आपत्ति नहीं उठाएँगे।" गांधीजीकी इज्ज़तके लिए मुख्य प्रस्तावमें कहा गया कि, "कलकत्ता, नागपुर, अहमदाबाद, गया और दिल्ली (ज्यादा अधिवेशन) में स्वीकृत असहयोगके प्रस्तावका यह कॉंग्रेस समर्थन करती है और घोषित करती है कि कौन्सिलोंका बहिष्कार करनेकी नीतिमें परिवर्तन नहीं हुआ है।" फेरवाले नरम-दलके नेताओंने अपनी सुविधाके लिए प्रस्तावसे यह मतलब निकाला कि कौन्सिलोंमें जाकर भी असहयोगकी नीतिको अपनाया जा सकता है। इससे कौन्सिल-प्रवेशके कार्यक्रमको बल मिला।

नागपुरका झंडा-सत्याग्रह

नाफेरवाले दलके सामने चरखा, अस्पृश्योद्धार आदि सौम्य कामोंके अतिरिक्त और कोई कार्यक्रम नहीं था। लेकिन १९२३ में नागपुरके सरकारी अधिकारियोंने उनके लिए सत्याग्रहका अवसर ला दिया। वहाँके पुलीस अधिकारियोंने धारा १४४ अंतर्गत, कॉंग्रेसका तिरंगा झंडा शहरके सिव्हिल लाइन्स क्षेत्रमें जुलूसमें ले चलनेपर दो महीनेके लिए रोक लगायी। कॉंग्रेस जैसी वैध संस्था और उसका कार्यक्रम भी पूर्ण अहिंसात्मक तथा शांततापूर्ण। फिर उसके झंडेपर रोक क्यों? कॉंग्रेसियोंने महसूस किया कि कॉंग्रेसकी नेतृत्व-रहित और पराभूत स्थितिमें उसके झंडेपर रोक लगानेके मानी हैं कि मानो सरकार उसके सामने नाक खुजलाकर उसे चिढाना चाहती है। गांधीजीकी गैर-मौजूदगीमें उनके शिष्योंकी देशभक्ति, सत्याग्रह-निष्ठा तथा कार्यशीलता इस समय कसौटीपर थीं।

और उनके लिए गौरवकी बात है कि वे इस कसौटीपर सही उतरे। झंडा-बंदीकी अन्याय्य आज्ञाको तोड़नेके लिए सत्याग्रह करनेका कॉंग्रेसियोंने निश्चय किया। उसका नेतृत्व जमनालाल बजाजको सौंपा गया। जमनालालजीने अपनी संमति प्रकट की कि, "राष्ट्रीय झंडा राष्ट्रकी इज्ज़तकी निशानी है। उसकी शानकी रक्षाके लिए छिड़े हुए आंदोलनमें अपना योग देना मैं अपना धर्म मानता हूँ। इस धर्मको क्रियान्वित करनेमें जो मुसीबतें उठानी पड़ेंगी तथा कष्ट सहने पड़ेंगे उन्हें शांति और संतोषके साथ सहना मेरा फर्ज़ है।"

नागपुरमें २२ अप्रैलकी शामको विराट सभा हुई। उसमें सभापतिके नाते जमनालालजीने घोषित किया, "हमारे राष्ट्रीय झंडेकी बेइज्ज़ती हम नहीं बरदास्त कर सकते। उस बेइज्जतीके मुकाबलेके लिए ता. १ मईसे सत्याग्रह शुरू होगा।"

सत्याग्रहकी यह पुकार देशभरमें गूँज उठी। बंबई, कर्नाटक, पंजाब, बंगाल, बिहार, तामिलनाड आदि विभिन्न प्रांतोंसे नौजवानोंके जत्थे नागपुरकी ओर रवाना हुए। वल्लभभाई पटेल भी इस आंदोलनके अग्रमें रहे। देशके कोनेकोनेसे आये हुए सत्याग्रहियोंका समुद्र नागपुरमें उमड़ आया!

ता. १ मईका दिन आया। दस नौजवान सत्याग्रही हाथोंमें तिरंगी झंडे लिए असहयोगाश्रमसे वीरकी उमंग और जोश लेकर निकले। ये शांति-सैनिक 'सारे जहाँसे अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' यह स्फूर्तिप्रद युद्ध-गान गाते हुए, कदम बढ़ाते हुए चले। यह जुलूस तीन मीलतक चलता रहा। स्थान स्थानपर इन वीर सैनिकोंको पुष्पमालाएँ पहनायी जाती रहीं। वीरोंकी शानसे सत्याग्रही उस मैदानपर आ पहुँचे जो सत्याग्रहकी रणभूमि थी।

झंडा-चौकका दृश्य बड़ा रोमहर्षण था। दस सत्याग्रही हाथोंमें झंडे लिए दिग्गजोंकी भाँति डटे हुए थे। उनके पीछे दो फर्लांगके फासलेपर दूसरे दस सत्याग्रहियोंका जथा आगे बढ़नेकी प्रतीक्षामें खड़ा था। इन दोनों जत्थोंके बीचमें जमनालालजी खड़े थे। उनके पीछे तीन फर्लांगपर हजारोंकी संख्यामें नागरिकोंकी भीड़ लगी थी। दूसरी ओर हथियारोंसे लैस पुलिसवालोंका दल खड़ा था।

मनाहीकी आज्ञाको तोड़कर जो सत्याग्रही हाथोंमें झंडे लिये आगे बढ़ते थे उनके सरपर, पीठपर, हाथपर पुलिसवालोंके डंडे बरसते थे। पुलिसवाले झंडे छीन लेते थे और उनमें लगे डंडोंसे सत्याग्रहियोंको पीटते थे। बेहोश होकर सत्याग्रही जमीन गिर पड़ते तब पुलिसवाले कुत्तेकी तरह उन्हें घसीटकर नालियोंमें फेंक देते थे।

इस सत्याग्रहका समाचार पाकर देशभरमें लोगोंका खून खौल उठा। देशभरसे सत्याग्रहियोंके जत्थे नागपुरमें आने लगे। सामूहिक सत्याग्रहके लिए १८ जूनका दिन मुकर्रर किया गया। सरकारने ता. १७ की रातको अंधेरेमें चुपकेसे ढाईसौ सत्याग्रहियोंको गिरफ्तार किया। उस वक्त वे गहरी नींदमें सो रहे थे। सत्याग्रहियोंके साथ रसोइयोंको भी गिरफ्तार किया गया। इन सैनिकोंके सिपह-सालार जमनालाल बजाज भी गिरफ्तार हुए। आचार्य विनोबा भावे भी पकड़े गये। सभीको एक एक सालकी सजा दी गयी।

लेकिन जमनालालको उनके प्रमुख होनेके कारण डेढ़ सालकी सजा और तीन हजार रु. जुर्मानेका कड़ा दंड दिया गया। सरकारके इस दमनका धिक्कार करनेके हेतुसे बंबईके अनाजके बाजारमें हड़ताल की गयी। अकोला, कलकत्ता आदि दूसरे शहरोंमें भी हड़ताल मनायी गयी।

जुर्मानेकी वसूलीके लिए पुलिसवाले जमनालाल के घर गये और उन्होंने उनकी मोटरगाड़ी, घोड़ागाड़ी तथा चारसौ रु. नकद रखा हुआ संदूक जब्त कर लिया। मोटरगाड़ी और घोड़ागाड़ीका नीलाम दो बार पुकारा गया। लेकिन किसीने भी नीलाम बोलना नहीं चाहा। इन वस्तुओंको नीला-ममें उठाने जैसा देशद्रोहका काम कौन कर सकता था। जब्त वस्तुएँ कई दिन वर्धा शहरकी कचहरीमें पड़ी रहीं। बादमें मोटर राजकोट भेजी गयी। वहाँ उसे किसी हिन्दुस्थानी व्यक्तिने नहीं खरीदा। एक अँग्रेज अधिकारीने थोड़े दामपर उसे खरीदा।

सरकारका दमन बढ़ता जा रहा था। साथ साथ लोगोंकी लड़नेकी ताकत भी बढ़ रही थी। नागपुरका जेलखाना सत्याग्रही बंदियोंसे ठसाठस भर गया था, इसलिए अकोलामें जेलखाना खोला गया, लेकिन वह भी भर गया। जेलखानेमें चक्की पीसना, अँधेरी कोठरीमें रखना आदि क्रूर सजाएँ दी जाती थीं, फिरभी सत्याग्रह आंदोलन बढ़ता चला। जमनालाल के स्थानपर सरदार वल्लभभाई आये। सत्याग्रह लगातार १०९ दिनतक जारी रहा। १८४८ सत्याग्रहियोंको कैद किया गया। उनमें विद्यार्थी, वकील, व्यापारी, किसान, शिक्षक, डॉक्टर आदि विभिन्न पेशेके लोग थे। विभिन्न संप्रदायों, मजहबों और दलोंके लोग उनमें थे। उनकी ताकत, साहस, अनुशासन तथा मजबूत संगठन देख सरकारने नरमाईका का रुख अखतियार कर लिया।

सारे देशकी पुकार सुनकर सरकारने पीछे हटना उचित समझा। और समझौतेकी वार्ता शुरू हुइ। १८ अगस्तके रोज दोपहर १२ बजे एकसौ स्वयंसेवक हाथोंमें तिरंगे झंडे लिये सिविल लाइन क्षेत्रमें बिना किसी रोक टोकके गये। उन्हें गिरफ्तार नहीं किया गया। सत्याग्रह सफल हुआ। ता. ३ सितंबरको सभी सत्याग्रही जेलखानेसे रिहा हो गये।

काँग्रेसके विश्वविजयी तिरंगी झंडेकी शान इस प्रकार रखी गयी।

● ● ●

६ समाजवादकी दीक्षा

गांधीजीकी रिहाई १९२४ के फरवरीमें हुई। उनके बीमार हो जानेके कारण १२ जनवरीको उनके पेटका ऑपरेशन किया गया। हालाँकि उन्हें छः सालकी सजा हुई थी, फिर भी ५ फरवरी १९२४ को ही उन्हें रिहा किया गया। स्वास्थ्य-सुधारके लिए बम्बईके पास सागर-तटपर जुहूमें उन्होंने निवास किया। उस वक्त उनके सामने यह एक अहम सवाल खड़ा था कि दो विभिन्न दलोंमें खंडित कॉंग्रेसको फिरसे एकत्र कैसे बाँध लिया जाए?

इसके दस वर्ष पूर्व ठीक इसी प्रकारका सवाल एक ऐसे ही नेताके सामने खड़ा था। लोकमान्य तिलक छः साल मांडलेके जेलखानेमें बिताकर १९१४ में पूना लौट आये थे। उनकी गैर.मौजूदगीके छः वर्षोंमें देशकी राजनैतिक हालतमें अँधेरा-सा छा गया था। उनके नजदीकके अनुगामियोंमें भी फूट और मनमुटाव पैदा हो गया था। उसे मिटाकर और कॉंग्रेसको ताकतवर बनाकर स्वराज्यकी लड़ाई कैसे बराबर जारी रखी जाए, इसकी फिक्रने उस महान् आत्माको व्यथित कर रखा था। उन्होंने देशकी भलाईकी व्यापक दृष्टिसे बेलगाँवमें कॉंग्रेसके प्रतिज्ञापत्रपर दस्तखत किया और उसमें प्रवेश पा लिया। होमरूल लीगको कायम कर और लखनौ कॉंग्रेसमें हिन्दु-मुसलमान कौमोंमें एकता स्थापित कर उन्होंने स्वराज्यकी लड़ाई मरते दमतक जारी रखी।

ठीक वैसाही श्रेष्ठ कार्य म. गांधीने १९२४ में बेलगाँव कॉंग्रेसके अवसरपर सफलतासे पूरा किया। उनके जुहूके निवासमें दास, नेहरू आदि कौन्सिल प्रवेशके समर्थक 'फेरवाले' नेताओंने उनसे भेंट की और महत्त्व-पूर्ण बातोंकी चर्चा की। इन नेताओंके मनमें गांधीजीके प्रति असीम श्रद्धा थी, और गांधीजीके मनमें उनके प्रति अपार स्नेह था। स्वराज्य प्राप्त करना दोनोंका ही समान ध्येय था। फिर भी दोनोंके रास्ते अलग अलग दिखाई देने लगे। गांधीजीने दोनों दलोंको कॉंग्रेसकी समान छत्र-च्छायाके अंतर्गत बनाये रखनेकी कोशिश की। और उसमें उन्हें बेलगाँवके अधिवेशनमें सफलता भी मिली। कॉंग्रेसके बेलगाँव अधिवेशनकी अध्यक्षता स्वयं गांधीजीने की।

बेलगाँव कॉंग्रेसका सुयश

१९२० से कॉंग्रेसके सभी अधिवेशन गांधीजीके प्रभुत्वमें होते रहे। उनमेंसे किसी भी अधिवेशनकी अध्यक्षताका तख्त और ताज वे आसानीसे पा सकते। लेकिन उसे लेनेसे वे इनकार करते रहे। फिर भी वे कॉंग्रेसके सर-सभापति रहे। उनके इशारेपर हिन्दुस्थानकी जनता चलती थी। बेलगाँव कॉंग्रेसका भी सभापतित्व करना वे नहीं चाहते थे। लेकिन फेरवाले और नाफेरवाले, नरम और गरम दलोंवाले, इनकी आपसी फूटको मिटानेके लिए स्वयं सभापतित्व करना उन्होंने जरूरी समझा।

सभापतिके नाते गांधीजीने बिलकुल छोटा-सा भाषण दिया। उसमें उन्होंने १९२० सालसे कॉंग्रेसका किस प्रकार विकास होता जा रहा था। उसका सिंहावलोकन किया, और विधायक कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेपर जोर दिया। खादी-प्रचार, हिन्दू-मुसलमान एकता, अस्पृश्यता-निवारण, राष्ट्रीय पाठशालाओंका संवर्धन आदि इस विधायक कार्यक्रमके कई पहलू थे। गांधीजीने भाषणमें निम्न प्रकार स्वराज्यकी द्वादश-सूत्रीय योजना प्रस्तुत की :

(१) मताधिकार हस्त-व्यवसायपर निर्भर रहे।

(२) सैनिक खर्च उतना ही किया जाए जितना अंतर्गत सुरक्षाके लिए पर्याप्त हो।

(३) न्यायदान सुलभ तथा कम खर्चीला हो । सर्वोच्च न्यायमंडल दिल्लीमें होना चाहिये, लंदनमें नहीं । बहुतांश मुकदमोंका फैसला पंचायतों द्वारा किया जाए ।

(४) शराब आदि नशीली चीजोंपर बंदी लगायी जाए ।

(५) सरकारी नौकरोंकी तनख्वाहें इस देशकी परिस्थितिके अनुरूप काफी घटायी जाएँ ।

(६) प्रांतोंकी पुनर्रचना भाषाके आधारपर की जाए । प्रांतोंको अंतर्गत शासनमें पूरी स्वायत्तता रहे ।

(७) व्यापारके क्षेत्रमें पाश्चिमी देशोंके व्यापारियोंको जो एकाधिकार प्राप्त है उसकी छानबीन कमिशनद्वारा करायी जाए ।

(८) रियासतोंपर केन्द्रीय सरकारका दबाव न रहे । रियासतोंकी रियाया स्वराज्यसंपन्न हिन्दुस्थानमें रहना चाहे तो उसे उस बातके लिए छूट रहे ।

(९) अधिकारियोंको अनिर्बंध अधिकार दिलानेवाले सारे कानून रद किये जाएँ ।

(१०) सरकारी नौकरियोंमें पक्षपात न रहे, और काबिलियतके मुताबिक भर्ती की जाए । नागरी और सैनिक नौकरियोंमें भर्ती करनेके लिए आवश्यक परीक्षाएँ हिन्दुस्थानमेंही ली जाएँ ।

(११) सभी मजहबोंको पूरी स्वतंत्रता रहे । वे आपसमें सहिष्णुतासे काम लें ।

(१२) प्रांतोंमें सरकारी कारोबार प्रांतीय भाषाओंके माध्यम द्वारा होना चाहिए । केंद्रीय सरकार, केंद्रीय विधान-सभा तथा सर्वोच्च न्यायालयका कारोबार हिन्दुस्थानी भाषा और देवनागरी या फारसी लिपीद्वारा चले । आंतरराष्ट्रीय राजनीतिकी भाषा अँग्रेजी होगी ।

इस काँग्रेसके समक्ष प्रधान कार्य था फेर-नाफेरवालोंमें समझौता कराना । गांधीजीने उदारता तथा कुशलतासे उस कार्यमें सफलता पायी । दास, नेहरू आदिका कहना मानकर कौन्सिलोंका बहिष्कार हटाया गया और इस योजनाको अनुमति दी गयी कि काँग्रेसकी ओरसे 'स्वराज्य दल' कौन्सि-

लोंमें काम करे। यूँ कहा जाए कि विदेशी कपडेको छोड़ और सभी चीजों-परसे बहिष्कार हटाये गये। गांधीजीका कहना मानकर दास, नेहरू आदिने कॉंग्रेसकी सदस्यताके लिए हाथ-कते सूतकी शर्त स्वीकार की।

लेकिन समझौतेकी इस पगडंडीनें आगे चलकर प्रशस्त और विस्तृत रास्तेका रूप ले लिया। पटनामें सितंबर १९२५ में अखिल भारतीय कॉंग्रिस कमिटीकी बैठक हुई। यूँ कहा जाए कि उसमें गांधीजीने स्वराज्य दलको सब कुछ समर्पित किया। कॉंग्रेसकी सदस्यताके लिए हाथकते सूतकी कड़ी शर्त हटायी गयी। सदस्यताका चंदा चवन्नी या हाथकता सूत निर्धारित किया गया। असहयोगके बचेखुचे अंशोंको पोंछ डाला गया। गांधीजीने स्वराज्य दलको कॉंग्रेसकी सारी ताकत दे डाली। इसकी क्या वजह थी? क्यों कि उस वक्त अँग्रेज सरकार स्वराज्य दलके सदस्योंपर खुले आम या छुकछिपकर धावा बोल रही थी। इसलिए गांधीजीने कॉंग्रिसकी पहाड़-सी ताकद स्वराज्य दलके पीछे खड़ी की। स्वराज्य दलने जो भी कुछ चाहा, सब पाया।

कानपुरकी काव्यवाणी

स्वराज्य दलके पृष्ठपोषणकी जिस नीतिको पटनामें अपनाया गया, उसपर कानपुरके अधिवेशनने मुहर लगायी। कॉंग्रिसका यह अधिवेशन १९२५ के अंतमें सुश्री सरोजिनी नायडूकी अध्यक्षतामें संपन्न हुआ। भारतकी बुलबुल कहलानेवाली, दुनियाभरमें मशहूर कवयित्रीने अपने वक्तृत्वकी वीणा बजाते हुए अपने भाषणमें हिन्दुस्थानियोंको संदेश दिया कि, "गुलामीकी शर्मनाक हालतसे अपनी मातृभूमिको छुड़ानेके लिए, आनेवाली पीढ़ियोंके वास्ते शान्तिकी विरासत रखनेके लिए, हम सब कुछ निछावर करें, कड़ी से कड़ी मुसीबतें उठाएँ, बड़ी बड़ी कुरबानियाँ करें, और यह करनेपर ऐसा न समझें कि हम काफी कर चुके!" उन्होंने एक जोशीला मंत्र भी दिया कि, "गुलामी जैसा पाप नहीं, और अत्याचार को बरदाश्त करने जैसा गुनाह नहीं।"

कानपुर कॉंग्रिसकी एक बात संस्मरणीय है। अमेरिकाके रेवरंड होल्म्सने गांधी टोपी पहनी, भाषण देकर गांधीजीके प्रति श्रद्धांजलि समर्पित की, और दर्शकोंको पुलकित किया।

गांधीजीने संकल्प किया कि कानपुर कॉंग्रेसके बाद एक वर्षतक वे दौरा नहीं करेंगे। अपनी ही इच्छासे गांधीजीने अपनेको मानो बंदीखानेमें रखा था। उन्होंने अपना वर्षभरका यह सार्वजनिक 'मौन' गौहत्ती कॉंग्रेसमें तोड़ा। यह अधिवेशन दिसंबर १९२६ में हुआ।

गौहत्ती कॉंग्रेस और रचनात्मक कार्यक्रम

गौहत्ती कॉंग्रेसका सभापतित्व श्री. श्रीनिवास अयंगारने किया। असममें हाथियोंके झुंडके झुंड पाये जाते हैं। अध्यक्षको हाथीपर बिठाकर जुलूस निकालना तय हुआ था। लेकिन स्वामी श्रद्धानंदकी हत्याका समाचार पाकर सबका उत्साह ठंडा पड़ गया। हाथियोंका जुलूस रद किया गया।

स्वामी श्रद्धानंदकी हत्यासंबंधी प्रस्ताव गांधीजीने पेश किया, और महंमदअलीने उसकी ताईद की। गांधीजीने अपने भाषणमें कहा, "स्वामीजीके हत्यारे अब्दुल रशीदको मैंने अपना भाई कहा था। मैं उस बातको दुहराना चाहता हूँ। इस खूनके लिए मैं उसे जिम्मेदार नहीं मान सकता। सही मानेमें इसके जिम्मेदार वे लोग हैं जिन्होंने सांप्रदायिक विद्वेषकी आग भड़कायी।" किसी मर्जकी जड़तक पहुँच जाना और उसे निपटानेकी कोशिश करना गांधीजीके स्वभावमें था। हर किसी बातपर वे इस मूलगामी दृष्टिसे सोचते थे।

स्वराज्य पार्टीको कॉंग्रेसने कौन्सिलोंमें जानेकी इजाजत दी, लेकिन एक प्रस्तावद्वारा मंत्रिपदोंको स्वीकार करनेसे मना किया। कॉंग्रेसके चुनावमें खादी पहननेकी शर्त लाजिमी कर दी गयी। गांधीजीकी इच्छानुसार गाँवोंके उत्थानसंबंधी एक प्रस्ताव भी स्वीकार किया गया। अधिवेशनके साथ हमेशाकी तरह खादी-प्रदर्शन आयोजित किया गया था। गांधीजी विधायक कार्यपर जोर देना चाहते थे। उनका विश्वास था कि विधायक कार्यके द्वारा लोगोंमें अनुशासन और संगठन निर्माण होगा। लोगोंमें अनुशासन और संगठन न हो तो स्वातंत्र्य प्राप्त करना असंभव है। इस-लिए अधिवेशनमें स्वातंत्र्य-प्राप्तिके लिए पेश किये गये एक प्रस्तावका गांधीजीने विरोध किया, जिससे वह प्रस्ताव गिर गया।

लेकिन सरकारके बढ़ते हुए दमन-चक्रके कारण जनताकी स्वातंत्र्यभक्ति तीव्रतर होती जा रही थी। ज्यों ज्यों लोगोंके अंदर राष्ट्रीयताका भाव बढ़ता गया त्यों त्यों सरकार काँग्रेसके खिलाफ मुस्लिमोंको उभाड़नेकी भेद-नीतिको अधिकाधिक मात्रामें प्रयुक्त करती रही। इससे मुस्लिमोंके दंगे-फिसाद बढ़ते गये। काँग्रेसका स्वातंत्र्य-संग्राम तेज़ीपर पहुँचतेही हिंदु-मुस्लिमोंके बीच दंगे उग्र हो जाते थे। यह काकतालीय-न्याय नहीं बल्कि अँग्रेज सरकारकी भेदनीतिका परिणाम था। इस भेदनीतिका मुकाबिला करनेकी कोशिश काँग्रेसने बराबर जारी रखी थी। इसीलिए मद्रासमें १९२७ में काँग्रेसका जो अधिवेशन हुआ उसकी अध्यक्षता करनेके लिए डॉ. अन्सारीको चुना गया।

मद्रास काँग्रेसमें स्वाधीनता-प्रस्ताव

इस अधिवेशनमें सभापतिके नाते भाषण करते हुए डॉ. अन्सारीने ज़ाहिर किया कि, "जिस स्वराज्यके लिए हम कोशिश कर रहे हैं वह सिर्फ हिन्दुओं या मुस्लिमोंका नहीं बल्कि सभी नागरिकोंके न्याय्य अधि-कारोंकी सुरक्षा करनेवाला संयुक्त राज्य होगा।" इस उदात्त ध्येयका चित्र खींचकर व्यावहारिक बातोंका जिक्र करते हुए उन्होंने कहा, "हमें असह-योगने नहीं धोखा दिया, बल्कि हमींने असहयोगको धोखा दिया। हिन्दुस्थानके आज़ाद हो जानेपर सारा एशिया आज़ाद होगा, और तमाम दुनियामें अमन कायम होगा।"

बायें हाथसे दमनका पाप करते करते सरकार दायें हाथसे स्वराज्यदानके पुण्यकार्यका संकल्प कर रही थी। हिन्दुस्थानको किस सूरतका स्वराज्य दिया जाए इसकी छानबीन करनेके लिए उसने एक कमिशनकी नियुक्ति की। उसके अध्यक्ष श्री सायमन तथा सारे सदस्य अँग्रेज थे। इसलिए उसकी कार्रवाईका संपूर्ण बहिष्कार करनेका प्रस्ताव मद्रास काँग्रेसने मंज़ूर किया।

काँग्रेसके ध्येय–संकल्पके संबंधमें स्पष्टीकरण मद्रास काँग्रेसने एक प्रस्ताव-द्वारा किया। यह ज़ाहिर किया गया कि 'काँग्रेसका ध्येय संपूर्ण स्वातंत्र्य है।' यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि पहले एक बार उस अभिप्रायका प्रस्ताव गिर गया था। मद्रास अधिवेशनमें भी गांधीजीका इस प्रस्तावको

विरोध था। क्यों कि उनकी रायमें स्वातंत्र्य-प्राप्तिके लिए जरूरी ताकत आज देशमें नहीं है। नौजवानोंका विश्वास था कि इस प्रस्ताव तथा उसके प्रचारसे वैसी ताकत पैदा होगी। दो वर्ष योरपका दौरा करनेके बाद श्री. जवाहरलाल नेहरू जल्दीमें हिन्दुस्थान लौट आये थे। उन्होंने वह प्रस्ताव पेश किया। सांत्रमूर्ति, सत्यमूर्ति तथा शौकतअलीने उसका मिलकर समर्थन किया। प्रस्ताव सर्वसंमतिसे स्वीकृत हुआ।

स्वराज्यकी व्योरेवार योजना बनानेके लिए इस अधिवेशनमें श्री. मोतीलाल नेहरूकी अध्यक्षतामें एक समिति नियुक्त की गयी। समितिने जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया वह नेहरू रिपोर्ट कहलाया।

सायमन कमिशनका बहिष्कार तथा स्वातंत्र्यको ध्येय बनानेका प्रस्ताव इन दोनोंके परिणाम अगले साल साफ दिखाई दिये। "सायमन, पीछे जाओ" के नारे देशभरमें गूंज उठे हर एक शहरमें कमिशनको काले झंडे दिखाये गये। सरकारी अधिकारी इससे चिढ़ गये और उन्होंने स्थान-स्थानपर लोगोंपर बेरहमीसे लाठी-चार्ज किया। इलाहाबादमें जवाहरलाल ही नहीं बल्कि उनकी वृद्ध माताजीके सरपर भी पुलिसवालोंने डंडे लगाये। लाहोरमें लाला लाजपतराय पुलिसकी लाठीसे घायल होकर उसीमें स्वर्ग सिधारे! सारे देशने सायमन कमिशनका बड़ा बहिष्कार किया।

नागपुरका शस्त्रसत्याग्रह

नागपुरमें १९२७ में एक अनोखी लड़ाई छिड़ गयी। अहिंसाने हिंसाकी नुमाइश सजायी। अपना प्रजातंत्र राज्य कायम कर उसके सिपहसालार हथियारोंसे लैस होकर जुलूस निकालने लगे। शहरके इतवारी क्षेत्रके एक खंडहरमें सेनाविभाग खोला गया, जिसमें एक सौ नौजवान शामिल हुए। यह भी सोचा गया कि जनतंत्रका अपना सिक्का भी चलाया जाय। इस लोकतंत्रके सेनापति थे श्री. मंचरशा रुस्तमजी आवारी उनका संकल्प था कि "हम सशस्त्र होकर अहिंसाका आचरण करेंगे" उन्होंने शस्त्रोंका कानून तोड़ दिया। उनकी सलाह थी कि हरएकको अपने पास बम रखना चाहिए। गांधीजीद्वारा विरोध किये जानेपर भी यह आंदोलन मईसे जूनतक जारी रहा। जनरल आवारीको चार सालकी कड़ी कैदकी सज़ा दी गयी। उनके इस 'शस्त्र-सत्याग्रह' के उद्देश्य थे कि

शस्त्रोंका कानून रद किया जाए और बंगालके राजबंदियोंकी रिहाई की जाए।

बार्डोलीकी सफलता

इस सालमें देशका कदम स्वातंत्र्यके रास्तेपर आगे बढ़ानेकी दृष्टिसे उम्मीद बढ़ानेवाली सबसे महत्त्वपूर्ण घटना थी बार्डोलीका सफल अहिंसक संग्राम। १९२६ में लगानकी जाँच करके बंबई सरकारने बार्डोली तहसील के लगानमें तीस प्रतिशत वृद्धिकी घोषणा की। इस वृद्धिको रद करवानेकी कोशिश विधानसभा-सदस्योंने की, लेकिन वह बेकार साबित हुई। अंतमें वल्लभभाईने १९२८ में सत्याग्रहका अंतिम शस्त्र उठाया। उन्होंने किसानोंमें प्रचार किया कि वे बढ़ाया हुआ लगान देनेसे इनकार करें। १९२७ में बारिश हदसे ज्यादा हुई थी जिससे किसान हैरान थे। वे लगान दें भी कहाँसे? लेकिन परायी सरकार ठहरी, उसने खानातलाशी, कुर्की, नीलामका सिलसिला बराबर जारी रखा। इस कामके लिए बंबईसे कई पठानोंको भी बार्डोलीमें भेजा गया। बार्डोलीमें चारों ओर डंडेवाले पठान और लठैत पुलिसवालोंने आतंक मचानेमें कोई कसर नहीं उठा रखी। किसानोंकी भैंसें तक वे जब्त करके अपने साथ ले गये। लेकिन नीलाममें इन भैंसोंको खरीदे कौन? सरकारने दूरदूरसे कसाइयोंको बुलवाया और भैंसें उनके हाथों बेच डालीं।

सरकारका दमन जितना कड़ा था, लोगोंके असहयोगमें भी उतनी ही कड़ाई थी। सरकारी अधिकारियोंको दूध, साग-सब्जी और अनाज मिलना दुश्वार हो गया। धोबी और हजाम तकने उनका काम करनेसे इनकार किया। बहिष्कार इस कदर कड़ा था। तहसीलके ९० पटवारियोंमेंसे ६९ ने और ३५ कारिन्दोंमेंसे ११ने इस्तीफा दे दिया। ९ सदस्योंने भी विधानसभाकी सदस्यताका त्यागपत्र दे दिया।

बार्डोलीके इस संग्रामका काँग्रेस कार्यसमितिने समर्थन किया। देशभरमें १२ जूनको बार्डोली-दिन मनाया गया। अंतमें सरकारको दबना पड़ा। जाँचके लिए कमिशन नियुक्त करना सरकारने स्वीकार किया। लगान पुरानी दरोंके अनुसार ही वसूल करना स्वीकार किया गया। स्वातंत्र्य-प्राप्तिके एक साधनके रूपमें हिन्दुस्तानद्वारा अपनाये गये सत्याग्रहका

हथियार इस संग्राममें पूर्ण रूपसे सफल सिद्ध हुआ। दासबाबू कहा करते कि, "बार्डोलीको आधुनिक कुरुक्षेत्र कहना होगा।"

कलकत्ता काँग्रेस और नेहरू रिपोर्ट

सायमन कमिशनका बहिष्कार तथा बार्डोलीके किसानोंका संग्राम इन दोनोंमें काँग्रेसने पूरी सफलता पायी। इस वजहसे १९२८ की कलकत्ता काँग्रेसका वायुमंडल उमंग और चेतनासे परिपूर्ण था। स्वराज्यकी योजना सरकारके समक्ष पेश करने तथा देशकी राजनीतिक आकांक्षा साफ-साफ जाहिर करनेके लिए नेहरू रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। उसके आधारपर सरकारको अंतिम चेतावनी-पत्र भेजनेका दृढ़ निश्चय काँग्रेसियोंमें झलक रहा था। इस पृष्ठभूमिपर कलकत्ता काँग्रेस संपन्न हुई। उसमें लोगोंका उत्साह अपनी पराकाष्ठाको पहुँचा हुआ था।

इस अधिवेशनकी अध्यक्षता पं. मोतीलाल नेहरू जैसे मेधावी पुरुषार्थी तथा युयुत्सु स्वभावके नेताने की। लोगोंके उत्साहको अधिकतर बढ़ानेके लिए आवश्यक व्यक्तित्व उनका था। जिस रथमें उन्हें बिठाकर जुलूस निकाला गया उसमें ३६ घोड़े जोड़े गये थे। मोतीलालजीने अपने भाषणमें गरजकर कहा, "अपना यह पराक्रमी देश अबतक कुंभकर्णकी तरह गहरी नींदमें सोया हुआ था। लेकिन वह अब जाग उठा है। उसका ध्येय अब संपूर्ण स्वाधीनता है। उस स्वाधीनतामें कोई सीमा या शर्त नहीं होनी चाहिये। साम्राज्यसत्ता तथा उसके द्वारा होनेवाला शोषण जड़से उखड़ जाना चाहिए। इसके लिए सारे आपसी भेदभावोंको भूलकर, कंधेसे कंधा भिड़ाकर, लड़नेके लिए तैयार हो जाना हमारे लिए जरूरी है।

इस अधिवेशनमें काँग्रेसने अंग्रेज सरकारको चेतावनी दी। सबसे महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव उसीके संबंधमें था। "नेहरू रिपोर्टके अंतर्गत बनाया हुआ संविधानका मसविदा ब्रिटिश संसद्‌द्वारा ३१ दिसंबर १९२९ को या उससे पहले स्वीकार किया जाना चाहिए। वरना काँग्रेस सारे देशको कर-बंदी जैसे उपायोंसे अनत्याचारी असहयोगका आन्दोलन खड़ा करनेका आदेश देनेको मजबूर होगी। एक वर्षकी यह मियाद पूरी होनेतक संपूर्ण स्वातंत्र्यका प्रचार काँग्रेसद्वारा जारी रखा जाएगा।" इस अभिप्रायका

प्रस्ताव मंजूर हुआ। हिन्दुस्थानका ध्येय, उस ध्येयका स्वरूप, उसे हासिल करनेका रास्ता—ये तीनों बातें उस अधिवेशनमें स्पष्ट रूपसे निर्धारित हो गयीं। इस अधिवेशनके साथ साथ एकता-परिषद् तथा खादी-प्रदर्शन भी संपन्न हुए, जिनकी बदौलत लोगोंका जोश और भी बढ़ गया।

कलकत्ता अधिवेशनमें एक इससे अधिक संस्मरणीय और अनोखी घटना हुई। श्रमिकोंने विराट संख्यामें उपस्थित होकर निदर्शन किया। हिन्दुस्थानमें कलकारखानों और उसमें काम करनेवाले श्रमिकोंकी संख्या दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही थी। श्रमिकोंके मज़बूत संगठन कायम होते जा रहे थे। कलकत्ता श्रमिकोंका एक बड़ा केन्द्र बन गया था। श्रमिक भी किसानकी तरह अपढ़ होता है। लेकिन किसानकी तरह वह गाँव-गाँवमें बिखरा हुआ नहीं, बल्कि बड़े बड़े शहरोंमें केन्द्रित होता है। इसलिए वह आसानीसे संगठित हो सकता है। अपढ़ लेकिन संगठित श्रमिकोंकी राजनीतिक आकांक्षा क्या थी?

कलकत्तामें यह बात सबपर विदित हुई। पचास हज़ारसे अधिक श्रमिकोंने अपना जुलूस निकाला। वे अनुशासन और शांतिके साथ काँग्रेस-नगरकी ओर गये, और वहाँ उन्होंने काँग्रेसके तिरंगी झंडेकी वन्दना की। काँग्रेसके मंडपमें श्रमिकोंकी परिषद हुई, जिसकी कार्रवाई दो घंटे जारी रही। परिषदमें संपूर्ण स्वातंत्र्यका प्रस्ताव मंजूर किया गया। इधर जो नयी ताकतें देशमें पैदा हो रही थीं वे काँग्रेसमें समाविष्ट हो रही थीं। हालमें युवक-संघ कायम हुआ था, जो काँग्रेसके झंडेके नीचे आ गया। क्या श्रमिक, क्या किसान, क्या विद्यार्थी, सब वर्गोंका प्रातिनिधित्व काँग्रेसकी ओर ही आ रहा था। छोटे छोटे बहाव, नाले, और नदियाँ जिस प्रकार समुद्रमें ही विलीन हो जाती हैं,यह भी वैसा ही हो रहा था। समूचा राष्ट्र काँग्रेसके पीछे खड़ा था।

कलकत्ता काँग्रेसमें विशेष उत्साह निर्माण होनेका और ही एक कारण था—गांधीजीकी उपस्थिति। अहमदाबाद काँग्रेसके बाद वे कारावासमें बंद थे, अतः वे गया, दिल्ली (ज्यादा अधिवेशन) और कोकोनाड़ाके अधिवेशनोंमें उपस्थित न हो सके। बेलगाँव तथा कानपूरके अधिवेशनोंमें

वे उपस्थित थे और गौहत्तीके अधिवेशनमें उन्होंने काफी भाग भी लिया था। मद्रासके अधिवेशनमें उपस्थित रहकर भी उन्होंने उसमें अधिक भाग नहीं लिया। विषय-नियामक समितिकी सभाओंमें वे उपस्थित ही नहीं रहे। लेकिन वे कलकत्ता गये। काँग्रेसमें उपस्थित रहे इतना ही नहीं, उन्होंने बहुतसा हिस्सा भी लिया।

लाहौरका स्वातंत्र्य-लाभ

पौर्णिमाकी रात्रि समाप्त होतेसमय पश्चिम क्षितिजपर डूबता चंद्रबिंब, तो पूर्व क्षितिजपर उदीयमान सूर्य-बिम्ब दिखाई देता है, ठीक वैसा ही उज्ज्वल दृश्य लाहोर अधिवेशनमें अनगिनत राष्ट्रभक्तोंने देखा। राष्ट्रसभाके सिंहासनसे नीचे उतरकर पं. मोतीलाल नेहरूने अपने सुपुत्रको वहाँ बैठाया। औपनिवेशिक स्वराज्यवाले नेहरू वृत्तान्तको इतिहासमें जमा कर "जो बापने नहीं कर दिखलाया, सो बेटा कर दिखलाएगा" इस भविष्यवाणीका उच्चारण नेताकी दूरदृष्टिसे तथा पिताके वात्सल्यसे उन्होंने किया। पं० जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रसभाके अध्यक्षस्थानपर आरूढ़ हुए और उन्होंने संपूर्ण स्वातंत्र्यका ध्वज फहराया।

उस समय ऐसी गंभीर तथा बिकट परिस्थिति थी कि काँग्रेसको अपने अन्तिम साध्यका सुस्पष्ट उच्चार करना जरूरी था। सरकारद्वारा नियुक्त साइमन कमिशनके साथ केंद्रीय विधानसभाने भी असहयोग किया, तथा पूरे राष्ट्रने विरोधका उग्र प्रदर्शन किया। इधर सरकार दमनके शोलोंको पूरे देशपर उँडेल रही थी। मीरतके मज़दूर नेताओंका मुकद्दमा चल रहा था। लाहोरके क्रान्तिकारियोंका मुकद्दमा बड़ी शिथिलतासे रेंग रहा था। उसमें सरकारद्वारा किये गये क्रूर अत्याचारोंके निषेधार्थ सरदार भगतसिंग, जतींद्रनाथ दास आदि युवकोंने अनशन सत्याग्रह शुरू किया। कुछ दिनोंके पश्चात् जतींद्रनाथ चौसष्ट दिनोंके उपोषणसे कालकवलित हुए। उसी समय ब्रह्मके राजबंदी रेव्ह. विजयने भी एकसौ-चौसष्ट दिनोंका उपोषण कर प्राणत्याग किया। लगभग उसी समय बम्बई स्थित कपड़ेकी मिलोंके डेड़ लाख मज़दूरोंने हड़ताल जारी की तथा उसे छः महीनोंतक चलाया। बंगालके ज्यूट कारखानोंमेंसे ढाई लाख मज़दूरोंने अपनी हड़ताल सफल कर दिखायी।

विपक्षमें सरकार विधानसभामें 'ट्रेड डिस्प्यूट बिल' 'पब्लिक सेफ्टी बिल' आदि परेशान करनेवाले कानूनोंकी शृंखलाएँ बना रही थीं। अतः सरकारकी आँखें खोलनेके लिए भगतसिंगने असेंब्लीमें बम गिराया। राष्ट्रके संतापकी मात्रा कहाँतक बढ़ी हुई थी इसका यह एक उदाहरण, एक मापदंड ही था। इस संतापका मूर्त सक्रिय रूप था लाहोर–काँग्रेसका स्वतंत्रता प्रस्ताव।

लाहोरमें रावी नदीके वाम तटपर 'लाजपतराय नगरमें' खादीके प्रचंड पंडालमें दि. २९ दिसंबर १९२९ के दिन संध्याके ५ बजे, काँग्रेसका अधिवेशन पं. जवाहरलालजीकी अध्यक्षतामें आरंभ हुआ। स्वागताध्यक्ष डॉ. किचलूने स्वतंत्रताकी घोषणा कर यह निश्चय जाहिर किया कि 'चाहे चौरीचुरा हो या और कुछ, हम किसी भी हालतमें कदम पीछे नहीं हटाएँगे।' अनंतर मोतीलालजीने अपने सुपुत्रके लिए आसन रिक्त किया।

पं. जवाहरलालजीने अपने अध्यक्षीय अभिभाषणमें समाजवादी विचारोंकी घोषणा की। आपने स्पष्टतासे घोषित किया, "न मैं राजा-महाराजाओंको जानता हूँ, न व्यापारी-कारखानदारोंको पहचानता हूँ। हिन्दुस्थानसे मतलब है केवल किसानों तथा मजदूरोंसे। इनके उत्कर्षमें राष्ट्रका उत्कर्ष है। इसीलिए हमें संपूर्ण स्वायत्तता चाहिये। अँग्रेजोंके प्रभुत्व तथा साम्राज्यशाहीसे सर्वथैव मुक्त होना ही हमारी स्वायत्तताका मतलब है। किसी भी एक राष्ट्रका दूसरेपर या एक वर्गका दूसरे वर्गपर प्रभुत्व नष्ट होना चाहिये। अतः हमें समाजवादी मार्गका ही अवलम्ब करना चाहिये और हमारी प्रकृति तथा परिस्थितिके अनुसार हमें अपने साधन निर्माण करने चाहिये।

स्वतंत्रताका प्रस्ताव म. गांधीजीने प्रस्तुत किया। 'नेहरू रिपोर्ट' की कालमर्यादा समाप्त होनेके कारण उसमें की गयी माँग रद हो चुकी थी। इस प्रस्तावमें यह कहा गया था कि कौन्सिलोंका बहिष्कार कर, विधायक कार्यक्रमोंका आचरण कर तथा आवश्यकताके अनुसार करबंदीका अवलम्ब कर स्वातंत्र्य प्राप्त करना चाहिये। पं. मोतीलालजीने इस प्रस्तावको पुष्टि दी। उसे देते समय आपने कौन्सिलके कामकाजके सम्बन्धमें साफ कबूली दी कि, "उस कामसे हमारी आजादीका कदम एक इंच भी नहीं बढ़ पाया। इस प्रस्तावके लिए १४ उपसूचनाएँ आयी थीं लेकिन वे सबकी सब असम्मत होकर आजादीका मूल प्रस्ताव प्रचंड मताधिक्यसे सम्मत हुआ।

और रातको, बारह बजे, रावी नदीके किनारेपर, ११५ फूट ऊँचाईके स्तंभपर जवाहरलालजीने आज़ादीका ध्वज फहराया। उस समय 'वंदे मातरम्' का घोष दसों दिशाओंमें निनादित हुआ। उस ध्वज-स्तंभके शिरो-भागमें राष्ट्रध्वजके तीनों रंग दर्शानेवाली पंद्रह बिजलीकी बत्तियाँ दमकती थीं। उस रातको जवाहरलालजी अपने ही आनंदमें मस्त होकर नाचने लगे और अन्य स्वयंसेवकोंको भी नचाया। उन्होंने स्वयं आज़ादीका गीत गाया और स्वयंसेवकोंसे भी गवाया।

गांधीजीकी ग्यारह माँगें

इसके पश्चात् ता. २६ जनवरीका दिन 'स्वातंत्र्य-दिन' की हैसियतसे मनाया जाने लगा। उसके लिए इस कॉंग्रेसद्वारा आज़ादीकी एक विस्तृत प्रतिज्ञा भी बनायी गयी। इंग्लैंडकी गोलमेज परिषदसे दूर रहनेका निश्चय कॉंग्रेसने किया। उस समय इंग्लैंडमें श्रमिक दल सत्तारूढ़ था और पंत-प्रधान मि. मॅक्डोनॉल्ड तथा भारतमंत्री मि. वेजवुड बेन हिन्दुस्थानके बारेमें सहानुभूति रखते थे। फिर भी स्वातंत्र्यका दान करनेको कोई भी सिद्ध नहीं था।

षोडश कलाओंसे परिपूर्ण स्वातंत्र्य न सही, लेकिन स्वातंत्र्यका सारभूत अंश भी देनेके लिये सत्तारूढ़ पक्ष तैयार है या नहीं, इसे परखनेके लिए म. गांधीजीने व्हाइसरॉयकी ओर ११ माँगें भेजीं और उन्हें तुरंत पूरा करनेकी विनती की। माँगें इस प्रकार थीं— (१) मद्यपानपर संपूर्णतया बंदी। (२) विदेशी विनिमयकी दर १६ पेन्स हो। (३) खेतीका लगान कमसे कम ५० प्रतिशतसे कम हो और लगानकी बात विधान-सभाके नियंत्रणमें हो। (४) नमकका कर रद किया जाय। (५) सेनापर किया जानेवाला खर्च शुरूमें कमसेकम ५० प्रतिशतसे कम किया जाय। (६) वरिष्ठ पदधारियोंका वेतन आधा किया जाय। (७) परदेशी कपडेपर संरक्षक टैक्स लगाया जाय। (८) समुद्रकिनारेका व्यापार अपने अधीन रखनेके संबंधमें बिल सम्मत किया जाय। (९) सब राजनीतिक कैदियोंको मुक्त किया जाय (१०) खुफिया पुलिसका महकमा या तो रद्द किया जाय या लोकमतके नियंत्रणमें रखा जाय। (११) हथियार अपने पास रखनेकी अनुमति हो।

ये माँगें कितनी सीमित तथा न्यायानुकूल थी! लेकिन सरकारका इन्कार निश्चित था। काँग्रेसके प्रस्तावमें कृतिके प्राण डालनेके लिए गांधीजी कटिबद्ध हुए। उन्होंने नमक सत्याग्रह करनेका निर्धार किया और सत्याग्रह-शास्त्रके अनुसार अपनी योजनाके बारेमें पत्र वाइसरायकी ओर भेजा। "मेरा सत्याग्रह धर्मयुद्ध है और उसको मैं ईश्वरका नाम लेकरही चलाना चाहता हूँ।" इस प्रकारकी उदार घोषणाके बाद गांधीजीने लिखा—

"हिन्दुस्थानकी अंग्रेज सत्ताको मैं शाप मानता हूँ। उसने यहाँके करोड़ों लोगोंको अतिदीन बनाया है और राजनीतिक दृष्टिसे गुलाम बनाया है। इन लोगोंका उद्धार केवल आज़ादीसे ही होगा। आज़ादी प्राप्त होनेपर नमकका टैक्स रद्द होगा, शराब-बंदी होगी, लगान कम होगा तथा आजका महँगा शासन भी नष्ट होगा। फिलहाल आपको हिन्दी मनुष्यकी औसत आयके ७०० गुना वेतन मिलता है इस अतिव्ययके मारे समूचा राष्ट्र दरिद्रताकी खाईमें गिर पड़ा है। यह दुर्दशा आपको रोकनी चाहिये, अन्यथा नमकका सत्याग्रह अहिंसात्मक मार्गसे देशमें शुरू होगा। उससे ब्रिटिश राष्ट्रका मतपरिवर्तन होगा और भारत आज़ाद होगा—ऐसी मेरी उम्मीद है।"

इस पत्रका भी सरकारने उद्दंडताके साथ निषेधात्मक जवाब भेजा तब गांधीजीने सत्याग्रहकी रणभेरी पिटवा दी। सरकारने सरदार वल्लभभाईको गिरफ्तार कर गांधीजीकी चुनौतीको स्वीकृत किया।

दांडी-यात्रा

ता. १२ मार्च १९३० का क्रांतिकारी दिन निकल आया। गांधीजी अपने साबरमती आश्रमसे, सूर्योदयके मुहूर्तपर ७९ अनुयायिओंके साथ सत्याग्रहके अभिनव संग्रामके हेतु निकले। हजारों लोगोंने उन्हें बिदा दी। रावणवधके लिए अयोध्यासे प्रस्थान करनेवाले प्रभु रामचंद्रजीके प्रयाणकाही सबको स्मरण हुआ। साबरमतीसे दो सौ मीलकी दूरीपर दांडी नामक समुद्रकिनारेके गाँवकी ओर ये सत्याग्रही वीर बढ़े। वे वहाँ सरकारको कर दिये बगैर नमक बटोरकर अन्याय्य कानूनको तोड़नेवाले थे।

गांधीजीकी यह इतिहासप्रसिद्ध 'दांडीयात्रा' २४ दिनतक चली। जिस जिस गाँवमें गांधीजी पैर धरते थे वहाँसे अँग्रेजी सत्ताका निर्मूलन

होता था। पटवारीसे लेकर खासदारोंतक सब सरकारी पदोंका त्यागपत्र देकर गांधीजीकी सत्याग्रह सेनामें शामिल होते थे। अकेले सूरत जिलेमेंसे १६९ त्यागपत्र आये और सत्याग्रह-संग्राममें १,००० से अधिक स्वयं-सेवक दाखिल हुए। पं. मालवीय प्रभृति प्रतिनिधियोंने वरिष्ठ विधानसभाके त्यागपत्र पेश किये। समूच राष्ट्रमें उत्साहकी गगनचुंबी लहर उठी। भारतके लोगोंकी देशाभिमानी तथा प्रतिकारशील वृत्ति चोटीतक पहुँची।

दि. ६ अप्रैलका मंगल दिन। भगवान सूर्य नारायण क्षितिजपर आरूढ़ होकर विश्वको प्रकाशित कर रहे थे। उसी समय एक महात्मा भी समुद्र-किनारे पर स्थित हो सत्याग्रहका पाठ सब दुनियाको दे रहा था। दांडीमें गांधीजीने समुद्रकिनारेका नमक अपने हाथसे उठाया और विदेशी सरकार-के अन्यायी कानूनको पैरोंके नीचे कुचला।

कितना प्रशांत प्रतिकार! कितना उदात्त संग्राम! पूरा देश सुलग उठा। गाँवगाँवमें सत्याग्रहका दावानल धगधगने लगा। नमकका सत्याग्रह, जंगलका सत्याग्रह, आक्षित पुस्तकोंका सत्याग्रह---इस प्रकार नाना मुखोंसे सत्याग्रहकी आग चारों ओर प्रज्वलित हुई। मईकी चार तारीखको सरकारने गांधीजीको गिरफ्तार कर येरवडा जेलमें बंद रखा। फिर भी सत्याग्रहकी मुहीम अणुमात्र कम नहीं हुई। धारासणा, शिरोडे, वडाला आदि स्थानोंकी नमककी क्यारियोंपर सैंकडों सत्याग्रही टूट पड़े और पुलिसकी क्रूर लाठियोंसे घायल हुए। चिरनेर, बिळाशी, बागलाण, बोर-सद, सोलापूर आदि गाँव तो रणक्षेत्र ही बने। ७५,००० लोगोंको सरकारसे कैद किये जानेपर सत्याग्रहका आंदोलन कम नहीं हुआ तब सरकारकी शस्त्रशक्तिको सत्याग्रहकी दैवी शक्तिकी शरण लेनी पड़ी।

गांधी-अर्विन-समझौता

वाइसराय लार्ड अर्विनने ता. २५ जनवरी १९३१ को १९ सत्याग्रहि-योंके समेत गांधीजीको बिना शर्त छोड़ दिया। और ता.४मार्चकी रातको दो बजे गांधी-अर्विन समझौता हुआ। उससे पहले सौ वर्षोंके गुलामीके ज़मानेमें हिन्दुस्थानकी रिआयाके प्रतिनिधिके साथ समानताके आधारपर इकरार या समझौता कभी नहीं किया गया था। इसलिए इस समझौतेसे काँग्रेसकी शानमें चार चाँद लग गये, देशका सिर ऊँचा उठ गया।

सरकारने गरीबोंको अपनी जरूरतके मुताबिक नमक इकट्ठा करनेपर करकी मुआफी दी, और गांधीजीको वर्तुल परिषदमें आज़ादीका सवाल पेश करनेकी अनुमति दी। इससे सत्याग्रहका अभियान रुक गया और उसके सैनिक जेलखानोंसे रिहा हुए। सिर्फ यही हुआ। बिलकुल छोटीसी मात्रामें सफलता पायी गयी। सत्याग्रहकी ठोस सफलता बस यही थी कि सरकार दब गयी। लेकिन छोटे-मोटे अन्याय पहलेकी तरह बने रहे। भगतसिंह आदि क्रांतिकारियोंकी रिहाई नहीं हुई, यह बात लोगोंके दिलोंमें तप्त शल्यकी तरह चुभ गयी।

सायमन कमिशनके बहिष्कारके समय पुलिस अधिकारीकी लाठीके आघातसे लाला लाजपतरायका देहावसान हुआ था। उसका बदला लेनेके लिए भगतसिंग, राजगुरु और सुखदेव इन तीन नौजवानोंने १२ सितंबर १९२८ को सैंदर्स्ट नामक पुलिस अधिकारीको मार डाला। उस सिलसिलेमें उन्हें फाँसी दी गयी थी। उस सज़ाको घटानेके लिए गांधीजीने व्हाइसरॉयसे अनुरोध किया था। लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। उन तीनों नौजवानोंको लाहोरमें २३ मार्चको फाँसीपर चढ़ा दिया गया।

कराची अधिवेशनमें मूलभूत अधिकारोंका घोषणा-पत्र

समझौतेके लिए खुशी, लेकिन इस फाँसीके लिए दुःख—इन संमिश्र भावोंको हृदयमें लेकर कराचीमें मार्च महीनेमें कॉंग्रेसका अधिवेशन हुआ। गरमीके दिन थे। अधिवेशनके लिए मंडपकी जरूरत नहीं थी। लाखों लोग आकाशका मंडप और पृथ्वीका आसन बनाकर बैठे हुए थे। २५ मार्चको खास गांधीजीके भाषणके लिए एक आम सभा हुई। उसमें प्रवेश पानेके लिए चवन्नीवाले दर्शक टिकट रखे गये थे, जिससे कॉंग्रेसको दस हजारकी आमदनी हुई।

कराची कॉंग्रेसकी सदारत सरदार वल्लभभाई पटेलको सुपूर्द की गयी थी। उन्होंने बिलकुल छोटा भाषण दिया। यह कहकर कि "सत्य-अहिंसाके मंत्रके कारण लोगोंके अंदर आत्मशक्ति तथा आत्मप्रतिष्ठाकी चेतना पैदा हुई।" उन्होंने विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर ज़ोर देनेके लिए सबसे अनुरोध किया।

इस अधिवेशनके सामने सबसे ज़रूरी काम था: गांधी–अर्विन समझौतेको मान्यता प्रदान करना। इस संबंधमें स्वीकार किये गये प्रस्तावमें कहा गया है कि, "कॉंग्रेसका ध्येय पूर्ण स्वातंत्र्य ही है। कॉंग्रेसके प्रातिनिधि वर्तुल-परिषदमें इसी ध्येयकी प्राप्तिके लिए प्रयत्नशील रहेंगे।" इसके अतिरिक्त सांप्रदायिक झगड़े, शांततापूर्ण निरोधन, खादी-प्रचार, प्रवासी भारतीय आदि विषयोंपर कई प्रस्ताव मंजूर हुए। लेकिन अधिवेशनका विशेष महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव वह था जिसमें नागरिकोंके अधिकारों एवं कर्तव्योंकी व्याख्या की गयी थी। इस प्रस्तावमें नयी ताकतका भान तथा नये तत्त्वोंका स्वीकार था।

इस प्रस्तावद्वारा देशकी आर्थिक नीतिपर रोशनी डाली गयी। उसमें श्रमिकोंकी उन्नतिपर विशेष ध्यान दिया गया है। उसकी कुछ प्रधान बातें निम्न प्रकार हैं: (१) आर्थिक जीवन-प्रबंधमें न्यायके सिद्धान्तोंको इस प्रकार कार्यान्वित किया जाए जिससे श्रमिक-वर्ग सुव्यवस्थित जिन्दगी बिता सके। (२) हर एक श्रमिकके हितकी रक्षाकी ज़िम्मेदारी सरकार उठाए। (३) लगान और पट्टेकी प्रणालीमें सुधार किया जाए। (५) सैनिक खर्च घटाकर आधा किया जाए। (५) तंत्र-विशेषज्ञोंको छोड़ शेष नौकरियोंके लिए माहवार वेतन पाँचसौ रु. से ज़्यादा न रहे। (६) नमकपर कर न रहे। (७) किसानोंको ऋण-मुक्त किया जाए। (८) साहूकारीपर प्रतिबंध रहे। (९) सभी नागरिकोंको सैनिक शिक्षा दी जाए और उनका राष्ट्रीय सुरक्षादल खड़ा किया जाए। (१०) बालिग मताधिकार रहे। (११) सबको भाषण-स्वातंत्र्य, मत-स्वातंत्र्य और संगठन-स्वातंत्र्य रहे। (१२) कानून, नौकरियों और सार्वजनिक सुविधाओंमें कोई पक्षपात न रहे। (१३) मज़हबके बारेमें सरकार तटस्थ रहे। (१४) प्राथमिक शिक्षा लाजिमी और निःशुल्क रहे। (१५) फाँसीकी सज़ा रद की जाए। (१६) संपूर्ण नशाबंदी कार्यान्वित की जाए। (१७) रेल, जहाज़ आदि आम यातायातके साधन, खनिज संपत्ति जैसे प्रधान उद्योग सरकारी नियंत्रण या स्वामित्वके अंतर्गत रहें।

कॉंग्रेसकी भावी नीतिका यह घोषणापत्र था। उसमें सारे नागरिकोंको सर्वांगीण स्वातंत्र्यका आश्वासन था। किसानों और श्रमिकोंको विशेष

सुरक्षाका आश्वासन था। इस नीतिपर विशेष रूपसे सोच-विचार करनेके लिए एक समिति नियुक्त की गयी। राष्ट्रीय झंडेमें कौनसे रंग रहें इसपर विचार करनेके लिए भी एक समिति नियुक्त हुई।

गांधी–अर्विन समझौतेके मुताबिक गांधीजी २९ अगस्त १९३१ को वर्तुल परिषदमें संमिलित होनेके लिए इंग्लैंड रवाना हुए। १२ सितंबरको वे लंदन पहुँचे।परिषदमें उन्होंने हिन्दुस्थानकी स्वातंत्र्यकी माँग साफ तौरसे पेश की। उसे पेश करते हुए उन्होंने काँग्रेसका देशव्यापी स्वरूप बतलाया। अपनेको काँग्रेसका एक विनीत प्रतिनिधि बतलाकर उन्होंने यह कहते हुए अँग्रेज राजनीति-विशारदोंको सचेत करना चाहा कि, "गुलाम हिन्दुस्थान इंग्लैंडके लिए एक भारी भरकम बोझके रूपमें रहेगा। लेकिन समानताके आधारपर हिन्दुस्थानको आज़ाद बनाया जाए तो हिन्दुस्थान सारी दुनियाकी भलाईके लिए इंग्लैंडसे खुशीके साथ सहयोग करेगा, इतनाही नहीं, इंग्लैंडका पक्ष लेकर विश्वयुद्धके अखाड़ेमें कूद पड़ेगा।"

लेकिन परिषदमें इकट्ठे हुए राजनीतिज्ञोंने स्वार्थविवश होकर गांधीजीके परामर्शको ठुकरा दिया। सांप्रदायिकताके सवालके साथ आज़ादीका सवाल उलझाया गया। अंतमें गांधीजीने चेतावनी दी कि, "हिन्दुस्थानमें सिर्फ एक ही नहीं बल्कि हजारों थर्मापिली जैसी लड़ाइयाँ लड़ी गयी हैं,और जरूरत हो तो आगे भी हिन्दुस्थान अहिंसात्मक युद्ध लड़ सकेगा।" उन्होंने इंग्लैंडके प्रधानमंत्रीको सचेत करनेके लिए कह दिया कि, "आइंदा आपके और हमारे रास्ते अलग अलग हो जानेवाले हैं।" ५ दिसंबर १९३१ को हिन्दुस्थान लौट आनेके लिए वे इंग्लैंडसे रवाना हुए। उससे पहले एक आम सभामें भाषण करते हुए उन्होंने इंग्लैंडके लोगोंको हिन्दुस्थानके लोगोंकी राजनैतिक कामनाका परिचय दिलाया था।

उन्होंने कहा था "मुझे फिर एक बार हिन्दुस्थानके करोड़ों लोगोंको अनत्याचार और क़ानून की सविनय अवज्ञाका संदेश देना पड़ेगा। फिर कितने ही हवाई जहाज़ हिन्दुस्थानकी हवामें मँडराते रहे, या कितनी ही ज़िरह–बख्तरवाली मोटरें हिन्दुस्थानकी ज़मीनपर घूमती रहें। आप लोग नहीं जानते कि इन डरावनी चीज़ोंका कोई असर हिन्दुस्थानियों-पर अब नहीं होता है। चारों तरफ गोलियोंकी बौछार होती रहे तो भी

खुशीके साथ नाचते रहते हैं, मानो पटाखे बज रहे हों। देशकी आज़ादीके लिए कुर्बानी करनेकी नसीहत उन्हें हम देते रहे हैं।"

दो बेकायदा अधिवेशन

सरकारने भी चढ़ाईकी नीति अपनायी। गांधीजीसे लेकर प्रायः सभी कॉंग्रेसी नेताओंको कैद किया गया। कॉंग्रेससे लेकर सभी राष्ट्रीय संस्थाओंको गैरकानूनी घोषित किया गया। १९३२ के अप्रैलमें दिल्लीमें कॉंग्रेसका जो गैरकानूनी अधिवेशन हुआ उससे क्षणभरके लिए बिजलीकी तरह सभीकी आँखें चौंधिया गईं। उसके नामजद सभापति डॉ. सेनगुप्ता पकड़े गये। ३१ मार्च १९३३ को कलकत्तामें गैरकानूनी अधिवेशन हुआ। इसके नामजद सभापति पं. मालवीयको सरकारने पहले ही गिरफ्तार किया। कलकत्ताकी ओर जानेवाले एक हज़ार प्रतिनिधियोंको पकड़ा गया। फिर भी अधिवेशन संपन्न हुआ, और उसमें संपूर्ण स्वातंत्र्यके ध्येय-संकल्पका समर्थन किया गया। तथा यह भी घोषित किया गया कि उस ध्येयकी प्राप्तिका साधन कानून-अवज्ञा आंदोलन ही है।

येरवड़ा समझौता

सितंबर १९३२ में गांधीजी येरवड़ाके जेलखानेमें थे। अँग्रेज़ सरकारने कम्यूनल-अवार्ड घोषित किया जिसके अंदर अछूत मानी हुई जातियोंके लिए पृथक् निर्वाचन-क्षेत्रकी प्रणाली लागू की गयी। 'हिंदु जातिके इस प्रस्तावित विभाजनका मैं मरते दमतक विरोध करूँगा' यह चेतावनी गांधीजी वर्तुल परिषदमें दे चुके थे। लेकिन सरकारने उसपर ध्यान नहीं दिया था। १८ अगस्तको इंग्लैंडके प्रधान मंत्रीने कम्यूनल अवार्डकी घोषणाके द्वारा हरिजनोंको पृथक् निर्वाचन-क्षेत्र दिलाकर गांधीजीकी सत्य-निष्ठाको मानो चुनौती दी। घोषणाको पढ़तेही गांधीजीने इंग्लैंडके प्रधान मंत्रीको तारद्वारा सूचित किया कि, "२० सितंबरसे मैं प्राणान्तिक उपोषण करने जा रहा हूँ। अछूत माने हुए भाइयोंको संयुक्त निर्वाचन-क्षेत्रमें रखा जाए तो ही मैं उपोषण तोड़ दूँगा।" सरकारने उनकी बात माननेसे इनकार किया। और गांधीजीका उपोषण ता. २० से शुरू हुआ। पाँच ही दिनमें उसका नतीजा निकला। डॉ. आंबेडकरने सवर्ण और अछूत जाति-

योंके संयुक्त निर्वाचन-क्षेत्रको :अपनी मान्यता दी,. और सुप्रसिद्ध येरवड़ा समझौता हुआ। उसे ब्रिटिश प्रधानमंत्रीने शीघ्रतासे अनुमति दी। गांधीजीने ता. २६ को अपना उपोषण—यज्ञ समाप्त किया।

बंबईके अधिवेशनमें गांधीजीकी निवृत्ति

पूनामें १२ जुलाई १९३३ को कॉंग्रेसके अस्थायी अध्यक्ष लोकनायक बापूजी अणेकी अध्यक्षतामें कॉंग्रेसियोंकी एक परिषद् हुई। उस समय गांधीजी रिहा कर दिये गये थे। वे भी परिषदमें सम्मिलित थे। व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन जारी करना उस परिषदमें तय हुआ। कुछ दिन बाद सभी राजबंदियोंकी रिहाई हुई। और बंबईमें खुली राजनैतिक आबोहवामें कॉंग्रेसका अधिवेशन हुआ।

सबसे पहला कॉंग्रेस अधिवेशन बंबईमें ही हुआ था, और बंबईमें कई बार बड़े महत्त्वपूर्ण अधिवेशन हुए थे। बंबईमें २६ अक्तूबर १९३४ को श्री राजेंद्रप्रसादकी अध्यक्षतामें अधिवेशन हुआ। इस समय यह ज़ाहिर हुआ कि गांधीजी राजनीतिसे निवृत्त होकर विधायक कार्यपर अपना पूरा ध्यान केंद्रित करेंगे। कॉंग्रेसियोंने इसका यही अभिप्राय समझा कि भविष्यमें होनेवाले सत्याग्रहके संग्रामके लिए जनताका सुदृढ़ संगठन बनानेके हेतुसे गांधीजी तपस्या करने जा रहे हैं।

कॉंग्रेसके सभापतिके नाते श्री. राजेंद्रप्रसादने देशको दिलासा और उम्मीदका संदेश सुनाया। उन्होंने कहा, "कॉंग्रेस मेहनतकी रोटी कमानेवाली जनताकी प्रतिनिधि है। उसका ध्येय है स्वातंत्र्य, और उस स्वातंत्र्यकी प्राप्तिका साधन है सत्याग्रह। हो सकता है कि हम एक-दो बार हारेंगे, लेकिन अंतमें जीत हमारीही होगी। सत्याग्रह हारको नहीं जानता।"

कॉंग्रेसके प्रतिनिधियोंकी संख्या नागपुर अधिवेशनमें ६००० निर्धारित की गयी थी। बंबई अधिवेशनमें वह २००० तक सीमित की गयी। यह भी निश्चय हुआ कि उनमेंसे ५११ प्रतिनिधि शहरोंसे चुने जाएँ और शेष देहाती क्षेत्रोंसे। इसका मतलब यही हुआ कि कॉंग्रेसने गाँवोंकी ओर रुख कर दिया।

लखनऊमें समाजवादकी घोषणा

काँग्रेसका ४९ वाँ अधिवेशन लखनऊमें १९३६ के अप्रैलमें पं. जवाहरलाल नेहरूकी अध्यक्षतामें हुआ। उनके पिताकी यादमें काँग्रेसके मंडपको मोती-नगर नाम दिया गया। दरवाज़े तथा मेहरावोंपर दादाभाई, तिलक, गांधी आदिकी तस्वीरोंके अलावा देहातोंकी जिंदगीको अंकित करनेवाले चित्र भी थे।

इस अधिवेशनके सामने दो मुख्य सवाल थे। वर्तुल परिषदके मंथनमेंसे निर्मित प्रान्तीय स्वराज्यके लिए चुनाव होने जा रहे थे, उनके बारेमें काँग्रेसकी नीतिका निर्धारण करना था। और किसानोंकी उन्नतिका कार्यक्रम बनाना था। श्री. जवाहरलालने अध्यक्षके नाते भाषण करते हुए इन दोनों सवालोंका ज़िक्र अपने भाषणमें किया था। काँग्रेसकी वैचारिक भूमिकाको उनसे प्राप्त महत्त्वपूर्ण देन थी आंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण और समाजवादी तत्त्वज्ञान।

पहले पहल उन्होंने ही हिन्दुस्थानकी आज़ादीका सवाल आंतरराष्ट्रीय परिस्थितिकी पृष्ठभूमिपर प्रस्तुत किया। और इस सिद्धान्तका विस्तारसे प्रतिपादन किया कि हिन्दुस्थानकी गरीबीको मिटानेके लिए आज़ादीकी जितनी ज़रूरत है उतनी ही समाजवादकी है।

अपने भाषणमें उन्होंने कहा, "हिन्दुस्थानकी आज़ादीकी लड़ाई सारे संसारके जागरण और आंदोलनका एक अंश है। मैं समाजवादको एक अर्थशास्त्रीय सिद्धान्त मात्र नहीं मानता, बल्कि उसे समग्र जीवनकी निष्ठा समझता हूँ। मैंने बुद्धिपूर्वक और भावुकतासे भी उस निष्ठाको स्वीकार किया है। मैं हिन्दुस्थानकी आज़ादीके लिए इस लिए जूझता हूँ कि मेरी देशप्रीति इस बातको बरदाश्त नहीं कर सकती कि इस देशपर विदेशी सल्तनत बनी रहे। लेकिन इससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि राजनैतिक स्वातंत्र्यके ही द्वारा सामाजिक तथा आर्थिक क्रांतिकी प्रारंभिक तैयारियाँ की जा सकती हैं। मैं चाहता हूँ कि काँग्रेस एक समाजवादी संस्था बने, और वह नयी संस्कृतिके निर्माणके लिए जूझनेवाली दुनियाकी दूसरी ताकतोंसे सहयोग करे। हाँ, मैं अवश्य मानता हूँ कि हरएक देशमें समाजवादकी सूरत वहाँकी परिस्थितिके अनुसार भिन्न भिन्न हो सकती है।

उन्होंने समाजवाद और गांधीवादके बीचकी खाईको पाट देनेवाले पुलका-सा काम किया।

लखनौ कॉंग्रेसमें जो प्रस्ताव मंजूर हुए उनमें किसानोंकी उन्नतिका कार्यक्रम बनाया गया, और प्रांतिक विधान-सभाओंके चुनावोंमें हिस्सा लेनेका आदेश दिया गया। जवाहरलालजीने समाजवादी कार्यक्रमको बढ़ावा देनेके हेतुसे तीन समाजवादी नेताओंको—आचार्य नरेंद्रदेव, जयप्रकाश नारायण और अच्युत पटवर्धन—कार्यसमितिमें चुन लिया।

संयोगसे उसी वर्ष कॉंग्रेसका अगला अधिवेशन उसी नेताकी अध्यक्षतामें हुआ। जवाहरलालजीकी अध्यक्षतामें कॉंग्रेसका ५० वाँ अधिवेशन महाराष्ट्रके पूर्व खानदेश जिलेके फैजपुर नामक छोटेसे गाँवमें संपन्न हुआ। महाराष्ट्रमें दूसरी बार अधिवेशन हो रहा था। देहातमें अधिवेशन होनेका यह पहला अवसर था। महाराष्ट्रमें लोगोंका उत्साह उमड़ आया था। इस अधिवेशनको कौन्सिल-प्रवेशवादी, विधायक कार्यमें मग्न गांधीवादी तथा समताके विचारसे प्रभावित समाजवादी इन तीनोंका सहयोग प्राप्त होनेसे उसका विशेष महत्त्व रहा। १९०६ की कलकत्ता कॉंग्रेसमें स्वराज्यकी निःसंदिग्ध रूपमें घोषणा की गयी; १९०७ के सूरत अधिवेशनमें नरम दलके हाथोंसे गरम दलने कॉंग्रेसकी बागडोर अपने हाथोंमें लेनेकी कोशिश की; १९१६ की लखनौ कॉंग्रेसमें मुस्लिम लीगसे समझौता हो जानेके कारण सरकारका मुकाबिला करनेके लिए एकता कायम हुई; १९२० के नागपुर कॉंग्रेसमें असहयोगका अनोखा शस्त्र उठाकर स्वतंत्रताकी लड़ाईके मैदानकी ओर कदम बढ़ाये जाने लगे; १९२९ के लाहौर कॉंग्रेसमें संपूर्ण स्वतंत्रताका झंडा ऊँचा उठाया गया; १९३६ का फैजपुर कॉंग्रेसका अधिवेशन भी बड़ा महत्त्वपूर्ण था।

इस अधिवेशनके मंडपको तिलक-नगर नाम दिया गया था। सभामंच-पर लोकमान्य तिलकका बृहदाकार चित्र रखा हुआ था। एक अन्य स्थानपर उनकी एक प्रतिमा भी रखी हुई थी। मुख्य दरवाजेको छत्रपति शिवाजीका नाम दिया गया था और वहाँ शिवाजीकी अर्धप्रतिमा रखी हुई थी। गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोरके शांतिनिकेतनके सुप्रसिद्ध कलाकार श्री० नंदलाल बोसकी कलाकी करामात चारों ओर झलक रही थी। शामियाना

बांसूसे बनाया हुआ था और उसपर बांसूसेही मीनार उठाये गये थे। दरवाजेपर देहाती ज़िंदगीके चित्र अंकित किये गये थे। सादगीमें सुंदरता लायी गयी थी।

हालाँकि फैजपुर काँग्रेसने निर्वाचनोंमें सामना करनेका निश्चय किया था, फिर भी सरकारका और उसके द्वारा थोपे गये संविधानका डटकर विरोध करनेका संकल्प बना हुआ था। जवाहरलालजीने अध्यक्षके नाते अपने भाषणमें साफ साफ कह दिया कि, "ब्रिटिश साम्राज्यशाहीसे किसी प्रकार सहयोग करनेके लिए काँग्रेस विधान-सभाओंमें जाना बिलकुल ही नहीं चाहती। हम इस असल बातको न भूलें कि हमारी स्वतंत्रताकी लड़ाई जारी है। हम सरकारका मुकाबिला करने तथा उसके थोपे हुए नये संविधानसंबंधी कानूनको मिटानेके लिए प्रयत्नशील है।"

इस अधिवेशनकी कई संस्मरणीय विशेषताएँ थीं। वह देहातमें संपन्न हुआ। सैकडों किसानोंका जत्था पैदल आया, और काँग्रेसके मंडपमें उन्होंने अपनी परिषद् की। कई काँग्रेसियोंने साथमें अखंड-ज्योति लेते हुए बम्बईसे फैजपुरतककी पदयात्रा की। कॉम्रेड् मानवेंद्रनाथ रॉय तथा सीमांत-गाधी अब्दुल गफार खाँ जेलसे रिहा होनेपर अधिवेशनमें उपस्थित रहे। खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनी बड़ी शानदार और आकर्षक रही। काँग्रेसकी सदारतका ताज़ जवाहरलालजीको तीन बार पहनाया गया। उनके व्यक्तिमत्त्वकी बदौलत अधिवेशनकी शानमें चार चाँद लग गये। उनकी इस कदर इज्ज़त की गयी कि समारोप करते हुए उन्होंने कृतज्ञतासे कहा, "आपने मुझे आसमानपर चढ़ा दिया है।"

अधिवेशनकी कार्रवाई दो दिन जारी रही और उसमें इक्कीस प्रस्ताव मंजूर हुए। नये सुधारोंको मिटानेके लिए निर्वाचनोंका सामना करना तय हुआ। लेकिन अधिकार-पदोंके स्वीकारके सवालका निर्णय भविष्यके लिए छोड़ दिया गया। अंतमें आभार-प्रदर्शन करते हुए लोकनायक अणेने श्री. जवाहरलालजीके संबंधमें कहा, "स्वतंत्र हिन्दुस्थानके लोकतंत्र राज्यके पहले राष्ट्रपति जवाहरलालजी होंगे।"

१९३७ में काँग्रेसका अधिवेशन नहीं हुआ। लेकिन काँग्रेसके लिए वह वर्ष कठिनाइयोंसे भरा हुआ था। पचास वर्षोंकी उसकी जनसेवाकी

सफलता ही इस वर्ष मूर्त हो उठी। प्रांतीय चुनावमें जनताने काँग्रेसको अपनी ओरसे पूर्ण सहयोग दिया। काँग्रेसद्वारा चुनावका जो घोषणापत्र निकाला गया उसमें आज़ादीका ध्येय घोषित था। तथा सरकारका १९३५ का कानून विफल करनेका निर्धार भी था। उस कानूनके निषेधार्थ ता. १ अप्रैल १९३७ को पूरे देशमें हड़ताल मनायी गयी। उसी प्रकार इस घोषणापत्रमें यह भी कहा गया था कि हिन्दी जनताके हितमें, समाजवादी शासनविधान बनानेके लिए प्रौढ़ मताधिकार द्वारा निर्वाचित की गयी संविधान–परिषद्की स्थापना होनी चाहिए।

निर्वाचन घोषणापत्रमें नीचे लिखी बातें महत्त्वपूर्ण थीं–(१) सांप्रदायिक निर्णयका निःसंदिग्ध निषेध (२) किसानोंका लगान, भुगतान तथा कर्ज कम करना। (३) मजदूरोंकी सुविधाका ख्याल करना। (४) राजबंदियोंकी मुक्तता करना। (५) अत्याचारी कानून गाड़ना। (६) सबको नागरिक स्वतंत्रताके अधिकार प्रदान करना।

इस घोषणापत्रकी पताका कंधेपर लेकर जवाहरलाल, राजेंद्रबाबू प्रभृति राष्ट्रनेताओंने पूरे राष्ट्रमें वायुवेगसे भ्रमण किया और उसका फल चुनावके निर्णयके समय दिखाई दिया। चुनावका निर्णय १९३७ की फरवरीमें ज़ाहिर हुआ। नये विधानके अनुसार करीब करीब ३॥ करोड़ लोगोंको मताधिकार प्राप्त हुआ था। उनमेंसे ५४ प्रतिशत लोगोंने अपना अधिकार साबित किया। पूरे भारतमें १४८५ उम्मीदवार प्रांतिक विधिमंडलपर निर्वाचित हुए। उनमेंसे ७११ काँग्रेसके थे। बंगाल, पंजाब तथा सिंध इन तीनों मुस्लिम प्रांतोंको छोड़कर अन्य प्रांतोंमें काँग्रेसने आशातीत यश प्राप्त किया। अगला काम था मंत्रिमंडलोंकी स्थापना करना। लेकिन इनको लोकहितका कार्य करनेकी पूरी गुंजाइश प्राप्त हो इसलिए काँग्रेसने सरकारकी ओर सन १९३७ के मार्च महीनेमें यह माँग की कि "मंत्रिमंडलके बाकायदा कार्यक्रममें गव्हर्नर हस्तक्षेप न करे, तथा उसकी सलाह का अनादर न करें।"

इस प्रकारका अभिवचन देनेमें सरकारने तीन महीनोंकी अवधि बितायी और अस्थायी मंत्रिमंडलका खोखला शासन शुरू हुआ। लेकिन अंतमें जनताधिष्ठित काँग्रेसके साथ सरकारको सहयोग करना पड़ा तथा काँग्रेसकी

शर्तको मानना पड़ा। फलस्वरूप १७ जुलाईसे सात प्रांतोंमें काँग्रेसी शासन शुरू हुआ।

मंत्रियोंके सिरपर गांधी टोपी तथा सरकारी कचहरियोंपर तिरंगे झंडे लहराने लगे। विधिमंडलमें 'वंदे मातरम्' के स्वर निनादित होने लगे। काँग्रेसके पूर्व संकल्पके अनुसार शराबबंदी शुरू हुई, अस्पृश्यता-निवारणके कार्यको वेग मिला, खादी–प्रचार शुरू हुआ। शिक्षामें मूलोद्योग योजना अमलमें आयी। किसानोंको ज़मीनके अधिकार देनेके संबंधमें कारवाई शुरू हुई। साहूकारोंका सूद तथा ज़मीनदारोंका भुगतान सीमित किया गया। किसानोंको कर्जमुक्त करनेके लिए 'समझौता मंडल' स्थापित किये गये और मजदूरोंके बखेड़े हल करनेके लिए कानून बनाये गये। गुजरातमें जब्त की हुई ज़मीनें वापिस की गयीं तथा वृत्तपत्रोंकी ज़मानत की रकमें लौटायी गयीं। एक ही हुक्मसे २२७ संस्थाओंकी बंदी उठायी गयी और सैंकड़ों पुस्तकोंको तत्काल बंधमुक्त किया गया। राष्ट्रीय विद्यापीठोंकी उपाधियाँ सरकारद्वारा मान्य की गयीं। गांधी–जयंती और तिलक-पुण्यातिथिकी छुट्टियाँ मंजूर हुई। ग्राममंडलोंको अधिक अधिकार प्राप्त हुए।

कानूनके मुताबिक मंत्रियोंको माहवार ५,००० रु. तनख्वाह मंजूर थी, तो भी कराची काँग्रेसके आदेशानुसार उन्होंने केवल५००रु. ही वेतन लिया। राजबंदियों तथा स्थानबद्धोंको भी रिहा कर दिया गया।

राजबंदियोंकी मुक्तिका प्रश्न जितना आत्मीयताका उतनाही अभिमानका था, और जितना जल्दीका उतना अड़चनोंका। यह प्रश्न सुलझानेके लिए काँग्रेसने अपनी सारी शक्ति लगायी, क्योंकि राजबंदियोंकी अवस्थाही बड़ी असह्य थी। अकेले बंगाल प्रांतमें सन १९३६ के जुलाईमें २,००० से अधिक राजनीतिक कार्यकर्ता स्थानबद्ध किये गये थे। उनपर इतने अमानुष अत्याचार किये जाते थे कि तीन महीनोंमें तीन राजबंदियोंने आत्महत्या की। ढाका, नारायणगंज आदि विभागोंमें तो १२ से ३० वर्षकी अवस्थावाले किसी भी नागरिकको सूर्योदयसे लेकर सूर्यास्ततक, घरके बाहर जानेकी एक सालतक बंदी की गयी थी। और यह हुक्म तोड़नेवालेको ६ महीनोंकी सज़ा दी जाती थी।

वंगभूमिके कंठमणि सुभाषबाबूको भी सरकारने बिना न्यायालयीन जाँच किये ही स्थानबद्ध कर रखा था। सरकारकी इस नीतिके निषेधार्थ मईके १० तारीखको पूरे देशमें काँग्रेसद्वारा 'सुभाष दिन' मनाया गया। वैसे ही ता. १३ सितम्बरको 'राजबंदी दिन' मनाया गया। इसके अलावा काँग्रेसके अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरूने 'नागरिक स्वतंत्रता-संघ' स्थापित किया और उसके द्वारा नागरिक स्वतंत्रतापर किये जानेवाले आक्रमणों तथा आघातोंको-रोकनेका प्रयत्न किया।

इसके पाँच वर्ष पहले हिन्दुस्थानके ५०० वृत्तपत्रोंकी ओरसे जमानत की माँग की गयी थी। फलतः ३५० वृत्तपत्र बंद थे। शेष वृत्तपत्रोंको ढाई लाखके ऊपर जमानत भरनी पड़ी। मुद्रण-स्वातंत्र्य, संचार-स्वातंत्र्य, भाषण-स्वातंत्र्य आदि नागरिकोंके अधिकारोंका गला घोंट दिया जा रहा था।

हरिपुरा काँग्रेसमें अंतर्विरोध

इसी हालतमें सन् १९३८ के फरवरीमें हरिपुरामें काँग्रेसका अधिवेशन हुआ। श्री० सुभाषचंद्र बोस उसके अध्यक्ष चुने गये थे। उनका गांधीजीसे कड़ा तात्त्विक विरोध था। इसलिए इसके बादके २-३ वर्षोंतक काँग्रेस और अध्यक्षमें मतभेद तथा संघर्ष रहा। हरिपुरा तथा त्रिपुरी काँग्रेस अधिवेशनपर इस विरोध तथा तज्जन्य कटुताकी छाया विद्यमान थी। जवाहरलालजीने लिखा है कि "काँग्रेसकी कार्यसमिति तथा सुभाषबाबूमें राष्ट्रीय और आंतरराष्ट्रीय नीतिके सम्बन्धमें बहुतही मतभिन्नता थी।"

हरिपुराका ५१ वाँ अधिवेशन होनेके कारण ५१ बैलोंके रथमेंसे अध्यक्षका जुलूस निकाला गया तथा ५१ प्रवेशद्वारोंसे सुसज्ज 'विठ्ठलनगर' बनाया गया। भारतमें मुसलमानोंद्वारा झगड़े आरंभ हो गये थे, अतः मुस्लिम लीगके नेता बॅ. जिनासे काँग्रेसने चर्चा शुरू की थी। मि. जिनाने अपनी १४ माँगें जाहिर कीं।

हरिपुरा काँग्रेसमें एक घटनासे खलबली मच गयी। वह घटना इस प्रकार थी। बिहार और संयुक्त प्रांतके काँग्रेसी मंत्रिमंडलने त्यागपत्र दिये। त्यागपत्र देनेका कारण था राजबंदियोंको मुक्त करनेके मामलेमें गव्हर्नरद्वारा लगायी गयी रोक। जब अधिवेशन शुरू था उसी समय उक्त प्रांतोंके

मुख्य मंत्री त्यागपत्र देकर वहाँ दाखिल हुए। उनका स्वागत विजयी वीरोंकी भाँति काँग्रेसियोंने किया। काँग्रेससे पुष्टि प्राप्त होनेसे उनका पक्ष इतना सबल हुआ कि देहली सरकारको बीचमें पड़कर उनकी माँग पूरी करनी पड़ी। अन्यथा सातों प्रांतोंके मंत्रिमंडल त्यागपत्र देते और देशमें बड़ी विकट समस्या निर्माण हो जाती।

हरिपुरा काँग्रेसमें गांधीजीके विधायक कार्यक्रमपर तथा राष्ट्रीय-शिक्षापर जोर दिया गया। प्रथम ही हाथसे बना कागज़ काँग्रेससे इस्तेमाल किया जाने लगा।

उसी प्रकार ५०० गायोंका समूह वहाँ खड़ा किया था। इन गायोंका दूध प्रतिनिधियोंको दिया गया। अन्यान्य रचनात्मक कार्यके लिए अ. भा. सूत-संघ, अ. भा. हरिजन-संघ, अ. भा. ग्रामोद्योग-संघ आदि स्वतंत्र संस्थाएँ स्थापित की गयीं। रियासतोंमें लोकतंत्रवादी शासनप्रणाली शुरू करनेके संबंधमें भी प्रस्ताव हुआ। उसी प्रकार किसानोंकी संघटनाके संबंधमें भी एक स्वतंत्र प्रस्ताव किया गया।

त्रिपुरी काँग्रेसमें संघर्ष

" हमारी एकता रखनेके लिए, हमारा स्वातंत्र्य-युद्ध द्वेष-रहित बनाये रखनेके लिए और हमारी आज़ादी की प्राप्तिके लिए—हमें म.गांधीजीकी बहुत वर्षोंतक आवश्यकता है। इतनाही नहीं, तो अखिल मानवजातिके लिए उनके मार्गदर्शनकी ज़रूरत है, क्योंकि भारतके स्वतंत्र होनेका मतलब मानवताकी सुरक्षा है।" इन गौरव-पर शब्दोंमें, देशगौरव सुभाषचंद्रने गांधीजीकी महत्ताका वर्णन किया। लेकिन देशका यह दुर्भाग्य रहा कि इन दो नेताओंमें इतना महान् विग्रह निर्माण हुआ कि सन् १९३९ में जब त्रिपुरीमें काँग्रेस अधिवेशन हुआ उस समय अध्यक्षपदके लिए सुभाष-बाबूके खड़े हो जानेपर भी गांधीजीने डॉ. पट्टाभिसीतारामय्याको खड़ा किया। अध्यक्षपदके लिए इस प्रकारकी स्पर्धा काँग्रेसके इतिहासमें सर्वप्रथम यही रही।

आश्चर्यकी बात यह थी कि गांधीजीका पृष्ठपोषण पाकर भी पट्टाभीको १३७६ मत और सुभाषबाबूको १५७५ मत प्राप्त हुए। अतः सुभाषबाबू

अध्यक्षके नाते त्रिपुरीमें गये । लेकिन कैसे ? रुग्णशय्यापर आरूढ़ होकर ! उस समय गांधीजीने भी राजकोट रियासतमें प्राणांतिक उपोषण आरंभ किया था । इसलिए काँग्रेसकी सब चेतनाही गायब हो गयी थी । इस हालतमें भी, निश्चित किये अनुसार स्वागतमंडलद्वारा, ५२ हाथियोंके रथमें सुभाषबाबूकी तस्वीरका जुलूस निकाला गया । प्रत्येक हाथीपर भूतपर्व एक एक राष्ट्राध्यक्षकी प्रतिमा विराजमान थी । खादी-ग्रामोद्योगके प्रदर्शनका उद्घाटन जवाहरलालजीने किया । ध्वज-वंदन भी उन्हींके हाथों हुआ । म्युनिक-समझौतेका निषेध करनेवाला प्रस्ताव जवाहरलालजी द्वारा प्रस्तुत किया गया । तथा संविधान-समितिकी 'राष्ट्रीय माँग' का प्रस्ताव भी उन्होंने पेश किया ।

यह प्रस्ताव कि, "गांधीजीकी सलाहसे अध्यक्ष कार्यसमितिकी नियुक्ति करें ।" गोविंद वल्लभ पंत द्वारा प्रस्तुत किया जाकर सम्मत भी हुआ । यह प्रस्ताव सुभाषबाबूको कैसे पसंद आता ? वे तो विद्रोह कर उठे । उन्होंने अप्रैल मासमें कलकत्तामें अ. भा. काँग्रेस कमिटीकी सभा बुलाई और उसमें अध्यक्षके कार्यका त्याग किया । काँग्रेसके अध्यक्ष तथा कार्यकारिणीके बीच तीव्र संघर्ष निर्माण होनेसे अध्यक्षको ही त्यागपत्र देना पड़ा । त्यागपत्रके बाद सुभाषबाबूने काँग्रेसमें ही 'फॉर्वर्ड ब्लॉक' नामका पक्ष स्थापित किया । इतनेपर ही वे रुके नहीं । अ. भा. काँग्रेसकमिटीके दो प्रस्तावोंका उन्होंने निषेध किया तथा देशको यह आदेश दिया कि ९ जुलाईको 'निषेध-दिन' मनाया जाय । यह कृत्य काँग्रेसके विरुद्ध विद्रोहका था । काँग्रेसके विरुद्ध प्रतिस्पर्धी शक्ति उत्पन्न करनेका यह प्रयत्न काँग्रेस कैसे सहती ? वर्धामें ता. ९ अगस्त १९३९ को काँग्रेस कार्यसमितिने यह प्रस्ताव किया कि—ता. ९ जुलाईको 'निषेध दिन' मनाया जानेसे सुभाषबाबूके हाथों अनुशासन भंग हुआ है । अतः उन्हें काँग्रेसके किसी भी अधिकारपदके लिए खड़े होनेकी बंदी की जा रही है । काँग्रेसके इस अंतर्गत विद्रोहके साथ ही दूसरा जागतिक महायुद्ध शुरू था । १९३९ के सितम्बरमें वह शुरू हुआ, और हिन्दी जनताकी लेशमात्र भी सलाह न लेते हुए अंग्रेज सरकारने हिन्दुस्थानको महायुद्धमें घसीट लिया । यह राष्ट्रका उपमर्द था । समाजवादका अवमान था । राज्यारूढ़ काँग्रेसका

तिरस्कार था। अतः कॉँग्रेसने नवम्बर मासमें सात प्रांतोंमें स्थित मंत्रि-मंडल रद किये। प्रांतिक स्वराज्यके दीप महायुद्धके झंझावातसे बुझ गये। कॉँग्रेस फिरसे स्वतंत्रतासंग्रामके मार्गकी ओर मुड़ी।

इस हालतमें रामगड़में कॉँग्रेसका अधिवेशन हुआ। उसके अध्यक्षपदके लिए भी स्पर्धा रही। मौ. आझादको १८६४ मत प्राप्त हुए और उनके प्रतिस्पर्धी कॉ. रायको १८३ मत प्राप्त हुए।

रामगड़ एक देहात, गिरी-कंदरों तथा नदी-नालोंमें बसा हुआ, तिसपर भी ऐन अधिवेशनके समय मूसलाधार वर्षा, इतना होते हुए भी कॉँग्रेसका संकल्पित पूरा कार्यक्रम संक्षेपमें लेकिन यथा-विधि समाप्त हुआ। स्वागताध्यक्षका भाषण हुआ—अध्यक्षका भाषण हुआ—प्रस्ताव भी मंजूर किये गये, लेकिन पूरी कार्रवाई चार घण्टोंकी। दूसरे दिन ऊँचे स्थान पर स्थित ध्वज-स्तंभके पास अधिवेशन हुआ। स्वागताध्यक्ष डॉ. राजेंद्रप्रसाद थे। अध्यक्ष मौ. आज़ादने आज़ादीकी तुरही फूँक दी।

सन् १९४० के अक्तूबरमें कॉँग्रेसद्वारा 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' की घोषणा की गयी। और १९४१ के अप्रैलमें युद्धके विरोधमें नारे लगानेका प्रातिनिधिक सत्याग्रह भी शुरू हुआ। इसमें बीस हजारसे अधिक कॉँग्रेस-कार्यकर्ताओंने भाग लिया और वे जेल गये। युद्धकालमें अंग्रेज़ सरकारके मार्गमें विघ्न पैदा करनेकी कॉँग्रेसकी इच्छा नहीं थी, तो भी उसे जल्दी उस बातकी थी कि युद्धकार्यमें सहयोग करनेके लिए उसकी पराधीनताकी शृंखलाएँ जल्दसे जल्द तोड़ दी जाय।

अतः कॉँग्रेसने स्वातंत्र्य-संग्राम चलाया लेकिन उसको न तो सामूहिक स्वरूप दिया गया न टैक्सबंदीकी तीव्रता उसमें लायी गयी।

"आपके युद्ध-हेतु क्या हैं?" यह प्रश्न सरकारसे कॉँग्रेस बार बार पूछती रही। "और यदि स्वातंत्र्य तथा समाजवादकी रक्षाके लिए आप लड़ते हों, तो ये तत्त्व, आपके पैरोंके नीचे रौंदे गये भारतको पहले लागू कीजिये।" कॉँग्रेस इस प्रकारका अनुरोध सरकारसे करती रही। किन्तु अंग्रेज़ सरकारके प्राण आपत्तियोंसे घिरे रहनेपर भी सुईके अग्रके बराबर भी सत्तान्तर करने वह तैयार न थी।

सरकारके साथ समझौता करनेके लिए उसके सामने झुकनेका अधिकसे अधिक प्रयत्न कँग्रिसने सन् १९४० में किया। उस साल ता. २७ जुलाईको पूनामें अ. भा. कँग्रिस कमिटीने सरकारको युद्धकार्यमें सहयोग देनेकी योजना बनायी और उसे सफल बनानेके हेतु अहिंसाके प्रणेता गांधीजीको कँग्रिससे अलग रखा।

जो प्रस्ताव मंजूर किया गया उसका अभिप्राय था कि "सरकार हिन्दुस्थानकी पूर्ण स्वतंत्रताकी घोषणा करे, और केंद्रीय तथा प्रांतीय विधान–सभाओंके विश्वासपात्र अस्थायी अंतरिम मंत्रिमंडल कायम करे। कँग्रिस देशकी रक्षाके लिए विश्वयुद्धके काममें सब प्रकारसे सरकारको सहयोग देगी, इस काममें अहिंसाकी पाबंदी वह नहीं मानेगी।" लेकिन सरकारने कँग्रिसद्वारा आगे बढ़ाये हुए सहयोगके हाथको झिड़क दिया। जापानने सिंगापुर जीत लिया, रंगूनपर कब्ज़ा किया। तब इंग्लैंडके मंत्री स्टैफर्ड क्रिप्स २२ मार्च १९४१ को हिन्दुस्थानमें आये। उन्होंने सत्रह दिन विभिन्न दलोंके नेताओंसे अपनी स्वराज्य–योजनाके बारेमें वार्तालाप किया। इस योजनाके अंतर्गत हिन्दुस्थानका तीन टुकड़ोंमें बँटवारा किया जाने और सैनिक विभाग अँग्रेजोंके कब्जेमें बनाये रखने का सुझाव था। कँग्रिस तथा अन्य दलोंने इस योजनाको ठुकरा दिया। कँग्रिसके लिए अब प्रत्यक्ष रूपमें लड़ाई छेड़ना अनिवार्य हो गया।

एक सोमवारके दिन हमेशाकी तरह गांधीजीका मौन रहा। देशकी मौजूदा हालतपर वे सोचते रहे। "क्रिप्स–मिशनने देशको नाउम्मीद बनाया है। आगे क्या होगा? अँग्रेजोंकी सल्तनत हमारी उन्नतिका रास्ता रोके हुए है, और विश्वयुद्धने हमारी गर्दन पकड़ रखी है। इस समय कहना ही होगा कि अँग्रेजोंकी सल्तनत यहाँसे फौरन हट जाए।" इस मतलबके खयाल गांधीजीके दिलमें बरसाती बादलोंकी तरह उमड़ आये। उन्होंने अपने साथियोंको ये विचार समझाना चाहा। लेकिन ऐसे नाजुक मौकेपर जब कि जापानके बम हिन्दुस्थानकी सीमापर बरस रहे हैं, देशमें आंदोलन खड़ा करना बहुतेरे साथियोंको अनुचित-सा लगा। आखिर गांधीजीने ऐलान किया कि, "चाहे मेरे साथ कोई आए, न भी आए, मैं 'चले जाओ' का आंदोलन कँग्रिसके सहयोगके बिना भी खड़ा करने

जा रहा हूँ। हिन्दुस्थान, इंग्लैंड और दुनियाकी भलाईके लिए यही जरूरी है।"

हालाँकि उस वक्त गांधीजी काँग्रेसके चवन्नीवाले सदस्य भी नहीं थे, फिर भी 'गांधी बोले देश डोले' ऐसी स्थिति विद्यमान थी। २७ अप्रैल १९४२ को अलाहाबादमें काँग्रेस कार्यसमितिकी बैठक हुई जिसमें स्वातंत्र्यका आंदोलन शुरू करनेका प्रस्ताव मंजूर हुआ। देशके बँटवारेका विरोध अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटीने एक प्रस्तावद्वारा किया और १९४२ में बंबईके अधिवेशनमें 'चले जाओ' का नारा बुलंद करते हुए लड़ाईकी तुरही फूँक दी।

इसके साठ साल पहले काँग्रेसका अधिवेशन जिस गवालिया टैंक मैदानपर हुआ था, ठीक उसी स्थानपर शुक्रवार ७ अगस्त १९४२ के दोपहरको अधिवेशन शुरू हुआ। अ. भा. काँग्रेस महासमितिके ३५० सदस्योंमेंसे २५० उपस्थित थे। मंडपमें और बाहर हजारों दर्शक मौजूद थे। देशभरमें करोड़ों लोग अधिवेशनके संदेशकी प्रतीक्षामें थे।

गांधीजी तथा अध्यक्ष मौ. आजादके भाषणोंके बाद श्री. जवाहरलालजीने 'चले जाओ' वाला प्रस्ताव पेश किया। इस प्रस्तावद्वारा देशके भविष्यका निर्धारण हुआ। प्रस्तावमें साफ तौरपर तीन बातोंकी माँग की गयी थी। हिन्दुस्थानमेंसे अँग्रेजी सल्तनत फौरन हट जाए, (२) अंतरिम अस्थायी राष्ट्रीय सरकार कायम हो, (३) और आगे चलकर संविधान परिषद द्वारा हिन्दुस्थानके संघराज्यकी योजना बनायी जाए। सरकारद्वारा इन माँगोंको अस्वीकृत किये जानेकी हालतमें अहिंसात्मक, सामूहिक संग्राम लड़नेका आदेश जनताको इस प्रस्तावद्वारा दिया गया।

इसपर पेश की गयी तरमीमोंसे तीनको स्वीकार किया गया और तीन गिर गयीं। भारी बहुमतसे प्रस्ताव मंजूर किया गया। सिर्फ तेरह प्रतिनिधियोंने उसके विरोधमें वोट दिये।

इसके बाद गांधीजीने हिंदीमें सत्तर मिनट और अँग्रेजीमें बीस मिनट भाषण दिया। उन्होंने संदेश दिया कि, "तुम सब लोग अब अपनेको आज़ाद समझो।" उन्होंने संग्रामका नारा घोषित किया 'करेंगे या मरेंगे।'

गांधीजी व्हाइसरॉयके पास समझौतेके लिए एक अंतिम पत्र भेजना चाहते थे। लेकिन गांधीजी और काँग्रेसके प्रायः तमाम नेता ता. ९ को सवेरेसे पहलेही गिरफ्तार किये गये। काँग्रेस कार्यसमितिके सदस्योंको अहमदनगरके किलेमें तथा गांधीजीको पूनाके पास आगाखान महलमें रखा गया। इस गिरफ्तारीसे एक हफ्तेके अंदर वहाँ ता. १५ की सुबह गांधीजीके एक पुत्र-सदृश साथी श्री. महादेव देसाईका एकाएक देहावसान हुआ। उसके लगभग दो वर्ष बाद २२ फरवरी १९४४ को गांधीजीकी धर्मपत्नी सौ. कस्तुरबाका भी उसी स्थानपर स्वर्गवास हुआ। आगाखान महलमें इन दोनोंकी समाधियाँ पास-पास बनायी हुई हैं, जिस स्थानसे मानो वे भक्ति और सेवाका संदेश देती रही हैं।

नेताओंकी इस अचानक की गयी गिरफ्तारीसे आम लोगोंके दिलोंको कड़ी चोट लगी। लोगोंके गुस्सेकी कोई सीमा नहीं रही। डाकघर, रेलके स्टेशन, पुलिस थाने, कचहरियाँ, सरकारी दफ्तर, स्कूल आदिमें आग लगाती हुई प्रक्षुब्ध जनता मानो विदेशी सरकारको चुनौती देती रही, और उसकी हस्तीका इनकार करती रही। बमके विस्फोट जगह जगह होते रहे।

सतारा, बलिया, भागलपुर, मिदनापुर आदि कई जगह 'समानांतर-सरकार' कायम हुई थी। वहाँ कई महीने विदेशी सल्तनतका नामो-निशान तक नहीं रहा था। शहरोंमें मज़दूरोंने भी काफी समयतक हडतालें कीं। लोग बडी बडी संख्यामें इकट्ठे होकर पुलिस-थानों और तहसीलके दफ्तरोंके सामने निदर्शन करते थे, उनपर काँग्रेसका तिरंगा झंडा चढ़ाते थे और उन इमारतोंमें आग भी लगाते थे। इस तरह देशभरमें लोग साहस तथा जोशसे लड़ते हुए सरकारके कारोबारको ठप कर देते थे। १८५७ के क्रांतिसंग्रामके बाद सिर्फ इसी समय हिन्दुस्थानके लोगोंमें सरकारके विरोधी भाव इस व्यापक रूपमें, जोरोंसे उमड़ आये थे।

सरकारने भी दमनके अपने सारे हथियार एकसाथ चलाये। भाषण, मुद्रण, संचार आदिपर कड़ी रोक लगानेवाले कानून जारी किये गये। जुरमाना कैद, कोड़े आदि कड़ीसे कड़ी सजाएँ दी जाने लगीं। गोलीकांड और लाठी-चार्ज रोज़मर्राकी घटनाएँ हुई। ब्रेनगन और मशीनगनका

इस्तेमाल बच्चों और महिलाओंतकके सर फोड़नेके लिए किया जाने लगा। तोड़फोड़ और आगजनीके अपराध फाँसीकी सज़ाके योग्य ठहराये गये। सरकारद्वारा दी हुई जानकारीके मुताबिक सिर्फ पाँच महीनेमें ६०२२९ व्यक्ति गिरफ्तार और १८००० व्यक्ति स्थानबद्ध किये गये, ९४० व्यक्ति मारे गये, १६३० घायल हुए और ५०० व्यक्तियोंको कोड़े लगाये गये।

सरकारने इस बातको कबूल किया है कि पुलिसवालों और सैनिकोंने पाँचसौसे अधिक बार निःशस्त्र समुदायोंपर गोली चलायी। लोगोंद्वारा अंदाजा लगाया गया है कि लगभग पचीस हज़ार व्यक्तियोंकी गोली-कांडोंसे मौत हुई।

दूसरे विश्वयुद्धकी समाप्तितक यह विकट संघर्ष चलता रहा। बीमारीकी वजहसे ६ मई १९४४ को गांधीजीकी रिहाई हुई। सितंबरमें गांधीजीने बॅ. जिनासे हिन्दुस्थानको अखंडित रूपमें बनाये रखनेके उद्देश्यसे वार्तालाप किया। लेकिन श्री. जिना स्वतंत्र पाकिस्तानके निर्माणपर अड़े हुए थे। इससे गांधीजी और जिनामें समझौता नहीं हो सका।

जर्मनीने ७ मई १९४५ को अपनी हार मान ली। जापानने भी १४ अगस्त १९४५ को उसीका अनुसरण किया। विश्वयुद्ध समाप्त हुआ। जून १९४५ को कॉंग्रेसके नेताओंको रिहा किया गया। अँग्रेज सरकारने उनसे वार्तालाप शुरू किया। व्हाइसरॉय लॉर्ड वेवेलने शिमलामें नेताओंकी परिषद बुलायी। लेकिन उसका कोई नतीजा नहीं निकला। फिर भी ज़माना अँग्रेज़ सरकारको हिन्दुस्थानकी आज़ादीके लिए मजबूर बना रहा था। इंग्लैंडमें २६ जुलाई १९४५ को श्रमिक दलके हाथमें शासनकी बागडोर आ गयी। उसे कॉंग्रेसकी माँग उचित लग रही थी। हिन्दुस्थानमें निर्वाचन करा लेना तय किया गया।

कॉंग्रेसने देशके सामने जो चुनाव घोषणा-पत्र पेश किया उसमें 'चले जाओ' के प्रस्तावको दोहराया गया था और आज़ादी हासिल करनेपर ज़ोर दिया गया था। आज़ाद हिन्दुस्थानमें सहकारी लोकराज्यको कायम करनेकी योजना घोषणा-पत्रमें बतलायी गयी थी। उसमें यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया गया था कि राजनीतिक स्वतंत्रताका सारभूत अंश आर्थिक

और सामाजिक होना चाहिये। नागरिकोंके बारह बुनियादी अधिकारोंका भी उसमें समावेश हुआ था।

नवंबरके आखिरी हफ्तेमें चुनाव हुए। उन्हें काँग्रेस भारी बहुमतसे जीत गयी।

स्वाधीनताका सूर्योदय

इंग्लैंडकी नयी सरकारने हिन्दुस्थानके लोगों द्वारा निर्वाचनमें किये गये फैसलेको खुशीसे स्वीकार किया। और हिन्दुस्थानकी आजादीकी योजना बनानेके लिए जनवरी १९४६ में ब्रिटिश संसदके विभिन्न दलीय दस सदस्योंका प्रतिनिधि-मंडल हिन्दुस्थानमें भेजा। लेकिन वह अपने काममें असफल रहा। इसलिए तीन ब्रिटिश मंत्रियोंका मंडल मईमें हिन्दुस्थानमें आया। मुस्लिम लीगको तसल्ली दिलानेके काममें उसे भी कामयाबी नहीं मिली। फिर भी ब्रिटिश मंत्रि-परिषदने १६ जूनको अस्थायी सरकारका ऐलान किया, और यह भी घोषित किया कि रियासतोंके साथ सारे हिन्दुस्थानकी विधान-सभाओंद्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियोंकी संविधान परिषद बुलायी जाएगी।

काँग्रेसने २ सितंबर १९४६ को अस्थायी मंत्रि-मंडल बनाया। उस दिन मुस्लिम लीगने देशभरमें काले झंडोंसे निषेधका प्रदर्शन किराया। तथा १६ अगस्तको प्रत्यक्ष प्रतिकार-दिन मनाया। तबसे देशभरमें सांप्रदायिक गृहयुद्ध शुरू हुआ। मारकाट बेहद बढ़ गयी। शांति और कानूनके लिए मानो कोई स्थान नहीं रहा। भ्रातृभाव और सभ्यताका नामोनिशान नहीं रहा। नोआखालीमें तो नारकीय अत्याचारोंकी हद हो गयी। कलकत्तामें खूँखार जंगका-सा सरे आम कत्ल हुआ। सड़कों और स्टेशनों पर सैंकड़ों हिन्दुओंके मुर्दोंके ढेर लग गये। दौड़ती रेल-गाड़ियाँ रुकवाकर मुसाफिरोंकी गर्दनें कटवायी जाती रहीं। आगजनी और लूटपाटने कहर मचाया। अकेले बंगालमें ही पहले तीन ही दिनोंमें पाँच हजारसे अधिक व्यक्ति कत्ल हुए और पंद्रह हज़ारसे अधिक घायल हुए। वहाँकी मुस्लिम लीग-दलीय सरकार इस सांप्रदायिक संघर्षकी ओर तटस्थ दृष्टिसे देखती रही—या यूँ कहा जाए कि वहाँके अधिकारी उस आगमें घी डालनेको

काम कर रहे थे। इन्सानियतपर कालिख पोतनेवाली ऐसी वहशियत और हैवानियतसे भरी करतूतें दुनियाकी तवारीखमें शायद ही पायी जाएँगी।

बिहारके हिन्दुओं और पंजाबके सिक्खोंने इन अत्याचारोंका बदला लेना चाहा। उन्होंने भी अत्याचार किये। देशभरमें हाय हाय मची। मुस्लिम लीगने सरकारके कारोबारमें भी रोड़े अटकानेकी साजिश चलायी। और इसलिए २६ अक्तूबर १९४६ को उसने हिन्दुस्थानके केंद्रीय मंत्रि-मंडलमें प्रवेश पा लिया। इससे और भी नयी झंझटें पैदा हुई।

हिन्दुस्थानको दो हिस्सोंमें बाँटकर उन्हें आज़ाद बनानेकी जिम्मेदारी ब्रिटिश सरकारने उठानेका निश्चय किया। हिन्दुस्थानकी आज़ादीका विधेयक ब्रिटिश संसदमें जल्दी जल्दी मंजूर भी किया गया। इस विधेयकने चालीस करोड़ लोगोंकी डेढ़सौ सालकी पुरानी गुलामीको मिटाना चाहा। हिन्दु-स्थानके विभिन्न वर्गों, संप्रदायों और दलोंकी माँगोंके समन्वयकी उस विधेयकमें कोशिश की गयी थी। फिर भी उसमें सिर्फ़ बाईस धाराएँ और तीन अनुसूचियाँ थीं। प्रस्ताव सूरतमें छोटा लेकिन बड़ा प्रभावकारी था। संसदकी दोनों सभाओं—कॉमन्स और लॉर्ड्स—की तथा बादशाहकी मंजूरी पाकर १८ जुलाई १९४७ को उस विधेयकने कानूनका रूप ले लिया उसका पहला पठन सिर्फ़ एक सेकंदमें मंज़ूर हुआ। लॉर्ड्सकी सभामें उसके तीनों पठन सिर्फ़ पाँच घंटेमें पूरे हुए।

ब्रिटिश सरकारने ३ जून १९४७ को हिन्दुस्थानके बँटवारे और आज़ादीका ऐलान किया, और उसके अनुसार एक महीनेके अंदर कानून बनाया। आज़ाद हिन्दुस्थानका ढाँचा बनानेका काम हिन्दुस्थानकी संवि-धान सभाको और बँटवारेके सवालको निपटानेका काम एक समितिको सौंप दिया गया। इस प्रकार ब्रिटेनकी श्रमिक दलीय सरकार शीघ्रतासे अपनी ज़िम्मेदारीसे फारिग हो गयी।

कॉंग्रेसकी सदारतकी बागडोर मौ. आज़ादने पाँच सालके मुश्किल ज़मानेमें सँभाली थी। उन्होंने उसे १९४६ जुलाईमें बंबईमें अखिल भारतीय कॉंग्रेस महासमितिकी बैठकके अवसरपर श्री. जवाहरलालजीके हाथोंमें थमा दिया। जवाहरलाल चौथी बार कॉंग्रेसके अध्यक्ष हुए। लेकिन केंद्रीय सरकारके अस्थायी मंत्रि-परिषदमें प्रधान-मंत्रीका भी काम उन्हींको संभालना पड़ता था। इसलिए कॉंग्रेसके अध्यक्षपदसे वे अलग हो गये।

दिल्लीमें १४ जून १९४७ को अ. भा कॉंग्रेस महासमितिकी बैठक आज़ादी और पाकिस्तानका निर्माण जैसी महत्त्वपूर्ण घटनाओंपर सोच-विचार करनेके लिए हुई। अचरजकी बात है कि इस महत्त्वपूर्ण बैठकमें लगभग एकसौ अनुपस्थित रहे। जो लोग उपस्थित रहे उनमेंसे भी ३२ सदस्य मतदानके समय तटस्थ रहे। परिस्थितिवश लाचार होकर और मुस्लिम लीगके अत्याचार तथा मंत्रि-परिषदमें उसकी असहयोगकी अडंगेबाज़ नीतिको हमेशाके लिए खतम करनेके उद्देश्यसे कॉंग्रेसने अपने सिद्धान्तके विरुद्ध अत्यंत नाखुशीसे पाकिस्तान-निर्मितिको याने राष्ट्रके विच्छेदनको मान्यता दी। अंग्रेज़ सरकारने यह ज़ाहिर किया कि लीगकी हुल्लड़के कारण सन १९४६ के जुलाईसे अक्तूबर तक केवल ४ महीनोंमें ५०१८ मनुष्य मारे गये और १३३२० घायल हुए। सितम्बर से नवम्बर तक तीन महीनोंमें इस वैमनस्यकी नरकाग्निमें ६७०० नर-नारियोंकी आहुति पड़ी। नौखालीका हत्याकांड मिटानेके लिए गांधीजी हाथमें प्रेमका अमृतकुंभ लेकर अकेले पद-यात्रा करने गये थे।

किन्तुअंग्रेज़ सरकारने खंडित हिन्दुस्थानको स्वतंत्र बनानेका बीड़ाही उठाया था। यह कार्य निश्चित अवधिके पहले पूरा करनेका निश्चय लॉर्ड माऊंटबॅटनने किया था। आप ता. २६ मार्च १९४७ को २६ वें और अंतिम वाइसराय के नाते दिल्लीमें पधारे-और उसी दिन गांधी-जिनाको मिलनेके लिये आपसे निमंत्रण भेजे गये। किसी कार्यकुशल सेनानीकी तरह बड़ी लगन तथा कौशलसे उन्होंने अपना काम सबकी अपेक्षाके पहले सफल बनाया। और ता. १५ अगस्त १९४७ को भारतमें स्वातंत्र्य अवतरित हुआ।

ता. ९ दिसम्बर १९४६ के दिन जन्म धारण करनेवाली संविधान परिषद ता. २६ नवम्बर १९४९ को समाप्त हुई। विघ्नों-विरोधोंकी आँधीसे गुज़रकर उसने जो संविधान सिद्ध किया, उसे स्वतंत्र भारतने ता. २६ जनवरी १९५० के दिन स्वीकृत किया और तबसे पूर्ण स्वतंत्र, सार्वभौम, लोकतंत्रप्रधान राज्य यहाँ शुरू हुआ। इस घटनाके प्राणभूत सिद्धान्त—

न्याय (सामाजिक, आर्थिक तथा राजकीय)
स्वातंत्र्य (विचार, उच्चार, धारणा, श्रद्धा, पूजा आदिका)
समानता (दर्जा तथा अवसरमें) और
भ्रातृभाव

• • •

७ स्वातंत्र्यकालीन कार्य

स्वदेशकी प्रगति राज्य-यंत्र-द्वारा करनेके लिए काँग्रेसदल सत्तारूढ़ बना। अतः काँग्रेसके प्रथम श्रेणीके बहुतेरे सब नेता प्रांतीय तथा केंद्रीय सरकारोंमें प्रविष्ट हुए। अनायासही इसका परिणाम यह हुआ कि पहलेकी अपेक्षा काँग्रेस-संस्थामें शिथिलता आयी। काँग्रेस-पदाधिकारियोंकी यह इच्छा थी कि उनका अंकुश सरकारपर चले पर सरकारमें भी काँग्रेस-श्रेष्ठीही थे। अतः वे प्रभावी सिद्ध होते थे। ऐसी हालतमें काँग्रेस-दल तथा काँग्रेस-सरकारमें मनमुटाव का होना अपरिहार्य था। इस आपत्तिको टालनेके लिए गांधीजीने अपने जीवनके अंतिम दिनोंमें, काँग्रेसको राजनीतिसे मुक्त करनेवाले 'लोक-सेवक' संघकी योजना प्रस्तुत की।

मीरत काँग्रेसके अध्यक्षका त्यागपत्र

सन् १९४६ में मीरतमें जो काँग्रेस अधिवेशन हुआ उसके अध्यक्ष श्री. आचार्य कृपलानी थे। लेकिन उनको ऐसेही मनमुटावके कारण सन् १९४७ के नवम्बरमें अध्यक्षपदका त्यागपत्र देना पड़ा। ऐसे कठोर समयमें अपनी पूर्व-परम्पराके अनुसार राष्ट्रसभाका भार वहन करनेके लिए राजेंद्रप्रसादही आगे आये- उसके लिए उन्होंने अपने मंत्रिपदका भी इस्तीफा दिया। लेकिन ऐसा त्याग करना उनके लिए बाएँ हाथका खेल था।

जयपुरका जीवन-शुद्धिका आदेश

सन् १९४८ में जयपुरमें डॉ. पट्टाभि सीतारामय्याकी अध्यक्षतामें कॉंग्रेसका अधिवेशन हुआ। यह पहला ही अधिवेशन था जो रियासतमें सम्पन्न हुआ। मीरतसे अखंड ज्योति निकली थी। सर्वोदय प्रदर्शनका उद्घाटन विनोबाजीके हाथों हुआ। 'गांधी नगरमें' गांधीजीकी दस फुट ऊँची प्रतिमा मूक-स्फूर्ति दे रही थी।

तीन हजार प्रतिनिधि तथा दो लाख श्रोता उपस्थित थे।

विषय-नियामक समितिमें सरकारी कामकाजके संबंधका असंतोष मुखरित हुआ। ता. १८ दिसम्बर १९४८ को श्री. महेश दत्त मिश्राने यह प्रस्ताव पेश किया कि "कॉंग्रेस कार्यकर्ताओंको चाहिये कि वे अपना जीवन-स्तर ऊँचा रखें—विशेषतया मंत्रियोंको इस संबंधमें उदाहरण-स्वरूप बनना चाहिये।" यह प्रस्ताव १०७ विरुद्ध ५२ मतोंसे मंजूर हुआ।

इस प्रस्तावमें उल्लिखित मंत्रियोंके अवमानकी व्यंजना जवाहरलालजीको विदित होते ही उन्होंने दूसरे दिन, इस प्रस्तावमेंसे मंत्रियोंके सम्बन्धका अंश, विषय-नियामक समितिके बहुमतसे, निकाल दिया।

नासिक कॉंग्रेसके अध्यक्षका त्यागपत्र

इसके बादका अधिवेशन महाराष्ट्रमें हुआ। यह अधिवेशन सन् १९५० के सितम्बरमें नासिकमें सम्पन्न हुआ। इसके अध्यक्ष श्री. पुरुषोत्तम दास टंडन थे। किन्तु इनकी नीतिने भी प्रधानमंत्री जवाहरलालजीकी नीतिसे मेल नहीं खाया। अतः उन्हें अपने अध्यक्षपदका त्यागपत्र देना पड़ा। इसके पहले जवाहरलालजीने कार्यकारिणीका त्यागपत्र दिया—और उनके साथ कार्यकारिणीके सब सदस्योंने भी त्यागपत्र दिये। श्री. टंडनजी अकेले ही रहे। उन्होंने भी अपना त्यागपत्र दे दिया।

एकही अध्यक्षतामें तीन अधिवेशन

ता. १८ अक्तूबर १९५१ को दिल्लीमें कॉंग्रेसका ५७ वाँ अधिवेशन हुआ जिसके अध्यक्ष थे पं. जवाहरलालजी। अधिवेशनके पहले ही दिन मंडप जलकर खाक बन गया। फिर भी अधिवेशनकी सारी कार्यवाही सूत्रबद्धतासे चलायी गयी। पं. जवाहरलालजीने अपनी कार्यकारिणीके १५

सदस्योंमें ९ मंत्री चुन लिये थे। कॉंग्रेसकी संविधानका इसमें भंग होनेके कारण आगे चलकर उनको यह दोष निकालना पड़ा। कॉंग्रेसको अधिक सुनियंत्रित करनेके हेतु १९५२ के फरवरीमें ९ सदस्योंकी एक उपसमिति नियुक्त की गयी। कॉंग्रेसमें पहले जैसा तेज, चेतना तथा वैराग्य फिरसे निर्माण हो इसलिए जवाहरलालजी व्याकुल बने थे।

जवाहरलालजीकी अध्यक्षतामें ही हैदराबादमें ता. १७ जनवरी १९५३ को कॉंग्रेसका ५८ वाँ अधिवेशन हुआ। अध्यक्षीय भाषणमें पंचवर्षीय योजना, भाषावार प्रांतरचना आदि सरकारी प्रचलित समस्याओंकी चर्चा थी।

कलकत्तेके पास कल्याणीमें ता. २१ जनवरी १९५४ को कॉंग्रेसका अधिवेशन हुआ। मूसलाधार वर्षाके बावजूद ध्वजवंदनका कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। ध्वजवंदनके लिए ७५ फुट ऊँचाईका फौलादका स्तंभ खड़ा किया गया था। वैसे ही 'भूदानस्तूप' विनोबाजीकी शांतिपूर्ण क्रांतिका दर्शन करा रहा था। और विनोबाजीकी मूर्ति भी वहाँ भूदान-यज्ञकी निःशब्द ऋचाओंका उच्चारण कर रही थी। 'तेनसिंग-स्तंभ' हिमालयपर आरोहणके साधन दिखा रहा था तथा भारतीयोंके अजेय साहसके मौन पवाड़े गा रहा था। जवाहरलालजीके भाषणमें पाकिस्तान, आफ्रिका, कोरिया, गोवा आदिकी समस्याओंकी चर्चा की गयी थी तथा पंचवर्षीय योजनाका पुरस्कार किया गया था। इन्हीं विषयोंको पुष्टि देनेवाले प्रस्ताव मंजूर हुए।

पाँच अधिवेशनोंके एक अध्यक्ष

कॉंग्रेस और सरकारमें अब 'सरूपता' पैदा हो जानेके कारण कॉंग्रेसके प्रस्ताव बहुधा सरकारद्वारा किये गये कार्योंको उत्तेजना देनेवाले या भावी नीतिको पुष्टि देनेवाले ही होते थे। कल्याणीके बाद जवाहरलालजीने अपने सिरपर की कई महान् जिम्मेदारियोंमेंसे कॉंग्रेसके अध्यक्षपदका दायित्व छोड़नेपर भी उन्हींकी इच्छाके अनुसार चलनेवाला कॉंग्रेसका अध्यक्ष मिलनेके कारण, पहले जैसा मनमुटाव न होते हुए, कॉंग्रेसकी कार्यवाही समरसतासे हो रही थी।

१९५५ में कॉंग्रेसका अधिवेशन मद्रासके पास आवडीमें हुआ। उसके अध्यक्ष श्री. ढेबर थे। तबसे आज तक उन्होंने कॉंग्रेसके अध्यक्षपदके सूत्र अपने हाथमें रक्खे हैं। आवडी कॉंग्रेसने भारतका ध्येय "समाजवादी समाजरचना" (Socialistic Pattern of Society) निश्चित किया था।

१९५६ का अधिवेशन अमृतसरमें हुआ। और १९५७ का इन्दौरमें। आसामके 'प्राग् ज्योतिषपूर'में १९५८ का अधिवेशन हुआ। और अब १९५९ के जनवरीके पहले सप्ताहमें नागपुरमें अधिवेशन सम्पन्न हो रहा है।

जनसेवामें व्रतबद्ध बनी हुई कॉंग्रेस स्वातंत्र्य संपादन कार्यमें जैसी सबल बनी वैसी ही; भविष्यमें भारतको समृद्ध तथा समर्थ बनानेमें सफल होगी, और जागतिक शांति प्रस्थापित करनेमें मार्गदर्शक होगी, ऐसी आशा अब करोडों भारतीयोंके अंतःकरणमें वास कर रही है।

○ ○ ●

८ फिरसे नागपुर

अखिल भारतीय काँग्रेसका ६४ वाँ अधिवेशन ९ जनवरी १९५९ से नागपुरमें होने जा रहा है। इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि इस अधिवेशनके लिए 'अभ्यंकर-नगर' नामक नयी विस्तीर्ण तथा सभी आवश्यक सुविधाओंसे परिपूर्ण बस्ती बनायी गयी है। लेकिन यह देख नागपुरके निवासियोंको काँग्रेसके पारस-स्पर्शका प्रभाव महसूस होता है कि सारा नागपुर शहर तरोताज़ा दीखने लगा है, मानो उसका कायाकल्प हुआ हो।

पिछले दिनों विदेशीय सत्ताको प्रतिरोध करनेके लिए नागपुरमें हुए काँग्रेस अधिवेशनको सरकारके विरोधका मुकाबिला करना पड़ता था, जो स्वाभाविक था। अब काँग्रेस दलके सत्ताधारी होनेकी वजहसे अधिवेशनके लिए आवश्यक निवास रचनाके लिए सब प्रकारसे अनुकूल परिस्थिति पैदा हुई है, यह भी उतना ही स्वाभाविक है। नागपुरके नागरिक वहाँकी म्युनिसिपल कार्पोरेशनके कर्मचारी, बंबई राज्यके अधिकारी आदि सभी लोग इस देश-व्यापिनी तथा स्वराज्य-संस्थापिका संस्थाके स्वागतके लिए रातदिन लगन तथा उत्साहके साथ आवश्यक प्रबंधके काममें जुट गये थे। सड़कें चौड़ी तथा साफ-सुथरी बनायी गयीं, बगीचों और तालाबोंको और ज्यादा सुहावना बनाया गया। नागपुर शहरकी रचनामें इतना सुधार

पिछले दस वर्षोंमें भी नहीं हो पाया था। उसका रूप बदल गया। अभ्यंकर-नगरमें बिजली, पानीके नल, सडकें, फ्लशवाले संडास, डाक-तार-घर आदि शहराती सुविधाओंका प्रबंध किया गया है। बीमारोंके इलाजके लिए दो दवाखाने भी खोले गये। यह काँग्रेस नगर स्टेशनसे दो मीलकी दूरीपर अंबाझरी तालावके सांनिध्यमें है। काश्मीरके दल सरोवरकी भांति नागपुरका अंबाझरी तालाब भी प्रशान्त, प्रसन्न, तथा प्रशस्त है!

इस बस्तीके बनानेके लिए पाँचसौ एकड़ जमीन साफ-सुधरी की गयी। उसपर टिन तथा बांबूसे कमरे बनाये गये। नगरमें प्रवेश पानेका सबसे बड़ा दरवाजा चौंतीस फुट ऊँचाईका है। उसपर हल चलानेवाले पाँच किसानोंकी आलीशान तस्वीर खड़ी की गयी है। प्रमुख प्रवेशद्वारको श्री. जमनालालजी बजाजका नाम दिया गया है। उसकी ऊँचाई ४८ फुट है। उसके माथेपर १६ फुट ऊँचाईका तिरंगा झंडा फहरा रहा है। यह महाद्वार १०० फुट चौड़ा है, और उसके बीचका दरवाज़ा २० फुट चौड़ा है। इसके अलावा दूसरे पाँच दरवाजे हैं। उसपर बंबई राज्यके पाँचों विभागोंके प्रतीक-स्वरूप पाँच चित्र लगाये गये हैं। ये चित्र निम्न प्रकार हैं:—

(१) विदर्भके लिए रामटेकका राम-मंदिर।
(२) महाराष्ट्रके लिए प्रतापगढ़ स्थित छत्रपति शिवाजीकी मूर्ति।
(३) सौराष्ट्रके लिए सोमनाथका मंदिर।
(४) गुजरातके लिए अहमदाबादकी जुम्मा—मसजिद।
(५) मराठवाड़ाके लिए अजन्ताका कैलास शिल्प।

इन प्रवेशद्वारोंको राष्ट्रमाता कस्तुरबा गांधी, मौ. आजाद, वीर वामन-राव जोशी, सौ. अनसूयाबाई काले., म. ज्योतिबा फुले तथा शहीद शंकरके नाम दिये गये हैं।

नर—केसरी अभ्यंकर तथा सेठ जमनालाल बजाजकी नौ फूट ऊंचाईकी अर्द्धाकार मूर्तियाँ बिठायी गयी हैं। काँग्रेसके आम अधिवेशनके लिए एक, और अ. भा. काँग्रेस महासमितिके लिए एक इस प्रकार दो बड़े बड़े पंडाल बनाये गये हैं। आम अधिवेशनके पंडालमें जो सभा—मंच बनाया हुआ है उसपर पाँचसौ व्यक्ति आसानीसे बैठ सकते हैं। हरएक प्रांतके लिए एक इस प्रकार बीस प्रतिनिधि—निवास बनाये गये हैं।

चांदा ज़िलेके सावरी नामक स्थानसे ७५ फूट लंबाईका बांबू लाया गया, जिससे ६४ फुट लंबा ध्वज-स्तंभ बनाया गया है।

अभ्यागतोंके समुचित प्रबंधके लिए २५०० स्वयंसेवक कटिबद्ध हैं। इनमें ५०० महिलाएँ हैं।

खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी कॉंग्रेस अधिवेशनोंका आविभाज्य एवं गौरवपूर्ण अंग रही है। १८८८ के अधिवेशनके साथ 'स्वदेशी दूकान' लगायी गयी थी, जिसे इसकी गंगोत्री माना जाना चाहिये। १९२० के नागपुर अधिवेशनसे गांधीजीके बताये कार्यक्रमके अनुसार खादी-प्रदर्शनीका महत्त्व बढ़ता गया। इस साल नागपुर खादी मंडलने प्रदर्शनीका आयोजन किया है। खादी-ग्रामोद्योग आयोगने उसके लिए रु. तीन लाखका अनुदान दिया है। सरकारके कृषि, स्वास्थ्य, समाज-विकास आदि विभागोंने अपने अपने कार्योंके प्रात्याक्षिक रूप उसमें प्रदर्शित किये हैं।

प्रदर्शनीके सर्वोदय-मंडपमें आचार्य विनोबाके भूदान आरोहणकी चित्रावलि सजायी गयी है। गांधीजीकी प्रतिमा देश-सेवकोंको देहातियोंके दैन्यकी याददाश्त दिलाती हुई खड़ी है। प्रदर्शनीमें देशभरके विभिन्न व्यवसायियोंने ५१२ दूकानें लगायी हैं। जिनमें तरह तरहकी हुनरकी चीज़ें दिखाई देती हैं। इसके अलावा ५१६ दूकानोंमें खादी, साबुन, ताड़-गुड़ आदि ग्रामोद्योगकी चीज़ें बिक्रीके लिए रखी गयी हैं। अंबर चरखा इस प्रदर्शनीका प्रमुख आकर्षण है। देशके सभी प्रदेशोंकी कला और हुनरकी झलक प्रदर्शनीमें पायी जाती है। नृत्य, संगीत, नाट्य आदि भारतीय कलाओंका भी आविष्कार प्रदर्शनीके मंडपमें होने जा रहा है।

इसके अलावा २५ दिसंबरसे नेत्र-सुधार-संघद्वारा नेत्र-यज्ञ आयोजित किया जा रहा है। उसके अंतर्गत आँखोंका निःशुल्क इलाज किया जाएगा। लगभग दो हजार व्यक्तियोंकी आँखोंके ऑपरेशन किये जायेंगे। नयी दृष्टिका लाभ हो जानेपर उन्हें पहले पहल भारतीय नेताओंके दर्शन होंगे तब वे कितने खुश हो जाएँगे! हमें उम्मीद है कि नागपुरमें इकट्ठा होनेवाले सभी कॉंग्रेसप्रेमी नेताओं और कार्यकर्ताओंको भी वैसी ही खुशी होगी और वे नागपुरवालोंको उनके सेवाभाव तथा कार्यकुशलताके लिए बधाई देंगे।